दैनिक जागरण
सफलता कोई गंतव्य नहीं, अपितु निरंतर चलने वाली यात्रा है

विकास की सप्तधारा

लाल किले की प्राचीर से लगातार 13वीं बार राष्ट्रीय ध्वज फहराने के बाद प्रधानमंत्री मोदी ने जो कुछ कहा और जिन नए कार्यक्रमों की घोषणा की, उनसे देश को विकसित बनाने की उनकी प्रतिबद्धता ही प्रकट होती है। इस अवसर पर उन्होंने जिस तरह देश के समक्ष उपस्थित चुनौतियों का भी उल्लेख किया, उससे यह पता चलता है कि समस्याओं का समाधान उनकी प्राथमिकता में है। ऐसा होना भी चाहिए, लेकिन यही प्राथमिकता केंद्रीय सत्ता के प्रशासन की भी होनी चाहिए। इतना ही नहीं, इस मामले में राज्य सरकारों को भी केंद्र सरकार के साथ सहयोग करना होगा। यह इसलिए आवश्यक है, क्योंकि केंद्र सरकार की अनेक योजनाओं के क्रियान्वयन में राज्य सरकारों और उनके प्रशासन की महती भूमिका होती है। देश को विकसित बनाने का लक्ष्य तब पूरा होगा, जब केंद्र और राज्य एक टीम की तरह काम करेंगे। अभी कई बार इसका अभाव दिखता है। देश को विकसित बनाने के लिए केवल यह आवश्यक नहीं कि समस्याओं की सही तरह पहचान हो। आवश्यक यह भी है कि उनके समुचित समाधान के तौर-तरीके विकसित किए जाएं। ऐसा तब होगा, जब सरकारी योजनाओं के अनुपालन में विश्वस्तरीय मानकों और गुणवत्ता को अपनाया जाएगा। अभी ऐसा नहीं हो पा रहा है और इसीलिए कई महत्वाकांक्षी योजनाएं अपेक्षित नतीजे नहीं दे पा रही हैं।

इस बार लाल किले की प्राचीर से प्रधानमंत्री ने जो घोषणाएं कीं, उनमें प्रमुख हैं एक करोड़ युवाओं को एआइ का प्रशिक्षण देना और छात्रों को आनलाइन कोचिंग की सुविधा उपलब्ध कराना। ये दोनों पहल सराहनीय और समय की मांग के अनुरूप हैं, लेकिन क्या सरकारी कोचिंग निजी कोचिंग संस्थानों के दबदबे को कम कर पाएगी? प्रश्न यह भी है कि कहीं युवाओं को दिए जाने वाले एआइ प्रशिक्षण कार्यक्रम का हश्र कौशल विकास जैसा तो नहीं होगा? लाल किले से प्रधानमंत्री ने अगली पीढ़ी के सुधारों को लेकर शक्ति की सप्तधारा का जो उल्लेख किया, वह एक तरह से विकसित भारत के लक्ष्य को पाने का खाका है। इसका उद्देश्य देश की क्षमता का पूरा उपयोग करना है। सप्तधारा की पहली शक्ति मैन्यूफैक्चरिंग क्षमता, दूसरी शक्ति कृषि एवं खाद्य उत्पादन, तीसरी शक्ति प्रौद्योगिकी एवं नवाचार और चौथी शक्ति गति शक्ति है। इसका आशय कनेक्टिविटी से है। सप्तधारा की पांचवीं शक्ति रक्षा शक्ति, छठी शक्ति ग्रीन इकोनमी-ब्लू इकोनमी और सातवीं शक्ति देश की साफ्ट पावर है। इन सभी शक्तियों को बल तब मिलेगा, जब उनके इस्तेमाल में समाज के हर हिस्से की हिस्सेदारी होगी। इससे ही असमान विकास की समस्या का निदान होगा। अच्छा होगा कि इन शक्तियों का उपयोग नैतिक बल के साथ किया जाना सुनिश्चित किया जाए।

परियोजनाओं की सुरक्षा

उत्तराखंड में विष्णुगाड-पीपलकोटी जल विद्युत परियोजना की निर्माणाधीन टेल रेस सुरंग में हुए भूस्खलन ने अब आगे के निर्माण और सुरंग की सुरक्षा को लेकर चुनौतियां बढ़ा दी हैं। यह सवाल भी खड़ा हो रहा है कि सुरंग के अंदर प्रभावित हिस्से की चट्टान कितनी मजबूत है और आगे निर्माण के दौरान दोबारा ऐसी घटना का खतरा तो नहीं। टेल रेस सुरंग परियोजना का अहम हिस्सा होती है। टरबाइन में बिजली बनाने के लिए जिस पानी का इस्तेमाल होता है, वह फिर इसी सुरंग से वापस नदी में छोड़ा जाता है। अभी परियोजना निर्माणाधीन है और सुरंग में पानी का प्रवाह शुरू नहीं हुआ है, इसलिए हादसे का बिजली उत्पादन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा, लेकिन सुरंग के सुरक्षित निर्माण और भविष्य के लिए मजबूत बनाने की चिंता तो अपनी जगह है ही। अन्य निर्माणाधीन परियोजनाओं के मामले में भी गंभीरता से विचार किए जाने की जरूरत है। उत्तराखंड के पहाड़ भूगर्भीय दृष्टि से नए और कच्चे हैं। इनकी संरचना में मजबूत ग्रेनाइट चट्टानों के बजाय ढीली मिट्टी, गाद और बलुई-दोमट परतें शामिल हैं, जो भारी वर्षा, भूकंप और अनियंत्रित निर्माण कार्यों के कारण तेजी से खिसकती हैं। सो, यहां कोई भी भूमिगत निर्माण पूरी तरह वैज्ञानिक मानकों पर जांच-परखकर ही होना चाहिए। उत्तराखंड को ऊर्जा, रोजगार और आर्थिक गतिविधियां बढ़ाने के लिए विकास परियोजनाओं की सख्त जरूरत है, पर इसके लिए हिमालय की वहन क्षमता, स्थानीय परिस्थितियों और आपदा जोखिम को नजरअंदाज करना भूल होगी।

> विष्णुगाड परियोजना की सुरंग में हुए हादसे ने सुरक्षा को लेकर चुनौतियां बढ़ा दी हैं

संसद ठप करने की राजनीति

संजय गुप्त

राजनीतिक दलों को इस पर विचार करना होगा कि संसद में निरर्थक चर्चा और हंगामे से उन्हें और समाज को क्या हासिल हो रहा है?

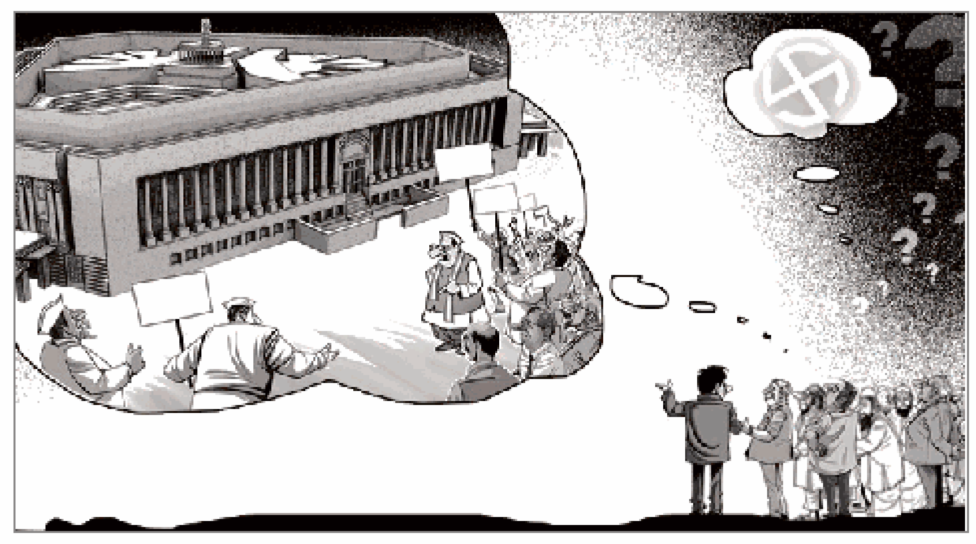

अवधेश राजपूत

संसद का मानसून सत्र अत्यधिक शोर-शराबे, हंगामे और आरोप-प्रत्यारोप की भेंट चढ़ गया। किसी न किसी मुद्दे को तूल देकर राहुल गांधी के नेतृत्व में कांग्रेस और अन्य विपक्षी दलों ने संसद नहीं चलने दी। पहले इसके लिए मुद्दा बनाया गया नीट पेपर लीक मामले को। इस मामले को लेकर काकरोच जनता पार्टी यानी सीजेपी ने जंतर-मंतर पर प्रदर्शन के साथ संसद मार्च का आयोजन किया। इस मार्च को संसद जाने से रोकने के लिए पुलिस ने जो बल प्रयोग किया, उसे विपक्ष ने संसद ठप करने का जरिया बना लिया। वैसे तो संसद पहले भी बाधित होती रही है और उसके सत्र अनुत्पादक होते रहे हैं, लेकिन इस बार उसका प्रदर्शन कहीं अधिक निराशाजनक रहा। हालांकि शोर-शराबे के बीच सरकार दस से अधिक विधेयक पारित कराने में सफल रही, लेकिन इनमें से केवल पेपर लीक कानून में संशोधन वाले विधेयक पर चर्चा हो सकी। यह चर्चा भी इस विधेयक के प्रविधानों पर केंद्रित नहीं रही। कहना कठिन है कि चर्चा के अभाव में जो विधेयक पारित हुए और कानून बनने जा रहे हैं, वे कसौटी पर खरे उतरेंगे। इसकी अनदेखी न की जाए कि पेपर लीक कानून में 2024 में भी संशोधन किए गए थे। यदि दो वर्ष बाद ही उसमें फिर से संशोधन करने की आवश्यकता पड़ी तो इसका अर्थ है कि पहले के संशोधन पर्याप्त नहीं थे।

राहुल गांधी एवं अन्य विपक्षी नेता संसद के न चल पाने और कई विधेयकों के पेश न हो पाने को अपनी जीत मान रहे हैं, पर वे यह भूल रहे हैं कि जनता की याददाश्त कमजोर होती है और वह संसद के भीतर-बाहर होने वाले हंगामे को तो बिल्कुल भी याद नहीं रखती। जनता यह अच्छी तरह समझ रही है कि संसद के इस सत्र में उसके हित से जुड़े मुद्दों पर कहीं कोई चर्चा नहीं हुई। उसे यह भी पता नहीं कि जो विधेयक पारित हुए उनमें क्या था और उनसे उसे क्या लाभ मिलने वाला है? अब यदि संसद में जनहित के मुद्दों पर चर्चा ही नहीं होगी तो जनता को निराशा ही हाथ लगेगी।

संसद में चर्चा के गिरते स्तर से आम जनता और विशेष रूप से जेन-जी पीढ़ी के बीच कुछ ऐसा संदेश जा रहा है कि संसद को न चलने देना विपक्ष का एक आवश्यक लोकतांत्रिक कार्य है और यह उसे करना ही चाहिए। यह एक गलत धारणा और संसदीय लोकतंत्र की मर्यादा के खिलाफ है। यदि संसद में सार्थक चर्चा नहीं होगी तो वह अपनी महत्ता खो देगी। आज यह आवश्यक है कि संसद को सही तरीके से संचालित करने के नियम नए सिरे से बनाए जाएं। यदि ऐसा नहीं किया जाता तो राहुल गांधी सरीखे उन नेताओं को बल मिलेगा, जो यह समझ बैठे हैं कि कठोर भाषा बोलने और अनर्गल आरोप लगाने से वे राजनीतिक रूप से मजबूत हो रहे हैं। वास्तव में यह भ्रांति ही राहुल गांधी की राजनीतिक असफलता का कारण है। वे इसे समझने के बजाय और अधिक गैर-जिम्मेदाराना राजनीति का परिचय दे रहे हैं। पिछले दिनों उन्होंने प्रधानमंत्री मोदी और गृहमंत्री अमित शाह के खिलाफ अशालीन भाषा का उपयोग किया। उन्हें पता होना चाहिए कि उनके ऐसे आचरण से उन्हें ही नुकसान होता है और उनकी अशालीन भाषा का इस्तेमाल भाजपा अपने पक्ष में करने मे सफल रहती है।

कांग्रेस और अन्य विपक्षी दल एक अरसे से संसद में हंगामा करने की रणनीति पर ही चल रहे हैं। अब स्थिति यह है कि यदि सरकार किसी मुद्दे पर चर्चा के लिए तैयार हो जाती है तो विपक्ष उससे कन्नी काट लेता है या कोई और मांग लेकर सामने आ जाता है। इसके नतीजे में आरोप-प्रत्यारोप की राजनीति शुरू हो जाती है। राजनीतिक दलों को इस पर विचार करना होगा कि निरर्थक चर्चा से खुद उन्हें और समाज को क्या हासिल हो रहा है? संसद तो होती ही इसलिए है कि वहां पर कानून बनाने का काम सही तरीके से हो और राष्ट्रीय महत्व के मुद्दों पर देश को दिशा देने वाली चर्चा हो, पर अब ऐसा कठिनाई से ही होता है। मानसून सत्र में विपक्ष किस तरह संसद को बाधित करने पर आमादा था, इसका पता इससे चलता है कि राहुल गांधी सीजेपी के संसद मार्च में पुलिस के बल प्रयोग पर गृहमंत्री अमित शाह के वक्तव्य की मांग पर अड़ गए और जब वे इसके लिए तैयार हो गए तो उन्होंने यह कहकर इन्कार कर दिया कि उन्हें उनका भाषण नहीं सुनना। समझना कठिन है कि वे एवं अन्य विपक्षी नेता चाहते क्या थे? उन्हें यह पता होना चाहिए कि किसी मामले पर निरर्थक चर्चा से स्थितियां बदलती नहीं-न तो कोई कानून बनता है और न ही आम जनता की समस्याओं का समाधान होता है। संसद में चर्चा के नाम पर एक-दूसरे पर सतही आरोप-प्रत्यारोप से लोकतंत्र कमजोर ही हो रहा है। अब संसद में किसी विधेयक पर मुश्किल से ही ढंग की चर्चा होती है। संसद में तार्किक ढंग से बात कहने वाले सांसद भी कम होते जा रहे हैं। जो हैं, वे हंगामा करने वाले सांसदों के आगे असहाय से दिखते हैं। समस्या यह भी है कि अब औसत सांसदों को यह लगने लगा है कि धीर-गंभीर चर्चा से उन्हें चुनाव जीतने में कोई सहायता नहीं मिलने वाली। चूंकि हंगामा करके वे सुर्खियों में आ जाते हैं, इसलिए वे ऐसा करना ही पसंद करते हैं।

इससे संतुष्ट नहीं हुआ जा सकता कि कई विधेयकों पर विचार-विमर्श के लिए उन्हें संसदीय समितियों के पास भेज दिया जाता है, जैसे विदेशी दान विनियमन अधिनियम यानी एफसीआरए विधेयक को भेजा गया, क्योंकि बहुत कम यह देखने को मिलता है कि संसदीय समितियों में ढंग से कोई चर्चा हुई और उसके नतीजे में बेहतर कानून बना। यह एक तथ्य है कि एफसीआरए संसदीय समिति को इसलिए भेजना पड़ा, क्योंकि विपक्ष उस पर बहस करने के बजाय उसे वापस लेने की जिद कर रहा था।

देश ने गत दिवस अपना 80वां स्वतंत्रता दिवस मनाया, लेकिन हम इसकी अनदेखी नहीं कर सकते कि संसद में लोकतंत्र की बुनियाद मजबूत होती नहीं दिख रही है। इसके बजाय वह कमजोर होती दिख रही है। सच यह है कि इसे जानबूझकर कमजोर किया जा रहा है। संसद में देश की समस्याओं पर सार्थक ढंग से चर्चा करके समाज को दिशा देने अथवा कानून बनाने का काम प्राथमिकता से बाहर होना संसदीय लोकतंत्र के लिए गंभीर चिंता का कारण बनना चाहिए-सत्तापक्ष और विपक्ष के साथ-साथ समाज के लिए भी।

response@jagran.com

मिलावट के स्वर्णकाल का आगमन

हास्य-व्यंग्य

पीयूष पांडे

मिलावटखोरी के साथ ही लोगों की भूमिका में ऐसी अदला-बदली चल रही है कि पहचानना मुश्किल हो गया कि कौन क्या है

एक जमाना था जब चीजें अपनी पहचान से जानी जाती थीं। नेता शुद्ध टंच नेता होते थे। गुंडे पूरी ठसक से गुंडागर्दी करते थे। प्रेमी प्रेम करते थे और पति-पत्नी कम-से-कम शादी के शुरुआती कुछ वर्षों तक पति-पत्नी ही रहते थे। दूध सिर्फ दूध होता था, घी सिर्फ घी, पेट्रोल सिर्फ पेट्रोल और हवा सिर्फ हवा। नकली माल भी इतना ईमानदार था कि उस पर साफ लिखा रहता था-'डुप्लीकेट'। मगर आज मिलावट ऐसी महामारी बन गई कि हमारे राष्ट्रीय चरित्र का अनिवार्य घटक बन चुकी है। अब तो असली चीज मिलने पर शक होता है और नकली देखकर तसल्ली मिलती है कि चलो दुनिया अभी सामान्य चल रही है।

मिलावट का आलम कुछ ऐसा हो चला है कि आज नेता कारोबारी हैं और कारोबारी नीति बनाने लगे हैं। गुंडे चुनाव लड़ रहे हैं और नेता सुरक्षा घेरे में गुंडों जैसी भाषा बोल रहे हैं। अभिनेता नेतागीरी कर रहे तो नेता अभिनय में हाथ आजमा रहे। खिलाड़ी विज्ञापनों में व्यस्त हैं और कभी-कभार खेलने का समय भी निकाल लेते हैं। कुछ स्टैंडअप कामेडियन गालीबाजी को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता बता रहे हैं और कुछ प्रवक्ता झूठ को राष्ट्रहित। जिन्होंने एक समय राजनीति को कोसते हुए राजनीति में न आने की कसम खाई थी, वे आज राजनीति के ऐसे महारथी बन गए हैं कि खांटी नेताओं को भी उनसे सीखना पड़ रहा।

भूमिकाओं की ऐसी अदला-बदली चल रही है कि पहचानना मुश्किल हो गया है कि कौन क्या है? अपराधी छात्र बनकर आंदोलन में घुस रहे तो छात्र इंटरनेट मीडिया इन्फ्लुएंसर बनने की तैयारी में रीलें बना रहे हैं। साधु उद्योगपति हैं, उद्योगपति आध्यात्मिक गुरु हैं और आध्यात्मिक गुरु शेयर बाजार सलाहकार। डाक्टर यूट्यूबर हैं और यूट्यूबर डाक्टर। मिलावट मिशन में सरकारें भी पीछे नहीं हैं। सरकारी योजनाओं में भ्रष्टाचार की मिलावट तो वर्षों से होती रही है। अब पेट्रोल में एथनाल मिल गया है। पीएनजी में बायोगैस मिलाने की तैयारी है। भाषा तक शुद्ध न बची। किसी भी देसी भाषा में विदेशी भाषा के 'यू नो', 'बेसिकली', 'आई मीन', 'एक्चुअली', 'लिटरली', 'ब्रो' और 'यो-यो' की मिलावट किए बिना बातचीत अधूरी मानी जाने लगी है।

भक्ति में भी मनोरंजन की मिलावट के चलते माता के जागरण में अगर लगातार दो घंटे बिना फिल्मी धुन के भजन बज जाएं तो भक्तों को संदेह होने लगता है कि आयोजक कहीं कंजूस तो नहीं। कथा में अगर हास्य, चुटकुले और राजनीतिक तंज न हों तो श्रोता मोबाइल निकाल लेते हैं। मिलावट को अब नियति मान लिया गया है। जैसे दिल्ली वालों को कई दिन लगातार शुद्ध हवा मिल जाए तो शायद उन्हें बेचैनी होने लगे। करोड़ों लोग अगर लगातार शुद्ध खाद्य सामग्री का सेवन कर लें तो शायद उनका हाजमा बिगड़ जाए।

राजनीति में तो मिलावट का अलग ही विज्ञान विकसित हो चुका है। टिकट न मिलने पर राजनेताओं की विचारधारा में मिलावट इतनी त्वरित गति से होती है कि तेल-गेहूं-दूध में मिलावट करने वाले घनघोर मिलावटबाज भी हैरान रह जाते हैं। रिश्तों में भी भारी मिलावट है। लड़का जिस लड़की पर जान देने की बात कहते हुए उसे लुभाता है, वही उसके दूर होने पर जान लेने पर आमादा हो जाता है। जिधर देखिए, उधर मिलावट। यह मिलावट का स्वर्णकाल है। इस काल में बढ़ती मिलावट से हाल बेहाल होते जा रहे हैं, जिसमें राहत के आसार भी नहीं दिखते।

response@jagran.com

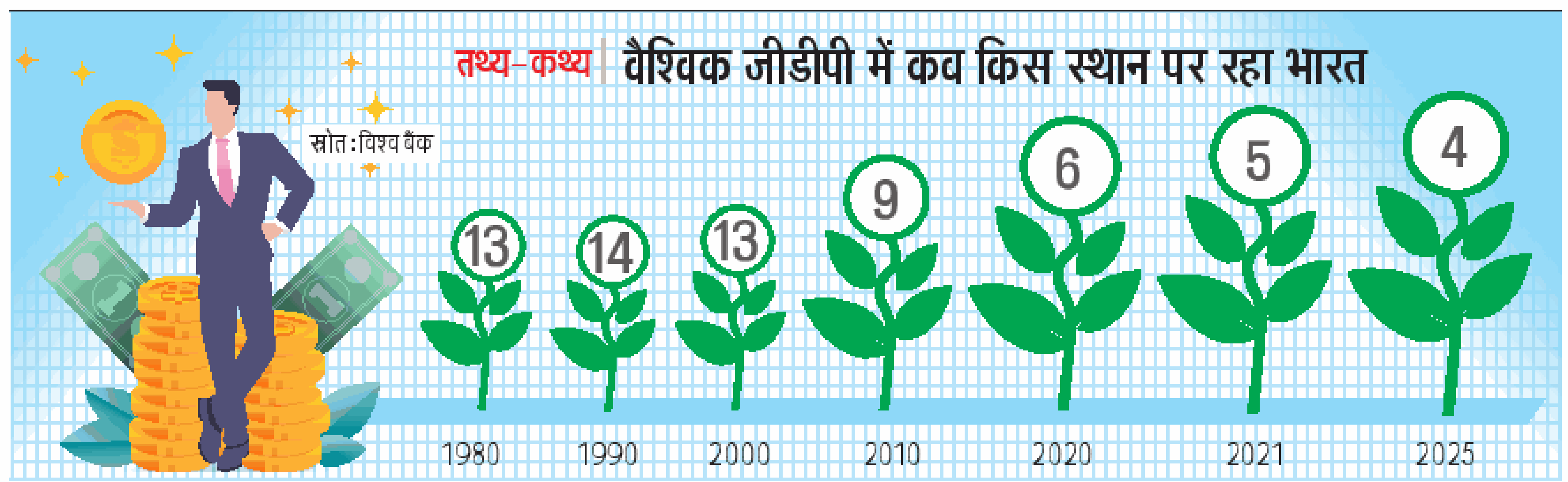

ऊर्जा

भगवत्-कृपा

विश्व का कोई भी महानतम कार्य अथवा कोई भी श्रेष्ठतम उपलब्धि भगवत्-कृपा के बिना संभव नहीं। जो कुछ भी आपको मिला है-पद अथवा प्रतिष्ठा-वह आपकी योग्यता, विलक्षणता एवं विशेषज्ञता से अधिक भगवत्-कृपा का प्रसाद है। भगवत्-कृपा न हो तो आपको मिला हुआ पद, यश एवं सत्ता पलक झपकते ही हाथ से निकल जाएगी।

मनुष्य अपनी हार और असफलता को ईश्वर, प्रारब्ध, नियति अथवा अवसर के सिर मढ़ देता है, जबकि हर उपलब्धि एवं उत्कृष्टता को अपनी निष्ठा, ईमानदारी, समर्पण और विशेषज्ञता से जोड़ना नहीं भूलता। सुखों के आगमन पर बुरे दिनों में की गई प्रतिज्ञा को अनदेखा कर वह अहंकार के आकाश में विचरण करने लगता है, जो उसकी मानवीय दुर्बलता है। खोखला अहंकार एवं मद मनुष्य को भगवत्-कृपा से तत्काल वंचित करता है। विनम्रता, पवित्रता एवं दुख से ईश्वरीय सत्ता का सामीप्य मिलता है। दुख पीतांबरी हैं और देह तांबे के वर्षों से मैले-कुचैले पात्र जैसी है। दुख मनुष्य को जितना मांजते हैं, देह के पात्र उतने ही चमकते चले जाते हैं। सुख हरी-भरी रेशमी कायी की तरह हैं। दूर से आकर्षक एवं लुभावनी, लेकिन निकट जाने पर ज्ञात होता है कि वे तन-मन रूपी उस दिव्य तालाब के जल की पवित्रता और शुद्धता को कलुषित करने वाले हैं।

अद्भुत एवं रहस्यमय है यह ईश्वरीय अनुकंपा का चमत्कारी लोक। सबके रोग बता देने वाला विशेषज्ञ स्वयं नहीं जानता कि कब उसकी नाड़ियां बंद होकर उसे निष्प्राण कर देंगी। स्वयं को सब कुछ समझने वाला व्यक्ति भी एक दिन फ्यूज बल्ब की तरह अनुपयोगी, निरर्थक और निष्प्रयोजन पड़ा रह जाता है। भगवत्-कृपा एक करोड़ की संख्या के आगे का एक है और समग्र सांसारिक उपलब्धियां उसके पीछे के शून्यों की तरह हैं। एक है तो सार्थक, अन्यथा पूर्णतः निरर्थक।

डा. दिनेश चमोला 'शैलेश'

खाड़ी में फंसे जहाजों से पर्यावरण खतरे में

मुकुल व्यास

> **पर्शियन गल्फ में खड़े हजारों जहाजों के निचले हिस्से समुद्री जीवों के लिए तैरती हुई नर्सरी में बदल रहे हैं**

पर्शियन गल्फ में फंसे हजारों जहाज दुनिया भर में पर्यावरण के लिए खतरा बन रहे हैं। कई महीनों से ये जहाज गल्फ में बिना किसी हरकत के खड़े हैं। इस लंबे इंतजार के दौरान उनके निचले हिस्से चुपचाप समुद्री जीवों के लिए तैरती हुई नर्सरी में बदल रहे हैं। विज्ञानी अब चेतावनी दे रहे हैं कि जब यह बेड़ा आखिरकार फिर से चलना शुरू करेगा तो यह तेजी से फैलने वाली इनवेसिव प्रजातियों को दुनिया के दूसरे स्थानों पर पहुंचा सकता है। यह इनवेसिव प्रजातियों के बाहर फैलने की बहुत बड़ी घटना में हो सकती है। यह चेतावनी 24 समुद्री विज्ञानियों की एक अंतरराष्ट्रीय टीम ने दी है। जब 28 फरवरी, 2026 को होर्मुज जल मार्ग बंद हुआ तो पर्शियन गल्फ में अनुमानित 1,500 कार्गो जहाज फंस गए और सैकड़ों अन्य पास की ओमान की खाड़ी में खड़े रहे।

आमतौर पर कार्गो जहाज बंदरगाह पर एक या दो दिन बिताते हैं और आगे बढ़ जाते हैं। इतनी लंबी अवधि बहुत मायने रखती है, क्योंकि समुद्री जीवन भी इंतजार में खामोश नहीं बैठा रहता। शैवाल (एल्गी), बार्नेकल (क्रेब जैसा जीव), मसल्स (सीपियां) और अन्य जीव पानी के नीचे की जहाज की सतहों से चिपक जाते हैं। यह जैविक जमाव 'बायोफाउलिंग' कहलाता है। पानी में डूबे रहने के लगभग दस दिनों के बाद समुद्री जीव तेजी से बढ़ने लगते हैं। आमतौर पर जहाज इतने लंबे तक स्थिर नहीं रहते, इसलिए बायोफाउलिंग को पनपने का मौका नहीं मिलता। महीनों तक बिना किसी हरकत के खड़े रहने से सब कुछ बदल जाता है, क्योंकि जहाज के निचले हिस्से को साफ रखने वाली सुरक्षात्मक परतें लंबे समय तक इस्तेमाल न होने के कारण खराब होने लगती हैं।

समुद्री पानी की विषम परिस्थितियां साथ यात्रा करने वाले जीवों को जन्म देती हैं। खाड़ी की स्थिति पहले से ही खराब है। यह उथली है और ज्यादातर चारों तरफ से घिरी हुई है। यहां का माहौल बहुत कठोर है। गर्मियों में सतह का तापमान लगभग 38 डिग्री सेल्सियस तक पहुंच जाता है और खारेपन का स्तर नियमित रूप से 40 प्रैक्टिकल सैलिनिटी यूनिट से ऊपर चला जाता है। यहां समुद्री हीटवेव भी ज्यादा तीव्र होती जा रही है। इतनी चरम स्थितियां केवल सबसे मजबूत प्रजातियों को ही जीवित रहने देती हैं। ये जीव ही लंबी समुद्री यात्रा झेलने, लंबे समय तक एक जगह रुके रहने और किसी नए बंदरगाह पर सफलतापूर्वक बसने की सबसे ज्यादा क्षमता रखते हैं। प्रजनन से खतरा और बढ़ जाता है। कई बायोफाउलिंग प्रजातियां गर्म पानी में तेजी से पनपती हैं। बायोफाउलिंग के जरिये ऐसे परजीवी और पैथोजन भी फैल सकते हैं, जो मूल प्रजातियों में बीमारी फैला सकते हैं। बाहर से आकर फैलने वाली प्रजातियों का दुनिया भर के तटों पर गहरा पर्यावरणीय एवं आर्थिक असर पड़ता है।

(लेखक विज्ञान के जानकार हैं)

राजरंग

सांसदों का दर्द

मानसून सत्र के पूरी तरह धुल जाने का दर्द सत्र समाप्त होने के बाद लोकसभा के कई सदस्यों का छलक पड़ा। वैसे टकराव तथा हंगामा तो राज्यसभा में भी होता रहा, पर विपक्ष के बहिर्गमन के कारण वहां विधेयकों पर कुछ हद तक चर्चा हुई। सत्ता पक्ष के साथ-साथ डीएमके और बीजेडी के सांसदों को भी विधेयकों पर अपने विचार रखने का मौका मिला, लेकिन लोकसभा में पेपर लीक वाले विधेयक को छोड़कर सभी विधेयक बिना चर्चा के ही पारित हुए और कार्यवाही स्थगित होने तक हंगामा चलता रहा। संसद के गलियारों में लगे एक टीवी पर राज्यसभा की कार्यवाही का लाइव प्रसारण देखते हुए केरल के एक प्रमुख सांसद एनके प्रेमचंद्रन के मुंह से निकल गया-'देखो, ये क्या हो रहा है! हमें बोलने नहीं दिया जा रहा है, लेकिन राज्यसभा में सांसद बोल रहे हैं।' प्रेमचंद्रन पूरी तैयारी के साथ सदन के भीतर बोलने वाले सांसदों में हैं। कुछ ऐसी ही स्थिति कांग्रेस के बोलने वाले सांसदों मनीष तिवारी और शशि थरूर जैसे नेताओं की भी रही, लेकिन वे अपनी पीड़ा खुलकर बयान नहीं कर पाए। अब संसद के अगले सत्र की प्रतीक्षा ही करनी होगी।

सीएम पर काला जादू

तेलंगाना में विधानसभा चुनाव अभी दूर हैं, लेकिन राजनीतिक दलों की तैयारियां चुनावी रंग पकड़ने लगी हैं। सियासत के साथ तंत्र-मंत्र और पूजा-पाठ का सहारा भी लिया जा रहा है। भारत राष्ट्र समिति (बीआरएस) के कुछ बड़े नेताओं ने कर्नाटक और तमिलनाडु जाकर मंदिरों में पूजा-अर्चना की तो कांग्रेस ने आरोप लगाया कि उसकी सरकार को बदनाम करने के लिए काला जादू का सहारा लिया जा रहा है। तेलंगाना के मुख्यमंत्री रेवंत रेड्डी ने हैदराबाद की एक जनसभा में दावा किया कि उनके विरोधी चाहते हैं कि राज्य में सूखा पड़े, ताकि सरकार की छवि खराब हो। इसके लिए तांत्रिक अनुष्ठान कराए जा रहे हैं। रेवंत ने यह भी कहा कि ऐसी तमाम कोशिशों के बावजूद भगवान उनके साथ हैं। रेवंत के इस आरोप से पहले कांग्रेस के कुछ नेताओं ने बीआरएस के कार्यकारी अध्यक्ष एवं पूर्व मंत्री टी. हरीश राव पर आरोप लगाया था कि उन्होंने रेवंत सरकार की मुश्किलें बढ़ाने के लिए कर्नाटक जाकर 'अघोरा पूजा' कराई है। यह तांत्रिक अनुष्ठान है, जिसे विरोधियों को नुकसान पहुंचाने की मंशा से कराया जाता है। हालांकि हरीश राव ने इन आरोपों को खारिज करते हुए कांग्रेस नेताओं को कानूनी नोटिस भी भेजा है। फिर भी तेलंगाना की सियासत में काला जादू अब सियासी बहसों का हिस्सा बन गया है।

वंदे मातरम् की क्लास

वंदे मातरम् गायन संबंधी विधेयक संसद से पारित होने के बाद सिर्फ नेतागण ही नहीं, मंत्रालयों के अधिकारी-कर्मचारी भी स्वतंत्रता दिवस से पहले पूरा राष्ट्रगीत याद करने में जुट गए थे। कई मंत्रालयों में तो इसके लिए बाकायदा क्लास रूम जैसे इंतजाम किए गए। तमाम अधिकारी भी इन कक्षाओं में वंदे मातरम् गाने की प्रैक्टिस करते दिखे, ताकि स्वतंत्रता दिवस के मौके पर उनसे कोई चूक न हो जाए या फिर उन्हें सिर्फ चुपचाप खड़ा न रहना पड़े। कुछ अधिकारी तो दबी जुबान से यह भी कहते सुने गए कि एक बार फिर उन्हें स्कूल की याद आ गई, जब कक्षा में उन्हें कई बार संस्कृत के दोहे याद करने के लिए मशक्कत करनी पड़ती थी।

चेन्नई में चाय पर चर्चा

पिछले दिनों लोकसभा स्पीकर ने संसद परिसर में अपने कक्ष में चाय पर चर्चा के लिए सभी सांसदों को आमंत्रित किया। सत्ता पक्ष के सभी सांसद इस चर्चा में शामिल हुए, पर आइएनडीआइए की ओर से कोई नहीं पहुंचा। दिलचस्प यह रहा कि द्रमुक सांसद कनिमोझी वहां पहुंचीं, अब इसे लेकर तमिलनाडु में चर्चा का दौर शुरू हो गया है कि आने वाले दिनों में डीएमके किस ओर रहेगी-आइएनडीआइए में या उससे बाहर? दिलचस्प बात यह है कि चाय दिल्ली में पी गई, लेकिन चाय पर चर्चा चेन्नई में हो रही है। चाय की गर्माहट दिल्ली से चेन्नई तक पहुंच रही है।

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त, पूर्व प्रधान संपादक-स्व. नरेन्द्र मोहन, नॉन एग्जीक्यूटिव चेयरमैन-महेन्द्र मोहन गुप्त, प्रधान संपादक-संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए: नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग, रफी मार्ग, नई दिल्ली-110001 से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा-201309 से मुद्रित, संपादक (राष्ट्रीय संस्करण)-विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*
दूरभाष: नई दिल्ली कार्यालय : 011-43166300, नोएडा कार्यालय : 0120-4615800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No. DELHIN/2017/74721 * इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई/रेल शुल्क ₹-2 अतिरिक्त।

9.5 प्रतिशत यूजर्स भारत में हैं आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल का उपयोग करने वाले, समूचे विश्व की तुलना में। भारत इस मामले में विश्व का दूसरा सबसे बड़ा बाजार है।

आजकल

दिमागी नक्सलियों से निपटने की चुनौती

स्वतंत्रता दिवस के अवसर पर प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने कल राष्ट्र को संबोधित किया। इस अवसर पर उन्होंने कहा कि नक्सलवाद और माओवाद देश में भले ही समापन की ओर है, परंतु एक चिंता बनी हुई है कि दिमागी नक्सल अब भी कायम हैं। भले ही हथियार वाले नक्सलियों का सफाया हो गया, परंतु दिमागी नक्सल के कायम रहने से इनके समाज में फिर से सिर उठाने की आशंका बनी रहेगी, लिहाजा ऐसे उपाय किए जाने आज जरूरी हो गए हैं, ताकि इस तरह के लोगों की पहचान करते हुए समाज में उन्हें अलग-थलग किया जा सके

अनंत विजय
anant@nda.jagran.com

लाल किले से देश को संबोधित करते पीएम नरेन्द्र मोदी। इंटरनेट मीडिया

स्वाधीनता दिवस के अवसर पर लाल किला की प्राचीर से प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने एक बेहद महत्वपूर्ण बात कही, जिसके निहितार्थ बहुत गहरे हैं। प्रधानमंत्री मोदी ने कहा कि नक्सलवाद, माओवाद ने लाखों युवाओं के भविष्य को तबाह कर दिया। नक्सलवाद ने चार-पांच दशक तक हिंदुस्तान के बहुत बड़े हिस्से को, बहुत बड़ी आबादी को दबोच कर रखा। बंदूक की नोक पर दबोच कर रखा था। संविधान की धज्जियां उड़ा दी थीं। देश के सामान्य नागरिकों की रक्षा में सुरक्षा बलों के 3,500 से ज्यादा जवान बलिदान हुए। प्रधानमंत्री मोदी ने आगे कहा कि उनको खुशी है कि नक्सलवादी-माओवादी हिंसा को आखिरी सांस लेने की ताकत भी नहीं बची। जहां पर कभी नक्सलियों की गोलियां चलती थीं, जहां कभी धरती रक्त रंजित रहा करती थी, आज उन्हीं नक्सल क्षेत्रों में विकास, विश्वास और प्रयास का तिरंगा लहरा रहा है। यहां तक तो प्रधानमंत्री अपनी सरकार की सफलता के बारे में बात कर रहे थे, लेकिन इसके बाद प्रधानमंत्री ने जो कहा उस पर वृहत्तर परिप्रेक्ष्य में विचार करने की आवश्यकता है। वस्तुतः उन्होंने कहा कि हथियारों के नक्सल तो गए, लेकिन दिमागी नक्सल बचे हैं। दिमागी नक्सल मौके की तलाश में हैं। वो हिंसा और अराजकता के रास्ते खोज रहे हैं। समाज को गलत राह पर घसीटने के लिए भांति-भांति के दांव चल रहे हैं। इन दिमागी नक्सलियों को पहचानना होगा। इन दिमागी नक्सलियों को आइसोलेट करना होगा और राष्ट्र को विकसित राष्ट्र बनाने की मुख्यधारा की ओर देश की युवा पीढ़ी को जोड़ना होगा।

प्रधानमंत्री की उपरोक्त बातों के आलोक में हम पिछले तीन-चार महीने में घटी घटनाओं पर नजर डालते हैं। सबसे पहले अयोध्याजी के श्रीराम मंदिर में चढ़ावा चोरी के प्रकरण को देखते हैं। यह बेहद दुर्भाग्यपूर्ण और निंदनीय अपराध था। इसमें लिप्त लोगों की गिरफ्तारी हुई। सभी जेल में हैं। विशेष जांच दल इसकी पड़ताल में जुटा है। सुप्रीम कोर्ट भी इस केस पर नजर रखे हुए है। यह आपराधिक घटना कोई साधारण अपराध नहीं है, इस कारण अपराधियों पर कठोर कार्रवाई होनी चाहिए और उनको कठोर दंड भी मिलना चाहिए। अब इसका दूसरा हिस्सा देखते हैं जो इस अपराध से अधिक खतरनाक है। चढ़ावा चोरी की घटना को सनातन से जोड़ कर सनातन को कठघरे में खड़ा करने का प्रयास किया जा रहा है। संसद परिसर में एक निर्दलीय सांसद ने भगवा पहनकर सनातन के प्रतीकों के साथ सनातन को बदनाम करने के लिए एक प्रहसन किया। इस प्रहसन में कांग्रेस और समाजवादी पार्टी के सांसदों ने पात्र के तौर पर हिस्सा लिया। हिंदुओं के आराध्य प्रभु श्रीराम की तस्वीर को जिस तरह से जमीन पर गिराकर अपमान किया गया, उसे भी याद रखा जाना चाहिए। सनातन पर आक्रमण करके भारत के आत्मा पर चोट पहुंचाने का प्रयास किया गया। भारत की सभ्यता और संस्कृति पर चोट की गई। भारत विचार पर कुठाराघात किया गया। सनातन को कठघरे में खड़े करने का विचार दिमागी नक्सलियों का हो सकता है। उन्होंने इसकी रूपरेखा तय की होगी और कुछ दलों को चुनावी लाभ का स्वप्न दिखाया होगा। दिमागी नक्सली जब किसी को अपने कब्जे में लेते हैं तो सबसे पहले उसके दिमाग पर कब्जा करते हैं। फिर उसको लाभ होने या दिलाने का आश्वासन देकर अपने जाल में फांसते हैं। इस बात की चिंता किए बगैर कि उसके इस कदम से देश कितना और किस हद तक प्रभावित होगा। चढ़ावा चोरी प्रकरण में पूरे देश ने दिमागी नक्सलियों की इन करतूतों को देखा कि कैसे एक आपराधिक घटना को सनातन से जोड़कर उसका राजनीतिक लाभ लेने का प्रयास किया गया।

दूसरा उदाहरण दिल्ली के जंतर-मंतर पर हुए युवाओं के प्रदर्शन के बाद की घटनाओं के विश्लेषण से निकलता है। अब यह बात लगभग स्पष्ट हो चुकी है कि जंतर-मंतर के आंदोलन का जिन लोगों ने नेतृत्व किया, उनका सिरा आम आदमी पार्टी से जुड़ा हुआ था। यहां तक तो ठीक था। किसी भी राजनीतिक दल को यह अधिकार है कि वह अपने दांव पेच से अपने राजनीतिक विरोधियों को घेरे, कभी सामने से आकर और कभी परोक्ष रूप से। पर जंतर-मंतर पर हुए आंदोलन के दौरान वहां जिस तरह के नारे लगे, जिस तरह के भाषण दिए गए, उसके पीछे की मंशा साफ थी। जंतर-मंतर पर नारे लगे कि मेरा लिंग मेरी मर्जी, मेरा जेंडर मेरी मर्जी, मेरे कपड़े मेरी मर्जी। वहीं कुछ प्रदर्शनकारियों के बयानों के निहितार्थ परिवार और शादी नाम की संस्था को चुनौती देने वाले थे। एक तरफ एक संस्था पिछले सौ वर्षों से भारत और भारतीयता को लेकर आगे चल रही है। अपनी संस्था के सौ वर्ष पूरे होने पर परिवार नाम की संस्था को बल प्रदान करने के लिए कुटुंब प्रबोधन जैसा देशव्यापी कार्यक्रम चला रही हो, जिसमें नई पीढ़ी को अपनी संस्कृति, भाषा और राष्ट्र के प्रति कर्तव्य बताए जाते हों, ताकि राष्ट्र मजबूत हो सके। दूसरी तरफ दिमागी नक्सली परिवार नाम की संस्था को ही खारिज करते हैं। वो किशोरों और युवाओं के मन में स्वतंत्रता के नाम पर अराजकता का बीज बोना चाहते हैं। यह दो तरह के विचारों की लड़ाई है। एक भारतीय विचार जो परिवार को जोड़कर राष्ट्र को मजबूत करना चाहता है और दूसरा जो परिवार को कमजोर करके देश को कमजोर करना चाहता है। कहा भी जाता है कि देश एक बड़ा परिवार है और परिवार एक छोटा देश है। तो सनातन से लेकर भारतीय मूल्यों पर हमला करना ही दिमागी नक्सलियों का ध्येय है।

अर्बन नक्सल वो होते थे जो परोक्ष रूप से माओवादी हिंसा का समर्थन करते थे। उनके पक्ष में माहौल बनाकर देश के युवाओं को गुमराह करके माओवाद के रोमांटिसिज्म की ओर ले जाते थे। दिमागी नक्सल वो हैं जो अकादमिक जगत में भारतीय ज्ञान परंपरा का विरोध करते हैं। उसको दकियानूसी और रूढ़ीवादी बताकर खारिज करते हैं। नरेन्द्र मोदी के प्रधानमंत्रित्व के 12 वर्षों में अकादमिक जगत में ये दिमागी नक्सल कमजोर अवश्य हुए हैं, लेकिन अपनी उपस्थिति का अहसास करवाते रहते हैं। सरकारी सिस्टम में भी इनकी जड़ें गहरी हैं। विशेषकर शिक्षा-संस्कृति के क्षेत्र में तो ये अब भी सक्रिय हैं। दिमागी नक्सलियों ने कमजोर पड़ने की आशंका में रणनीति बदल ली है। अब वे तिलक लगाकर सनातनी होने का स्वांग रचकर अपनी पहचान छिपाते हैं। तमाम तरह के लाभ लेते हैं। समय आने पर राष्ट्रवादी ताकतों का परोक्ष रूप से विरोध करते हैं और उनको अपने लक्ष्य से दूर करने के लिए राह में रोड़ा भी अटकाते हैं। कई बार तो बहुत साफ दिखता है कि ये हो रहा है, लेकिन सिस्टम में दिमागी नक्सलियों की मजबूती के कारण कोई कुछ बिगाड़ नहीं सकता। इसलिए प्रधानमंत्री की चेतावनी को गंभीरता से लिया जाना चाहिए। देश में सक्रिय दिमागी नक्सलियों की पहचान करने और उनको आइसोलेट करने का कार्य समाज को भी करना होगा। जब तक सामाजिक रूप से ये आइसोलेट नहीं होंगे, तब तक वो रूप बदल बदलकर किशोरों और युवाओं को भटकाते रहेंगे।

खरी-खरी

देशप्रेम का बुखार

सूर्यदीप कुशवाहा

अधिकांश चीजों की तरह ही देशप्रेम का भी सीजन आता है। चौबीस घंटे का बुखार चढ़ता है, हर हाथ में पांच-दस रुपये का तिरंगा सजता है। सुबह-सुबह सब राष्ट्रवीर बनते हैं, गाड़ियों पर शान से प्लास्टिक का तिरंगा टांगते हैं, स्मार्टफोन का कैमरा आन होता है, चेहरे पर नकली मुस्कान तैरती है। लाइक्स की गिनती शुरू होती है, दोस्तों की महफिल जमती है, रील के बैकग्राउंड में देशभक्ति का गाना गूंजता है, स्टेटस पर वतन की आन का दावा ठोक दिया जाता है।

बहुत सारे लफंडर किस्म के लड़के अपनी दोपहिया गाड़ी पर तिरंगा लगा लेते हैं और उसे लहराते हुए सड़क पर ऐसे गाड़ी दौड़ाते हैं जैसे देशभक्ति की भावना उनके भीतर हिलोरें मार रही हो। परंतु वे सड़क पर यातायात नियमों का सही तरीके से पालन नहीं करते हैं। सीधे तौर पर देखें तो लोग झंडा खरीद रहे हैं, वे देश से बहुत प्यार जता रहे हैं। लेकिन गहरी नजर से देखें तो यह प्रेम नहीं, केवल मुफ्त की पब्लिसिटी का लालच है, आत्मा बिल्कुल खाली है, बस स्वयं को सच्चा नागरिक दिखाने का नाटक चल रहा है।

इस पूरी प्रक्रिया में देश का भला हो न हो, लेकिन इंटरनेट मीडिया में भला जरूर हो जाता है। लोग अपनी रोज की जिम्मेदारियों से भागते हैं, टैक्स चोरी करते हैं, गंदगी फैलाते हैं, लेकिन साल में दो बार झंडा हाथ में लेकर स्वयं को भगत सिंह समझने लगते हैं। जैसे ही अगली सुबह की धूप निकलती है, देशभक्ति का वह नशा अचानक गायब हो जाता है। कल की वह वतन पर मिटने वाली कसमें हवा हो जाती हैं, सारा जोश दफ्तर की फाइल में दब जाता है।

अब असली तमाशा सड़क पर दिखता है, जहां कल का वह पूजनीय प्रतीक नालियों के पास पड़ा मिलता है, पान की पीक उस पर थूकी जाती है, आवारा जानवर उसे पैरों से रौंदते हैं, लोग उसके ऊपर से गाड़ियां निकाल देते हैं। ऊपर से देखने पर लगता है कि सड़क पर केवल कागज और प्लास्टिक बिखरा है, सफाईकर्मी उसे सुबह आकर झाड़ू से समेट देगा। लेकिन हकीकत चीखकर कहती है कि यह कागज नहीं, उन सभी दिखावटी चेहरों का असली चरित्र है, जो कल तक स्वयं को बड़ा सूरमा समझ रहे थे, आज मर्यादा को सड़क पर छोड़कर आगे बढ़ गए हैं।

कल जो हाथ सलामी दे रहे थे, आज वही हाथ जेब में डालकर उसी मलबे को पार कर जाते हैं। चार लोग बाइक पर बैठते हैं, बीच में हवा से बात करता एक कपड़ा फंसाते हैं, खुद को देश का रक्षक घोषित करते हैं। लेकिन उसी रास्ते पर वे सारे कानून तोड़ते हैं, लाल बत्ती पार करते हैं, बिना हेलमेट के जान जोखिम में डालते हैं, पुलिस को देखकर गाली देते हैं। यह कैसी भक्ति है जो नियम तोड़कर शुरू होती है और गंदगी फैलाकर खत्म होती है?

अगर इस पावन प्रतीक को सहेजने का सलीका नहीं है, उसे मर्यादा के साथ घर में रखने की तमीज नहीं है, तो अपनी इस खोखली रीलबाजी को बंद कीजिए। यह राष्ट्रीय गौरव कोई सेल्फी का सहारा नहीं है, इसे केवल इंटरनेट मीडिया के लिए मत बनाइए। जब तक दिल में नियम मानने की इच्छा न हो, तब तक हाथ में इसे थामना बंद कीजिए, क्योंकि आपका यह चौबीस घंटे का तमाशा देश का मान बढ़ाता नहीं, बल्कि उसे बहुत बुरी तरह घटाता है।

समाज को ऐसी रील्स की आवश्यकता नहीं है, बल्कि समाज को जिम्मेदार नागरिकों की जरूरत है जो रोज देश को थोड़ा बेहतर बनाएं, न कि साल में दो बार सिर्फ ड्रामा करके सो जाएं। देशप्रेम का बुखार, अगले दिन न उतर जाए मेरे यार!

(लेखक व्यंग्यकार हैं)

पोस्ट

हर पीढ़ी अपने समय का भारत बनाती है। अब बारी जेन-जी की है। अपने सपने बड़े रखिए, सवाल पूछते रहिए और असफल होने से मत डरिए, क्योंकि अगला भारत आपके विचारों, आपके साहस और आपके विकल्पों से बनेगा।
सुभाष चंद्रा@subhashchandra

कांग्रेस मुख्यालय पर वंदे मातरम् पूरा नहीं गाने दिया गया। यह वह कांग्रेस नहीं हो सकती, जिसने देश को आजादी दिलाई थी।
संजय निरुपम@sanjaynirupam

जैसे भारत ने वेस्टमिंस्टर माडल अपनाया, उसी तरह हमें शैडो कैबिनेट व्यवस्था भी अपनानी चाहिए थी। तब यह देखना दिलचस्प होता कि विपक्षी खेमे का प्रत्येक मंत्री के कामकाज की कसौटी पर क्या रुख रहता।
सतबीर सिंह@thesatbir

वर्षों से अटके महिला आरक्षण को लेकर प्रधानमंत्री ने लाल किले की प्राचीर से सभी दलों से आग्रह किया कि इसे सब मिलकर लागू करें। सरकार अप्रैल में महिला आरक्षण के लिए परिसीमन कानून लाई थी, लेकिन वह पास नहीं हो पाया। मानसून सत्र में कानून लाने की चर्चा थी, फिर भी बात आगे नहीं बढ़ी। अब देखना होगा कि सरकार कानून कब लाती है?
मिलिंद खांडेकर@milindkhandekar

जागरण जनमत

कल का परिणाम

क्या पैक्ड फूड के डिब्बों पर चीनी, नमक, सैचुरेटेड फैट की अधिकता का लेबल लगाया जाना चाहिए?

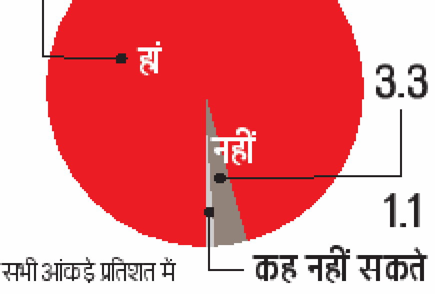

सभी आंकड़े प्रतिशत में

आज का सवाल

क्या कांग्रेस के वरिष्ठ नेताओं ने लाल किले पर स्वतंत्रता दिवस कार्यक्रम का बहिष्कार करके सही किया?

परिणाम जागरण इंटरनेट संस्करण के पाठकों का मत है

जनपथ

शीला जी के पूत में दिखे न बिल्कुल शील,
कांग्रेसी ताबूत में ठोंक रहा वह कील।
ठोंक रहा वह कील भूल करके मर्यादा,
संस्कार सब त्याग बना राहुल का प्यादा!
है नेता की भांति सभी का पुर्जा ढीला,
महिला का अपमान स्वर्ग से देखें शीला!!
-ओम प्रकाश तिवारी

रचनाकर्म

सपनों के नगर का टूटकर बिखरना

ब्रजबिहारी

बचपन से लेकर जवानी तक जिस स्थान पर बीता हो, उसे छोड़कर दूसरी जगह पर बसना आसान नहीं होता है। इसके बावजूद जिंदगी आपको जहां ले जाती है, वहां जाना ही पड़ता है। वहां जाकर जब एक दिन पता चलता है कि आपके सपनों का नगर धराशायी हो गया है तो आपकी क्या हालत होती है, यह वही व्यक्ति समझ सकता है जिसने इसे स्वयं झेला हो। कैलिफोर्निया में रह रही पारमिता सेन को 2012 में जब पता चला कि बाटानगर की वह कालोनी किसी बिल्डर को बेच दी गई है, जहां उनके व्यक्तित्व का निर्माण हुआ तो वह अंदर तक टूट गईं। इस व्यथा कथा को उन्होंने शब्दों में पिरोने का फैसला किया और उसका परिणाम है 'बाटानगर' नामक पुस्तक, जिसमें उन्होंने अपनी निजी पीड़ा को एक ऐसे आख्यान में परिवर्तित कर दिया है, जिससे हर किसी को जुड़ाव महसूस हो।

लगभग एक सदी पहले कलकत्ता (अब कोलकाता) से 15-20 किलोमीटर दूर हुगली नदी के पूर्वी तट पर बाटानगर के नाम से एक ऐसी कालोनी बसाई गई थी, जो तत्कालीन भारत में गरीबी के द्वीप में समृद्धि के टापू की तरह लगती थी। चेकोस्लोवाकिया के ज्लिन शहर में जन्मे टामस बाटा ने जूते की अपनी फैक्ट्री के आसपास बसाई गई इस कालोनी की कल्पना की थी। हालांकि वे अपने जीवनकाल में इस कालोनी को विकसित होते नहीं देख पाए, लेकिन उनकी कल्पना ने एक ऐसी हकीकत को जन्म दिया, जो लंबे समय तक सामुदायिक जीवन की मिसाल बनकर जिंदा रही।

बाटा के नाम से कौन परिचित नहीं है। हवाई चप्पल से लेकर हश पपीज तक, इस जूता कंपनी के हर उत्पाद ने भारत के लोगों को पीढ़ी दर पीढ़ी अपने साथ जोड़ा है। आज भले ही यह कंपनी अपनी पूर्व छवि की छायामात्र रह गई है, लेकिन एक समय था जब भारतीय बाजार में उसकी तूती बोलती थी। लेखिका को जब बाटानगर को गिराए जाने का समाचार मिला तो उन्हें याद आया कि कैसे लाभ कमाने के उद्देश्य से भारत में स्थापित की गई चेकोस्लोवाकिया की एक कंपनी की एक शाखा ने जाति-धर्म के विभेदों को मिटाकर एक वैश्विक नगर को आकार दिया था। आज से लगभग सौ साल पहले इस तरह का नगर एक क्रांतिकारी विचार था।

करीने से बने हुए फ्लैट, बंगले, अस्पताल, स्कूल और क्लब उस दौर में कालोनी के बाहर रहने वाले लोगों के लिए किसी कल्पना लोक की तरह लगते थे। सब कुछ ठीक चल रहा था, लेकिन पिछली सदी के आखिरी दशक में आई उदारीकरण और वैश्वीकरण की आंधी ने बाटा और उसकी इस कालोनी की बुनियाद को हिलाकर रख दिया। अब तक एकाधिकार की स्थिति में काम कर रही बाटा इंडिया को खादिम, श्रीलेदर्स और लिबर्टी जैसे देशी और एडिडास, नाइकी एवं रिबाक जैसे बहुराष्ट्रीय ब्रांडों से ऐसी चुनौती मिली, जिसका वह सफलतापूर्वक सामना नहीं कर पाई। बाटा जो कभी भारतीय जूता-चप्पल बाजार की पहचान था, फैशन से बाहर हो गया।

इस पुस्तक में लेखिका ने अपने सपनों के नगर के बिखरने और टूटने को व्यापक संदर्भों में पिरोकर बदलते भारत की झलक प्रस्तुत की है। अपनी व्यथा को उन्होंने शब्दों में व्यक्त करने का बेहतर प्रयास किया है...

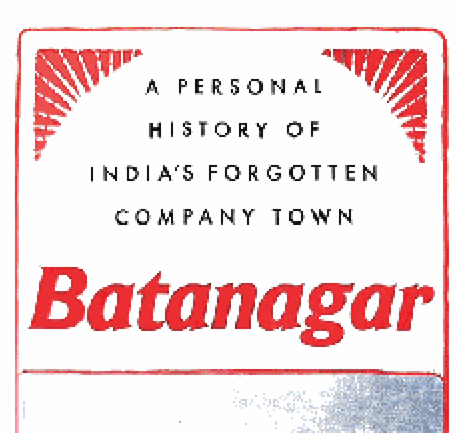

पुस्तक : बाटानगर
लेखिका : पारमिता सेन
प्रकाशक : पैन मैकमिलन इंडिया
मूल्य : 299 रुपये

इसमें दोराय नहीं है कि लेखिका ने अपने सपनों के नगर के बिखरने और टूटने को व्यापक संदर्भों में पिरोकर पेश किया है। पुस्तक बताती है कि कैसे वामपंथी दलों द्वारा समर्थित ट्रेड यूनियनों ने बंगाल जैसे एक अग्रणी औद्योगिक राज्य को पिछड़ेपन के रास्ते पर धकेल दिया। हालांकि लेखिका यह भूल गई हैं कि बाटानगर से पहले टाटानगर और किर्लोस्करवाड़ी जैसे नगर अस्तित्व में आ चुके थे, जो सामुदायिक जीवन पद्धति पर आधारित थे। ये नगर किसी बहुराष्ट्रीय कंपनी की देन नहीं थे, बल्कि विशुद्ध देशी सोच के परिणाम थे।

भारत की पुनरुत्थान यात्रा

आकांक्षा अवस्थी

हम सबके लिए सौभाग्य और गर्व का विषय है कि हम भारत की स्वतंत्रता की 79वीं वर्षगांठ मना रहे हैं। 15 अगस्त, 1947 को औपनिवेशिक शासन की परतंत्रता से मुक्त हुए भारतवर्ष ने विगत 80 वर्षों में अंतरराष्ट्रीय राजनीति के क्षेत्र में उतार-चढ़ाव की यात्रा की है। विगत वर्षों की स्वाधीनता की यात्रा में भारत ने अनेक महत्वपूर्ण पड़ाव देखे हैं। विश्व पटल पर भारत ने वर्ष 1947 में अपनी यात्रा लगभग दयनीय अवस्था में प्रारंभ की थी। अंग्रेजी शासन की दासता से मुक्ति के बाद का भारत का यात्रापथ कठिन, दुरूह और दुर्गम था, परंतु भारत की शाश्वत, अक्षुण्ण, निरंतर तथा सनातन परंपरा और जिजीविषा ने असंभव को संभव कर दिखाया।

विभाजन के दंश ने भारत की प्रगतिकामी प्रतिभा को कुंठित नहीं किया। शिक्षा के क्षेत्र में भारत लगभग 200 वर्ष की मानसिक दासता की श्रृंखलाओं को छिन्न-भिन्न करने को उद्यमरत है। भारत को 2047 तक विकसित राष्ट्र बनाना है। यह किसी सरकार, किसी सत्ता, किसी राजनेता, किसी राजनीतिक दल, किसी प्रशासनिक अभिकरण अथवा किसी समूह का विषय नहीं रह गया है। यह संपूर्ण भारतवर्ष का समेकित एवं सामूहिक संकल्प है। यह विश्व पटल पर भारत के पुनर्जागरण का उद्घोष है। यह समस्त मानव जाति के कल्याण को सर्वोपरि समझने वाली भारतीय सनातन संस्कृति का शंखनाद है।

पुस्तक : भारत भाग्य विधाता
लेखक : संजीव कुमार शर्मा
प्रकाशन : सान्निध्य बुक्स
मूल्य : 275 रुपये

किसी भी राष्ट्रीय ऐतिहासिक परंपरा और सभ्यता मूलक सिद्धांतों से ही राष्ट्र के वर्तमान की निर्मिति होती है। विश्व के प्राचीनतम राष्ट्र भारतवर्ष की विशिष्ट एवं प्राचीनतम संस्कृति विश्व कल्याण की दृष्टि से संयुक्त होकर सहस्रों वर्षों से मानव सभ्यता का पथ आलोकित करती रही है। पुस्तक भारत भाग्य विधाता ऐसे ही समकालीन राष्ट्रीय विषयों पर निष्पक्ष व निर्भीक टिप्पणियों का संग्रह है। यह पुस्तक भारत की ज्ञान परंपरा और संस्कृत के वैभव से पूर्ण है।

बलिदान परमो धर्म:

धरती का स्वर्ग कही जाने वाली हिमाच्छादित पर्वतों, झीलों और सुरम्य वादियों की कश्मीर घाटी ने पाकिस्तान प्रायोजित आतंकवाद का लंबा, रक्तरंजित और पीड़ादायक दौर झेला है। भय, विस्थापन और हिंसा के उस कठोर समय ने असंख्य घर उजाड़े, परिवारों को बिखेरा और सामान्य जीवन को गहरे असुरक्षा-बोध से भर दिया। आतंक की यह आग बाद में डोडा, भद्रवाह, किश्तवाड़, रामबन, राजौरी और पुंछ जैसे पहाड़ी क्षेत्रों तक फैल गई, किंतु वहां लोगों ने प्रतिरोध का मार्ग चुना और अनेक ज्ञात-अज्ञात वीरों ने बलिदान देकर आतंकवाद के मंसूबों को विफल किया। इस मानवीय साहस और अदम्य संकल्प को रवींद्र जुगरान की 'जम्मू कश्मीर : आतंक पर विजय की शौर्यगाथा' संवेदनशीलता और तथ्यपरकता के साथ अभिव्यक्ति देती है। 80 कथानकों पर आधारित यह कृति उन नागरिकों, जन नेताओं, सुरक्षा बलों के सहयोगियों और अनाम बलिदानियों को समर्पित एक भावपूर्ण श्रद्धांजलि है।

यतीन्द्र मिश्र

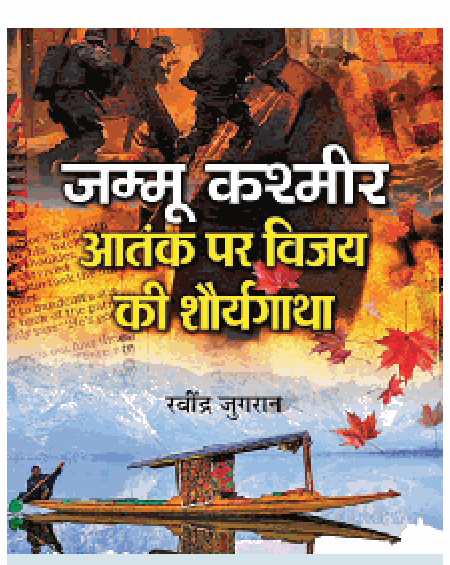

पुस्तक : जम्मू कश्मीर : आतंक पर विजय की शौर्यगाथा
पुस्तक : रवींद्र जुगरान
प्रकाशन : प्रभात प्रकाशन
मूल्य : 1000 रुपये

शुरुआत महर्षि कश्यप से वर्तमान कश्मीर तक की ऐतिहासिक यात्रा पर आधारित है, जिसमें घाटी के बदलते सामाजिक-सांस्कृतिक स्वरूप, कट्टरपंथी विचारों के क्रमिक उभार और राष्ट्रीय एकता के प्रति राज्य तथा देश की प्रतिबद्धता क्रमबद्ध रूप से प्रस्तुत है।

पुस्तक विभिन्न पृष्ठभूमियों से जुड़े उन चेहरों को सामने लाती है जो औपचारिक राजनीतिक विमर्श में अक्सर ओझल रह जाते हैं। यहां प्रेमलाल शर्मा, अनिल परिहार, प्रवीण गुप्ता 'शेरू', लेफ्टिनेंट उमर फैयाज जैसे अनेक नायकों की वीरता के साथ डोडा बचाओ आंदोलन, ग्रामीणों की सामूहिक वीरता, निर्भीक पत्रकारिता, पूर्व सैनिकों की आतंकवाद को चुनौती और नारी शक्ति के संघर्ष जैसे अनेक घटनाक्रम दर्ज हैं। उस दौर में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का योगदान भुलाया नहीं जा सकता। 1991 में श्रीनगर के लाल चौक पर तिरंगा फहराने के लिए आयोजित एकता-यात्रा का संचालन उस समय आज के हमारे प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने किया। अनेक प्रसंग उस समय के वातावरण का प्रत्यक्ष अनुभव कराते हैं। विभिन्न धार्मिक पृष्ठभूमियों से जुड़े लोगों की साझा सांस्कृतिक विरासत जम्मू-कश्मीर की विशिष्ट पहचान रही है। इस क्रम में अनुच्छेद 370 और धारा 35ए का निरसन राष्ट्रीय एकता की दीर्घकालिक आकांक्षा की ऐतिहासिक परिणति है, जिसके लिए सरकार को कोटि साधुवाद।

सैन्य-संगीत की भारतीय विरासत

कल पूरे राष्ट्र ने उत्साह के साथ स्वतंत्रता दिवस मनाया। इस राष्ट्रीय उल्लास की प्रतिध्वनि हमें अनायास उन समारोहों तक ले जाती है, जिन्हें देखते हुए हमारी पीढ़ियां बड़ी हुई हैं। चाहे गणतंत्र दिवस पर कर्तव्य पथ हो या विजय चौक पर 'बीटिंग द रिट्रीट'। बिगुल की पुकार, नगाड़ों की थाप और सैन्य बैंडों की अनुशासित लय हमारी सामूहिक स्मृति की ध्वनियां हैं। किंतु इन सैन्य-ध्वनियों की परंपरा कितनी प्राचीन है? क्या इसका इतिहास आधुनिक सैन्य समारोहों तक सीमित है या जड़ें भारतीय सभ्यता के हजारों वर्ष पुराने अतीत में हैं? इन्हीं प्रश्नों का गंभीर और शोधपरक उत्तर यू. पी. थपलियाल 'मार्शल म्यूजिक आफ इंडिया (फ्राम द अर्लिएस्ट टाइम्स)' में देते हैं। पुस्तक की संरचना भारतीय मार्शल संगीत की दीर्घ ऐतिहासिक यात्रा प्रस्तुत करती है। शुरुआत मानव सभ्यता के आदिम चरणों से होती है, जब संकट या भय में चिल्लाना, पुकारना और ऊंचे स्वर में ध्वनि करना शत्रु को भयभीत करने का साधन थी। सेनाओं के संगठित और युद्धक्षेत्रों के विस्तृत होने पर इन ध्वनियों का स्थान वाद्यों ने लिया और युद्ध-संगीत सैन्य व्यवस्था का अंग बन गया। लगभग 3000 ईसा पूर्व के असीरियाई-बेबीलोनियाई शिल्पचित्र युद्ध-यात्राओं के साथ संगीतकारों की उपस्थिति के प्रमाण देते हैं।

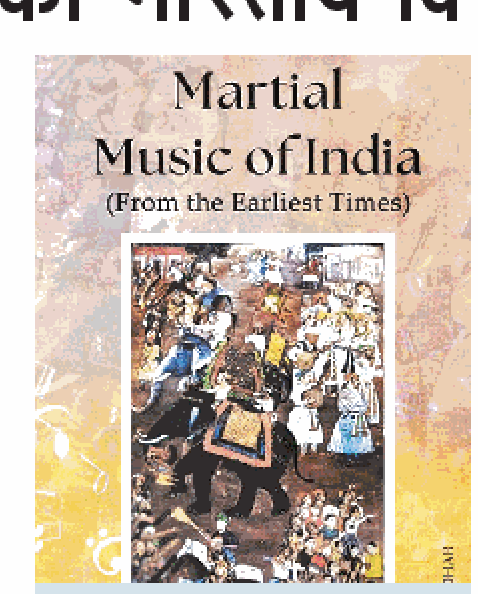

पुस्तक : मार्शल म्यूजिक आफ इंडिया
लेखक : यू. पी. थपलियाल
प्रकाशक : मनोहर पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली
मूल्य : 1195 रुपये

महाकाव्यों में युद्ध-संगीत रणभूमि की ध्वनि से आगे बढ़कर मनोवैज्ञानिक अस्त्र बनता है। रामायण में शंख, भेरी और मृदंग की गूंज युद्ध की उग्रता को स्वर देती है, तो महाभारत में पाञ्चजन्य और देवदत्त की ध्वनि का कौरव सेना पर भय का वर्णन इसका उल्लेखनीय उदाहरण है। पुस्तक मौर्य-शुंग, गुप्त, हर्षोत्तर काल और दक्षिण भारतीय परंपराओं में प्रचलित युद्ध-संगीत को रेखांकित करती है। समय के साथ इसके वाद्यों में विविधता बढ़ी, जिसे भरत के नाट्यशास्त्र में चार वर्गों (तत, अवनद्ध, घन और सुषिर) में व्यवस्थित किया गया है। आधुनिक युद्धकला के साथ रणभूमि में सैन्य संगीत की भूमिका घटकर द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद मुख्यतः औपचारिक समारोहप्रधान रह गई। ब्रिटिश काल में भारतीय सैन्य बैंडों में ट्रंपेट, कार्नेट, क्लैरिनेट, ट्रांबोन और बैगपाइप जैसे पाश्चात्य वाद्य आए, जिनकी परंपरा स्वतंत्रता के बाद भी जारी रही। वर्ष 1953 में राष्ट्रपति डा. राजेंद्र प्रसाद ने सैन्य संगीत के भारतीयकरण की आवश्यकता रेखांकित की। युद्ध-गीतों, युद्धघोषों और रणध्वनियों से भारतीय सैन्य-संगीत की अनुपम विरासत को दर्ज करती ऐतिहासिक पुस्तक।

पहले चार माह में अपैरल निर्यात 1.84 प्रतिशत घटा

नई दिल्ली: चालू वित्त वर्ष के पहले चार महीनों (अप्रैल-जुलाई 2026) के दौरान भारत का टेक्सटाइल व अपैरल निर्यात 1.84 प्रतिशत घटकर 11.96 अरब डालर रहा है। कन्फेडरेशन आफ इंडियन टेक्सटाइल के एक विश्लेषण के अनुसार, अपैरल के निर्यात में तेज गिरावट की टेक्सटाइल ने भरपाई की है। इस अवधि के दौरान अपैरल निर्यात 10.52 प्रतिशत घटकर 4.95 अरब डालर रहा, जबकि टेक्सटाइल निर्यात 5.38 प्रतिशत बढ़कर 7.01 अरब डालर रहा है। (एएनआइ)

अब डाक विभाग की ओर से संचालित ग्रामीण डाक जीवन बीमा का प्रीमियम सभी अधिसूचित बैंकों और डाकघर के बचत खाते से जमा किया जा सकता है।

– पेम्मासानी चंद्रशेखर, केंद्रीय दूरसंचार राज्यमंत्री

डेबिट-क्रेडिट कार्ड की इन सेवाओं को रखें बंद, नहीं हो पाएगी डिजिटल धोखाधड़ी

इन दिनों डिजिटल धोखाधड़ी की घटनाएं तेजी से बढ़ रही हैं। इसके लिए ठग ग्राहकों के डेबिट या क्रेडिट कार्ड की जानकारी चुराते हैं। लेकिन अगर आप अपने डेबिट या क्रेडिट कार्ड की सेवाओं को अपनी सुविधा के अनुसार चालू रखें और शेष सेवाओं को बंद रखें तो कभी भी डिजिटल धोखाधड़ी नहीं हो पाएगी। आज हम आपको डेबिट या क्रेडिट कार्ड की एक ऐसी सेवा के बारे में बता रहे हैं जिसके बंद होने पर ठग कभी भी आपके साथ ठगी नहीं कर पाएंगे। डेबिट-क्रेडिट कार्ड को सुरक्षित रखने संबंधी उपायों पर **मनोज कुमार** की रिपोर्ट...

मोबाइल एप या इंटरनेट बैंकिंग से बंद की जा सकती है आनलाइन लेनदेन सेवा

क्रेडिट या डेबिट कार्ड की आनलाइन और अंतरराष्ट्रीय सेवा को आप उस बैंक के मोबाइल एप या इंटरनेट बैंकिंग के जरिये बंद कर सकते हैं। इस सेवा को बंद करने के लिए प्रत्येक बैंक की प्रक्रिया अलग-अलग होती है। ऐसे में किसी भी सेवा को बंद या शुरू करने के लिए बैंक के कस्टमर केयर (ग्राहक सेवा) की मदद ले सकते हैं। मोबाइल एप या इंटरनेट बैंकिंग के जरिये ही इस सेवा को शुरू भी किया जा सकता है।

आनलाइन लेनदेन सेवा को रखें बंद

किसी भी प्रकार की डिजिटल धोखाधड़ी से बचने के लिए आप अपने डेबिट और क्रेडिट कार्ड की आनलाइन व अंतरराष्ट्रीय लेनदेन सेवा को बंद रखें। यह दोनों सेवाएं वैकल्पिक हैं और इन्हें आप अपनी सुविधा के अनुसार कभी भी बंद या शुरू कर सकते हैं। आरबीआइ के अनुसार, जिन भी कार्डों से कभी भी आनलाइन या विदेश में भुगतान नहीं हुआ है, उनकी ये सेवाएं डिसेबल (निष्क्रिय या बंद) ही रहती हैं। इन सेवाओं को बंद रखने का प्रमुख कारण यह है कि अधिकांश ठग डिजिटल धोखाधड़ी को अंजाम देने के लिए आनलाइन या अंतरराष्ट्रीय लेनदेन का ही सहारा लेते हैं। जानकारों का कहना है कि भले ही ठग किसी के डेबिट या क्रेडिट कार्ड की पूरी जानकारी जुटा लें, लेकिन इन दोनों सेवाओं के बंद होने से ठगी को अंजाम देने मुश्किल है।

नए कार्ड में पहले से बंद रहती है आनलाइन ट्रांजेक्शन सुविधा

आरबीआइ ने नियमों के अनुसार, 16 मार्च 2020 के बाद जारी होने वाले डेबिट और क्रेडिट कार्ड में आनलाइन लेनदेन की सुविधा पहले से ही बंद होती है। ग्राहकों को इस सुविधा का लाभ लेने के लिए उसे सक्रिय करना होता है। नए कार्ड में सिर्फ दो सुविधा पहले से उपलब्ध होती हैं। इसमें एटीएम से पैसे निकलना और प्वाइंट आफ सेल (पीओएस) डिवाइस पर इस्तेमाल करना (आम भाषा में मशीन पर कार्ड को स्वाइप करना) शामिल है। ग्राहक अपनी इच्छा से आनलान लेनदेन की सुविधा को कभी भी चालू या बंद कर या करा सकता है।

कार्ड को सुरक्षित रखने के अन्य तरीके

- **लेन-देन सीमा तय करें:** अपने बैंक के मोबाइल एप या नेट बैंकिंग के जरिये डेबिट या क्रेडिट कार्ड की दैनिक खर्च सीमा को कम से कम या जरूरत के अनुसार रखें।
- **कांटैक्टलेस पेमेंट बंद रखें:** यदि आपको बिना पिन के टैप करके भुगतान करने की सुविधा नहीं चाहिए तो एनएफसी या कांटैक्टलेस पेमेंट विकल्प को बंद रखें।
- **इस्तेमाल करके बंद करें:** जब आपको आनलाइन शापिंग या विदेश में भुगतान करना हो तभी एप से इन दोनों सेवाओं को कुछ देर के लिए चालू करें और काम पूरा होते ही दोबारा बंद कर दें।
- **कार्ड की जानकारी साझा न करें:** अपने डेबिट या कार्ड की जानकारी जैसे- कार्ड नंबर, सीवीवी, पिन या ओटीपी किसी के साथ साझा न करें।
- **सुरक्षित वेबसाइट व एप का इस्तेमाल करें:** किसी सत्यापित प्लेटफार्म के जरिये ही भुगतान करें। बिना अच्छी तरह जांच-पड़ताल किए अनजान वेबसाइट या प्लेटफार्म पर कार्ड की जानकारी देने से बंच। इससे आपकी जानकारी लीक या चोरी हो सकती है।
- **लेनदेन अलर्ट को चालू रखें:** हमेशा अपने क्रेडिट या डेबिट कार्ड से लेनदेन होने पर एसएमएस, ई-मेल और एप नोटिफिकेशन अलर्ट सेवा को चालू रखें। तुरंत अलर्ट मिलने पर संदिग्ध गतिविधि की पहचान और रिपोर्ट करने में मदद मिलती है।

जागरण इन्फो

सबके पास एक जैसी मशीन है

हर इन्वेस्टर को उन टूल, एप और वेबसाइट का काफी अनुभव हो चुका है जो आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (एआइ) से आपको सेवाएं देने का वादा करते हैं। ये सेवाएं दावा करती हैं कि वे अगले मल्टीबैगर के लिए पूरे बाजार को लगातार खंगालती रहती हैं। आपके लिए परफेक्ट पोर्टफोलियो बनाती हैं। आपकी खरीद-बिक्री का सही समय बताती हैं और पता नहीं क्या-क्या। भले ही ये दावे सच हों, और मुझे नहीं लगता है कि कोई भी और इन्हें इस्तेमाल कर सकता है, तो जरा सोचिए कि ये आपको कितना फायदा दे सकते हैं।

धीरेंद्र कुमार, संपादक, हिंदी डाट वैल्यूरिसर्चआनलाइन डाट काम

बोनस

कुछ दिन पहले मुझे इसी बात की याद एचसीएल टेक के पूर्व सीईओ विनीत नायर की एक नई किताब से आई। नायर की पहली किताब 'एंप्लायीज फर्स्ट, कस्टमर्स सेकेंड' थी। ये उन चंद इंडियन 'एयरपोर्ट बुक्स' में से है जिन्होंने मार्केटिंग नहीं बल्कि अपने कंटेंट के दम पर नाम कमाया। अब उन्होंने एक और किताब 'ह्यूमन्स फर्स्ट, मशीन्स सेकंड' लिखी है। यह किताब उन बिजनेस के लिए है जो उस मुश्किल हालात से निपटने की कोशिश कर रहे हैं। दिलचस्प बात ये है कि किताब भले ही बिजनेस के लिए लिखी गई हो, लेकिन इसकी मुख्य दलील जिंदगी के कई और क्षेत्रों पर भी लागू होती है। नायर एआइ को एक 'इक्वलाइजर' (संतुलन बनाने वाला) मानते हैं। यह ताकतवर तो है, लेकिन सबके लिए उपलब्ध भी है। अगर यह सबके लिए उपलब्ध है, तो यह कोई डिफरेंशिएटर नहीं हो सकता। यह आपको दूसरों से अलग नहीं कर सकता।

बेशक, नायर बिजनेस के आपस के मुकाबले की बात कर रहे हैं, लेकिन यही तर्क निवेशकों, खासकर छोटे निवेशकों पर भी लागू होता है। जब आप, आपके बगल वाला शख्स और कुछ करोड़ और लोग, सब एक ही मशीन का इस्तेमाल करके एक ही बाजार से बेहतर नतीजे पाने की कोशिश कर रहे हों, तो वह मशीन किसी के लिए भी फायदेमंद नहीं रह जाती। अगर वह किसी सस्ते स्टाक को खोज सकती है, तो वह मौका उसी वक्त सबको दिख जाएगा। यानी वह असल में किसी के लिए भी मौका नहीं रहेगा।

अगर टूल सबके एक जैसे हैं, या जल्द ही हो जाएंगे, तो एक निवेशक को दूसरे से अलग क्या बनाता है? इसका जवाब एआइ में नहीं, बल्कि निवेशक के अपने स्वभाव में छिपा है। क्या आप एक समझदार प्लान बना सकते हैं और फिर उस पर टिके रह सकते हैं जब मार्केट 30 प्रतिशत गिर जाए या आप घबराकर भाग खड़े होंगे? कोई मशीन आपको यह खूबी नहीं दे सकती, क्योंकि यह नालेज, डाटा या विश्लेषण जैसी किसी चीजी की बात ही नहीं है।

एआइ टूल पुराने डिजिटल टूल से भी ज्यादा सावधानी की मांग करते हैं। इसकी एक वजह यह है कि एआइ अक्सर आपकी बात से सहमत होने लगता है। यानी एआइ आपको चुनौती देने के बजाय कई बार वही सुनाता है, जो आप सुनना चाहते हैं। लेकिन किसी सलाहकार से हमें सबसे ज्यादा जरूरत अपनी सोच को चुनौती देने वाली राय की होती है। हर बात पर हां में हां मिलाने वाले की नहीं।

कुल मिलाकर, एआइ का फायदा वास्तविक है, लेकिन इसका सही इस्तेमाल करने के लिए मेहनत करनी होगी। निवेशकों को यह समझना होगा कि एआइ जानकारी और विश्लेषण दे सकता है, लेकिन अच्छे निवेश फैसले के लिए इंसानी समझ और अनुशासन अब भी जरूरी हैं। विनीत नायर की किताब 'ह्यूमन्स फर्स्ट, मशीन्स सेकंड' का संदेश निवेशकों के लिए भी उतना ही प्रासंगिक है कि एआइ को इंसान का विकल्प नहीं, बल्कि इंसान की मदद करने वाला टूल मानें।

कमोडिटी बाजार में विदेशी निवेशकों को अनुमति की तैयारी

जासं, कानपुर : भारतीय कमोडिटी डेरिवेटिव बाजार यानी एमसीएक्स और एनसीडीएक्स में अब विदेशी निवेशकों की भागीदारी बढ़ाने की तैयारी है। कैपिटल मार्केट रेग्युलेटर सेबी ने 11 अगस्त को जारी कंसल्टेशन पेपर में विदेशी पोर्टफोलियो निवेशकों (एफपीआइ) को गैर-कृषि कमोडिटी के फिजिकल सेटलमेंट वाले वायदा अनुबंधों में भाग लेने की अनुमति देने का प्रस्ताव रखा है। इसमें सोना, चांदी, कच्चा तेल, प्राकृतिक गैस और बेस मेटल्स जैसे प्रमुख कमोडिटी कांट्रैक्ट शामिल हो सकते हैं। प्रस्ताव पर एक सितंबर तक सुझाव मांगे गए हैं।

इसका असर सराफा कारोबार पर पड़ सकता है, जहां माल की खरीद-बिक्री से दाम में एकरूपता आने की उम्मीद की जा रही है। विदेशी निवेशकों की बड़ी भागीदारी होने पर भारतीय कमोडिटी एक्सचेंजों पर कारोबार और तरलता बढ़ सकती है। साथ ही खरीद-बिक्री के लिए बाजार में अधिक अवसर मिलेंगे।

31 दिसंबर तक दें विदेशी संपत्ति की जानकारी

आयकर विभाग ने विदेश में संपत्ति या आय की जानकारी देने के लिए शुरू की नई स्वैच्छिक योजना

नई दिल्ली, प्रेट्र: आयकर विभाग ने शनिवार को छोटे करदाताओं के लिए एक नई स्वैच्छिक डिस्क्लोजर योजना अधिसूचना जारी की। इस योजना के तहत छोटे करदाता अपनी अघोषित विदेशी संपत्तियों और आय की जानकारी आयकर विभाग को दे सकता है। हालांकि, इसके लिए करदाताओं को 60 प्रतिशत कर का भुगतान करना होगा। केंद्रीय प्रत्यक्ष कर बोर्ड (सीबीडीटी) ने बताया कि यह योजना 16 अगस्त से प्रभावी होगी और 31 दिसंबर तक ऐसी संपत्ति या आय की जानकारी आनलाइन घोषणा के जरिये दी जा सकती है।

वित्त वर्ष 2026-27 के बजट में छोटे करदाताओं के लिए फारेन एसेट्स डिस्क्लोजर स्कीम (एफएएसटी-डीएस) की घोषणा की गई थी। इस योजना का उद्देश्य योग्य करदाताओं को आगे की दंड या अभियोजन के बिना विदेशी संपत्तियों को कर के दायरे में लाना है। यह योजना उन करदाताओं के लिए है जिन्होंने योग्य विदेशी संपत्तियों या आय को घोषित करने में विफलता दिखाई है। इसमें छात्र, युवा पेशेवर, तकनीकी कर्मचारी और स्थानांतरित गैर-निवासी भारतीय शामिल हैं।

नियमों के तहत, करदाता घोषित-अघोषित विदेशी संपत्ति या आय के मूल्य पर 30 प्रतिशत कर का भुगतान करेंगे। इसके साथ ही कर के बराबर एक अतिरिक्त राशि का भुगतान करेंगे, जिससे कुल कर 60 प्रतिशत हो जाएगा। संपत्तियों का उचित बाजार मूल्य 31 मार्च, 2026 के अनुसार निर्धारित किया जाएगा।

- योजना के तहत करदाता को 60 प्रतिशत टैक्स देना होगा
- आज से आनलाइन जानकारी दे सकते हैं योग्य करदाता

दो श्रेणियां में घोषणा

पहली श्रेणी : इसमें ऐसी अघोषित विदेशी संपत्ति या विदेशी आय शामिल है, जिसे पहले कर के लिए प्रस्तुत नहीं किया गया था और इसका कुल मूल्य एक करोड़ रुपये से अधिक नहीं होना चाहिए।

दूसरी श्रेणी : इसमें वे विदेशी संपत्तियां शामिल हैं, जिन्हें पहले कर के लिए प्रस्तुत किया गया था या जब करदाता गैर-निवासी था, तब अधिग्रहित की गई थीं, लेकिन संबंधित कर-रिटर्न अनुसूची में रिपोर्ट नहीं की गई थीं। ऐसी घोषणाओं के लिए सीमा पांच करोड़ रुपये है, जिसमें एक लाख रुपये का शुल्क देय है।

ऐसे करें टैक्स की गणना

सीबीडीटी ने कहा है कि यह योजना योग्य करदाताओं को "कुछ अघोषित विदेशी संपत्तियों, अघोषित विदेशी आय या अघोषित विदेशी संपत्तियों" को निर्दिष्ट कर या शुल्क का भुगतान करके घोषित करने में सक्षम बनाती है। उदाहरण के लिए, यदि एक अघोषित विदेशी बैंक खाते का मूल्यांकन 60 लाख रुपये किया गया है और अघोषित विदेशी आय 20 लाख रुपये है, तो कुल कर देय 48 लाख रुपये होगा।

मुकदमेबाजी से मिलेगी छूट

सीबीडीटी के अनुसार, जो करदाता वैध घोषणाएं करेंगे, उन्हें आगे के किसी भी कर या दंड से और 2015 के काला धन (अघोषित विदेशी आय और संपत्तियां) और कर अधिनियम के तहत अभियोजन या मुकदमेबाजी से छूट प्राप्त होगी। घोषित आय या घोषित संपत्ति में निवेश की गई राशि को भी आयकर अधिनियम, 1961 या काला धन अधिनियम के तहत करदाता की कुल आय में शामिल नहीं किया जाएगा।

बिजनेस से जुड़ी खबरों और अपडेट के लिए स्कैन करें या विजिट करें jagran.com

राष्ट्रीय फलक

बड़े सुधारों की ओर भारत, पुराने नियमों से काम नहीं चलेगा : प्रधानमंत्री

जागरण ब्यूरो, नई दिल्ली

- जल्द ही बड़े आर्थिक सुधारों के संकेत, कहा- बढ़ानी होगी रिफार्म की गति
- दुनिया की टाप कंपनियों से लेकर बैंक तक में भारत की हिस्सेदारी बढ़ाएं

स्वतंत्रता दिवस पर अपने संबोधन में प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने जल्द ही बड़े आर्थिक सुधारों के संकेत दिए। उन्होंने स्पष्ट कहा कि विकसित भारत के सपनों को पूरा करने के लिए बीते समय की नीतियों व नियमों से काम नहीं चलेगा। बड़े रिफार्म के साथ उसकी गति भी बढ़ानी होगी और इस काम में राज्य सरकार को भी सहयोग करना होगा। राज्य सरकार, इंडस्ट्री और देशवासियों की बदौलत ही दुनिया की 500 बड़ी कंपनियों में भारत की 50 कंपनियां शामिल हो सकती हैं।

उन्होंने कहा, विश्व के पांच टाप बैंक में भारत का भी बैंक होना चाहिए। फार्मा के क्षेत्र में भारत ने बहुत काम किया है और कम से कम एक-दो भारतीय फार्मा कंपनियों का नाम वैश्विक स्तर पर गूंजना चाहिए। वैश्विक ला, अकाउंटिंग फर्म और रेटिंग एजेंसियों में भी भारत का नाम टाप पर होना चाहिए, क्योंकि भारत के पास योग्यता है, सामर्थ्य है।

नरेन्द्र मोदी। प्रेट्र

अभी फार्चुन 500 कंपनियों में भारत की 10 कंपनियां हैं। लेकिन दुनिया के 10 शीर्ष बैंक में एक भी बैंक भारत का नहीं है। वित्त मंत्रालय का मानना है कि एसबीआइ और एचडीएफसी बैंक में टाप बैंकों में शामिल होने की क्षमता है। इसी तरह भारत दुनिया का 20 प्रतिशत जेनेरिक दवा का उत्पादन कहना है, लेकिन सन फार्मा को छोड़ किसी भी कंपनी की वैश्विक पहचान नहीं हैं।

प्रधानमंत्री ने कहा, हमारे ब्रांड हमारे देश की पहचान हो। ऐसा तभी संभव है जब हम ऐसे उत्पाद का निर्माण करने लगेंगे जिसकी जरूरत पूरी दुनिया को हो। अनुसंधान के लिए इस बार के बजट में एक लाख करोड़ रुपए का प्रविधान रखा गया है। प्रधानमंत्री ने बताया कि देश में चिप निर्माण से जुड़े तीन प्लांट शुरू हो गए हैं। कुछ सालों में आठ और प्लांट उत्पादन करने लगेंगे। किसी भी इलेक्ट्रानिक्स सामान के साथ मेडिकल उपकरण या आटोमोबाइल्स के लिए चिप जरूरी है। तीन साल पहले तक भारत में चिप निर्माण असंभव लग रहा था, लेकिन सरकार की तरफ से वित्तीय पैकेज की घोषणा और नियमों में बड़े बदलाव से अब देश में दर्जनभर से अधिक कंपनियां चिप निर्माण से जुड़े क्षेत्र में निवेश कर रही हैं।

दुनिया से जो मिलता है उससे सस्ता और अच्छा देना होगा, तभी होगा एफटीए का लाभ

जागरण ब्यूरो, नई दिल्ली

- लाल किले के प्राचीर से पीएम नरेन्द्र मोदी ने दिया निर्माण का मंत्र

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने देश के एमएसएमई और मैन्यूफैक्चरिंग सेक्टर से कहा कि वर्ष 2014 के बाद से भारत का 40 देशों के साथ मुक्त व्यापार समझौता (एफटीए) हो रहा है, लेकिन इसका लाभ उन्हें तभी मिलेगा जब वे दुनिया में जो मिलता है उससे अच्छा और सस्ता उत्पाद बनाएंगे।

एफटीए को बड़ा अवसर बताते हुए उन्होंने कहा कि पंजाब के लुधियाना से लेकर तमिलनाडु के तिरुपुर का टेक्सटाइल दुनिया में पहुंच सकता है। एफटीए ने केरलम से लेकर गुजरात, तमिलनाडु व बंगाल के झींगा के निर्यात की संभावना बढ़ा दी है। 40 देशों के साथ एफटीए एमएसएमई के लिए व्यापार बढ़ाने का बड़ा मौका है। शनिवार को स्वतंत्रता दिवस पर लाल किले के प्राचीर से राष्ट्र को संबोधित करते हुए उन्होंने एक बार फिर से विनिर्माण के लिए गुणवत्ता पर विशेष जोर दिया।

प्रधानमंत्री ने कहा, लागत कम करने व गुणवत्ता बढ़ाने के लिए हमें मैन्युफैक्चरिंग सेक्टर को बहुत आगे बढ़ाना होगा। डिजाइन से लेकर मैन्युफैक्चरिंग तक में भारत को ग्लोबल सप्लाई चेन का भरोसेमंद केंद्र बनना होगा। चालू वित्त वर्ष 2026-27 के पहले चार महीनों में निर्यात में होने वाली दहाई अंक की बढ़ोतरी से जाहिर है कि भारतीय वस्तुओं की स्वीकार्यता दुनिया में बढ़ी है और यह गुणवत्ता में सुधार के कारण ही संभव हो सका है।

अगले सप्ताह टाटा संस की वार्षिक आम बैठक होने की संभावना नहीं

- सर रतन टाटा ट्रस्ट की ओर से प्रतिनिधि नामित नहीं होने के कारण टल सकती है टाटा संस की एजीएम

नई दिल्ली, प्रेट्र : 18 अगस्त को निर्धारित टाटा संस की वार्षिक आम बैठक (एजीएम) होने की संभावना नहीं है। इसका कारण यह है कि सर रतन टाटा ट्रस्ट (एसआरटीटी) महाराष्ट्र के चैरिटी कमिश्नर की ओर से लगाए गए नियामकीय प्रतिबंध चलते अपना प्रतिनिधि नामित नहीं कर पाया है।

बैठक में टाटा संस के चेयरमैन एन चंद्रशेखरन के निदेशक पद पर विचार किया जाएगा। चंद्रशेखरन ने अपना वर्तमान कार्यकाल समाप्त होने के बाद एक और कार्यकाल की मांग न करने का फैसला किया है। हालांकि, टाटा संस ने शेयरधारकों को एजीएम की तिथि में किसी भी बदलाव की सूचना नहीं दी है।

सूत्रों के अनुसार, कंपनी बैठक को आगे बढ़ाने की योजना बना रही है। लेकिन आवश्यक कोरम पूरा नहीं होता है तो इसे स्थगित किया जा सकता है। समस्या एसआरटीटी की बोर्ड बैठक आयोजित करने में असमर्थता से उत्पन्न हुई है, जो टाटा संस में 23.56 प्रतिशत हिस्सेदारी रखता है। यह स्थिति मई में चैरिटी कमिश्नर द्वारा जारी एक आदेश के कारण है, जिसमें उनके बोर्ड की संरचना की जांच की जा रही है।

एसआरटीटी बिना बोर्ड बैठक सर दोराबजी टाटा ट्रस्ट (एसडीटीटी) के साथ मिलकर एक प्रतिनिधि नामित नहीं कर सकता। टाटा संस की एजीएम के कोरम के लिए एसआरटीटी और एसडीटीटी का प्रतिनिधि होना आवश्यक है। एसडीटीटी के पास टाटा संस का 27.98 प्रतिशत हिस्सा है।

टाटा संस के आर्टिकल्स आफ एसोसिएशन के अनुच्छेद 86 के अनुसार, एजीएम में व्यक्तिगत रूप से कम से कम पांच सदस्यों का उपस्थित होना आवश्यक है।

विदेशी रिएक्टरों के लिए भी कड़ी शर्तें

प्रथम पृष्ठ से आगे

ड्राफ्ट नियमों में विदेशी तकनीक वाले रिएक्टरों के लिए भी स्पष्ट शर्तें रखी गई हैं। प्रेट्र के अनुसार, भारत में इस्तेमाल होने वाले ऐसे रिएक्टर का डिजाइन उसके मूल देश की परमाणु नियामक संस्था से मंजूर या प्रमाणित होना चाहिए। साथ ही उस डिजाइन का किसी देश में संचालन का सफल रिकार्ड भी जरूरी होगा। इससे दुनिया में पहले से इस्तेमाल और नियामकीय रूप से प्रमाणित रिएक्टर तकनीक के लिए भारत में प्रवेश का रास्ता आसान हो सकता है।

दशकों बाद बदलेगा परमाणु क्षेत्र का ढांचा: भारत का परमाणु उद्योग लंबे समय से लगभग पूरी तरह सरकारी नियंत्रण में रहा है। 1974 के परमाणु परीक्षण के बाद लगे अंतरराष्ट्रीय प्रतिबंधों के कारण विदेशी परमाणु ईंधन और तकनीक तक पहुंच भी लंबे समय तक सीमित रही। पिछले साल परमाणु ऊर्जा कानून में बदलाव कर निजी कंपनियों के लिए परमाणु परियोजनाओं के निर्माण और संचालन का रास्ता खोला गया, हालांकि लाइसेंसिंग और रणनीतिक परमाणु सामग्री पर सरकारी नियंत्रण बरकरार रखा गया है।

भारत अगले दो दशकों में परमाणु ऊर्जा क्षमता को करीब 12 गुना बढ़ाकर 100 गीगावाट करने का लक्ष्य लेकर चल रहा है। इसके लिए निजी पूंजी और विदेशी तकनीक को महत्वपूर्ण माना जा रहा है। रायटर के अनुसार, अदाणी ग्रीन, टाटा पावर और रिलायंस इंडस्ट्रीज जैसी घरेलू कंपनियों को परमाणु ऊर्जा क्षेत्र में निवेश के लिए आमंत्रित किया गया है।

परमाणु कानून में हालिया बदलावों के तहत दुर्घटना की स्थिति में उपकरण आपूर्तिकर्ताओं की जिम्मेदारी को सीमित किया गया है। लंबे समय से विदेशी कंपनियों की चिंता रहे इस मुद्दे में बदलाव का मकसद जनरल इलेक्ट्रिक, वेस्टिंग हाउस इलेक्ट्रिक और ईडीएफ जैसे वैश्विक परमाणु वेंडरों की भारत में दिलचस्पी बढ़ाना है।

शांति एक्ट के ड्राफ्ट नियम जारी, बीमा-वित्तीय सुरक्षा पर जोर

परमाणु ऊर्जा विभाग ने सस्टेनेबल हार्नेसिंग एंड एडवांसमेंट आफ न्यूक्लियर एनर्जी (शांति) एक्ट, 2025 के तहत भी ड्राफ्ट नियम जारी किए हैं। इनके मुताबिक परमाणु संयंत्र संचालकों को परमाणु नुकसान की स्थिति में बीमा, वित्तीय सुरक्षा या दोनों का संयोजन रखना होगा। इस्तेमाल हो चुका पूरा ईंधन संबंधित स्टोरेज पूल से हटाए जाने तक यह वित्तीय सुरक्षा बनाए रखना जरूरी होगा। केंद्र सरकार हर पांच साल में परमाणु नुकसान के लिए आपरेटर के नागरिक दायित्व की अधिकतम सीमा की समीक्षा करेगी। इसके लिए विशेषज्ञों का समूह गठित किया जाएगा। डेवलपर्स को परमाणु दायित्व, डी-कमीशनिंग और रेडियोधर्मी कचरे के प्रबंधन के लिए वित्तीय सुरक्षा भी बनाए रखनी होगी। इस्तेमाल हो चुके परमाणु ईंधन के सुरक्षित प्रबंधन की जिम्मेदारी भी नियमों में तय की गई है।

साप्ताहिक राशिफल

रविवार, 16 अगस्त, 2026 से शनिवार 22 अगस्त, 2026 तक

पं. बी. बी. शास्त्री 'देवेश'

मेष (चू, चे, चो, ला, ली, लू, ले, लो, आ)
प्रतिस्पर्धा से चिन्ता, विचारों की अधिकता, अर्थसाधन में प्रयास, नकरात्मक कार्य करने वालों से सावधान, निजी संबंधों में सुधार, भवन साजसज्जा का योग, शिक्षा में रुचि, नेत्र, त्वचा विकार योग, प्रणय में सुख, भ्रमण-मनोरजन योग, व्यय अधिक, शुभ अंक 7

वृष (इ, ऊ, ए, ओ, पा, वी, वू, वे, वो)
परिस्थिति के अनुरुप कार्य करें, साझेदारी में सावधानी, धनागम में प्रयास करें, चिन्ता का समाधान, विदेश कार्य में देरी, विशेष व्यक्ति से सहयोग, साधनों की पूर्ति, शिक्षा में एकाग्रता, चयन में देरी, वायु विकार, रक्त विकार योग, अनुबन्ध की प्राप्ति, व्यय अधिक, शुभ अंक 8

मिथुन (का, की, कू, घ, ड, छ, के, को, हा)
कार्य में सलाह से कार्य करे, अर्थसाधन में प्रयास, आत्मविश्वास की वृद्धि, महिला से सहयोग, समस्या का समाधान, आभूषण वस्त्र साजसज्जा योग, सन्तान से सहयोग, रक्त विकार, वायु विकारयोग, दाम्पत्य में सुख, राज्यपक्ष से सहयोग, व्यय अधिक, शुभ अंक 6

कर्क (ही, हू, हे, हो, डा, डी, डू, डे, डो)
कार्य शैली मे सुधार करें, सकारात्मक सोच से युक्त रहें, विदेश कार्य में प्रयास करें, सामाजिक रचनात्मक कार्य में यश, साधनों की पूर्ति, पारिवारिकजनों का सहयोग, शिक्षा में एकाग्रता, मित्रों से लाभ, प्रणय में सुख, धर्म में रुचि, आय में सुधार, शुभ अंक 4

सिंह (मा, मी, मू, मे, मो, टा, टी, टू, टे)
लक्ष्य प्राप्ति में प्रयास, अर्थसाधन में सुधार, धन के आवागमन में सावधानी, पारिवारिक कार्य में प्रयास, भूमि, भवन में साजसज्जा का योग, अध्ययन में रुचि, चयन में सफलता, वाद विवाद से बचे, संयम रखे, अधिकारी से सहयोग, स्थान पद परिर्वतन योग, आय में सुधर, शुभ अंक 5

कन्या (टो, पा, पी, पू, ष, ण, ठ, पे, पो)
प्रतिस्पर्धा से चिन्ता, कार्य क्षेत्र में सहयोग से सफलता, पूंजी निवेश में सावधानी, विदेश कार्य में अवरोध, निजी मतभेद, मानसिक चिन्ता, वाहन साजसज्जा योग, शिक्षा में रुचि, शत्रुपक्ष प्रभावी, समय का सदुपयोग करें, प्रणय में सुख, धर्म में रुचि, अधिकारी से सहयोग, शुभ अंक 8

तुला (रा, री, रू, रे, रो, ता, ती, तू, ते)
अर्थ साधन में प्रयास, कार्य क्षेत्र में सफलता, अतिविश्वास और कल्पना से बचें, सामाजिक कार्य में यश, साधनों की पूर्ति, सन्तान से सहयोग, मित्रों से सहयोग, त्वचा विकार, रक्त विकार प्रभावी, वाद-विवाद में विजय, दाम्पत्य में सुख, आय में सुधार, शुभ अंक 6

वृश्चिक (तो, ना, नी, नू, ने, नो, या, यी, यू)
निर्णय सलाह से करें, लक्ष्य के प्रति सजगता, धनागम में प्रयास, निजी मतभेद समाप्त होंगे, नई युक्ति एवं अनुभव का समावेश करें, शिक्षा में रुचि, चयन में देरी, शत्रुपक्ष प्रभावी, दाम्पत्य में सुख, राज्यपक्ष से अवरोध, स्थान पद परिवर्तन योग, व्यय अधिक, शुभ अंक 2

धनु (ये, यो, भा, भी, भू, धा, फा, ढा, भे)
अर्थसाधन में तत्परता, कार्य क्षेत्र में सफलता, अर्थसाधन में प्रगति, नकरात्मक कार्य करने वालों से सावधान, समाज में यश, स्व :सम्पत्ति की वृद्धि, पारिवारिकजनों का सहयोग, सन्तान से अनबन, चयन में सफलता, वाहन में सावधानी, व्यय अधिक, शुभ अंक 4

मकर (भो, जा, ज, खी, खू, खे, खो, गा, गी)
धनागम में सफलता, साझेदारी में सावधानी, नकारात्मक विचारों से बचें, दिनचर्या व्यस्ततम, पूंजी निवेश में सावधानी, माता-पिता का ध्यान रखें, संबंधों में सुधार, सन्तान से अनबन, मित्रों से लाभ, चयन में सफलता, दाम्पत्य में अनबन, स्थान पद परिर्वतन योग, आय में सुधार, शुभ अंक 5

कुम्भ (गू, गे, गो, सा, सी, सू, से, सा, दा)
जीवन में शांति एवं प्रसन्नता, व्यापारिक क्षेत्र में विस्तार, धन के आवगमन में सावधानी, स्व :सम्पत्ति की वृद्धि, भूमि, भवन कार्य में देरी, अध्ययन में अवरोध, चयन में सफलता, मित्रों से सहयोग, दाम्पत्य में सुख, यात्रा में सावधानी, आय में सुधार, शुभ अंक 1

मीन (दी, दू, थ, झ, दे, दो, चा, ची)
प्रतिस्पर्धा से चिन्ता, धनागम में सफलता, धन के आवागमन में सावधानी, अनुभव एवं युक्ति से कार्य करें, विदेश कार्य में देरी, साधनों की पूर्ति, अध्ययन में रुचि, शत्रुपक्ष परास्त, दाम्पत्य में सुख, राजनैतिक अपयश, अधिकारी से सहयोग, शुभ अंक 7

लोकमत सारांश
जगण्याच्या प्रत्येक पैलूचा सखोल परामर्श

गणेश नाईक यांच्यासाठीचे हे प्रश्न तुमचे की मंदाताईंचे?

अतुल कुलकर्णी
संपादक, मुंबई

अधून मधून

प्रिय खा. नरेश म्हस्के,
नमस्कार.

आपण वनमंत्री गणेश नाईक यांच्या विधानावर दिलेली प्रतिक्रिया ऐकली. आपली प्रतिक्रिया नेमकी कोणासाठी होती? 'लोकप्रतिनिधींनी सामान्य नागरिकांची घरे वाचवायची असतात, घरे तोडण्याची भाषा लोकप्रतिनिधींना शोभत नाही. स्वतःला मुख्यमंत्री होता न आल्याने वैफल्यग्रस्त होऊन गणेश नाईक उपमुख्यमंत्री एकनाथ शिंदे यांच्यावर टीका करीत आहेत...' असे सांगताना आपण 'यापुढे अशी टीका सहन केली जाणार नाही. जशास तसे उत्तर दिले जाईल', असेही सांगितले.

आपल्या या विधानामुळे काही प्रश्न निर्माण झाले आहेत. शिवाय आपली पूर्वीची काही विधाने आपल्या या विधानाशी विसंगत आहेत का याचाही आम्ही अभ्यास करत आहोत. 'घरे तोडण्याची भाषा लोकप्रतिनिधींना शोभत नाही', असा आपला पहिला मुद्दा होता. यामुळे आम्हाला एक प्रश्न पडला आहे. शिवसेनेचे घर तुटले. एकाची दोन घरे झाली. त्या घरावरून आता 'सर्वोच्च' वाद सुरू झाले आहेत. अशावेळी घर तोडण्याची भाषाच नव्हे, तर घर कोणी तोडले, असा प्रश्न निर्माण झाला आहे. त्याचे काय? ते घर तुटल्यामुळे सर्वसामान्य कार्यकर्त्यांच्या घरातही एकाची दोन घरे झाली. जीवाभावाचे कार्यकर्ते एकमेकांच्या जीवावर उठले... एक घर तुटल्यामुळे एवढे सगळे झाले. आता तर गणेश नाईक तर दोन मोठ्या इमारती पाडायचे म्हणत आहेत. त्यातून जे काही होईल ते त्यांचे त्यांना लखलाभ. मात्र, शिवसेनेचे घर तुटले की तोडले? नेमकी परिस्थिती काय निर्माण झाली होती? तुम्हाला जर उत्तर माहिती असेल, तर आम्हाला सांगता का?

तुमचा दुसरा मुद्दा वैफल्याचा होता. 'गणेश नाईक यांना मुख्यमंत्री होता न आल्यामुळे वैफल्यातून ते अशी टीका करत आहेत', असे आपण म्हणालात. मात्र असे वैफल्य फक्त गणेश नाईक यांनाच आले आहे का? वैफल्य आले की काही माणसे खूप बोलतात, काही स्वतःला बंद करून घेतात, तर काही जण आपल्या गावी निघून जातात. हा मुद्दा आम्ही खूप तपशीलवार सांगू शकतो, पण तूर्तास नको. असो.

पहलगाम येथे दहशतवादी हल्ला झाला, तेव्हा महाराष्ट्रात अडकलेल्या पर्यटकांना विशेष विमान पाठवून परत आणले गेले. तेव्हा आपण, 'जे लोक कधीही विमानात बसले नाहीत, त्यांना उपमुख्यमंत्री एकनाथ शिंदे यांनी विमानात बसवून आणले', असे वक्तव्य केले होते. ते संवेदनशील होते की असंवेदनशील? या विधानाचा आमचा शोध अजून पूर्ण झालेला नसताना आपले वरील विधान आले.

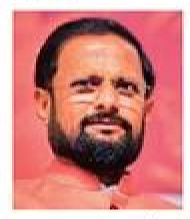

स्वातंत्र्यवीर सावरकर यांचा अपमान करणाऱ्या कर्नाटकातील काँग्रेस मंत्री दिनेश गुंडूराव यांनी २४ तासांत माफी मागावी, अन्यथा महाराष्ट्रात फिरू देणार नाही. कॉमेडियन कुणाल कामरा याने मध्यंतरी जी काही विधाने केली, तेव्हा आपण कुणाल कामरा यालाही महाराष्ट्रात फिरू देणार नाही, असा इशारा दिला होता. मात्र, दोघेही महाराष्ट्रात बिनधास्त कुठेही फिरत आहेत. अशाने आपल्याला लोक गांभीर्याने घेतील का? आपला हितचिंतक म्हणून हा प्रश्न मनात आला. कुणाल भाडोत्री कॉमेडियन आहे. सापाच्या शेपटीवर पाय देण्याचा प्रयत्न करू नका. फणा काढला तर भारी पडेल, असे आपण म्हणाला होतात. नेमक्या कोणत्या सापाबद्दल आपण बोलत होता? कुणालने ज्यांच्यावर टीका केली, त्यांना तर आपल्याला साप म्हणायचे नव्हते ना? असो.

गणेश नाईक यांना तुम्ही काही थेट प्रश्न विचारणार होतात, त्याचे काय झाले? तुम्ही पाठवलेल्या कथित प्रेस नोटमध्ये आम्हाला हे प्रश्न एका कोपऱ्यात दिसले. तुम्ही विसरले असाल, म्हणून तुम्हाला पाठवतो. हे ते प्रश्न -

- फक्त निवडणुका आल्या की, एफएसआयचा विषय घेतला जातो, निवडणूक संपली की, धोकादायक इमारतीमधील रहिवाशांना वाऱ्यावर का सोडले जाते? यापूर्वीही गणेश नाईक मंत्री होते, त्यांनी एफएसआयचा प्रश्न का सोडवला नाही?
- माथाडी कामगार व गरिबांच्या प्रकल्पाला राजकीय हेतूने आम्ही विरोध करत आहोत, असे जर तुम्हाला वाटत असेल, तर अडवली-भूतावलीमधील शेकडो एकर वन जमीन निवासी करण्याचा प्रयत्न कोणी केला? रेतीबंदर एमआयडीसीमध्ये अतिक्रमण कोणी केले होते?
- महापालिकेच्या स्थापनेपासून गणेश नाईक यांची सत्ता आहे. मग नवी मुंबईतील भूमिपुत्रांचे प्रश्न गंभीर का झाले? या लोकांनी गरजेपोटी बांधलेली घरे नियमित का केली नाहीत? घरे नियमित करण्याचे धोरण कोणी आणले?
- महापालिकेतील कर्मचाऱ्यांच्या निवृत्तीचे वय ५८ वरून ६० करण्याचा ठराव, नगर विकास विभागाच्या उपसंचालकांना महापालिकेतून परत पाठवण्याचा ठराव, विधी अधिकाऱ्यांना निलंबित करण्याचा ठराव, महापालिकेने सुरू केले..? भरती प्रक्रिया रद्द करण्याचा ठराव असे आपण आपल्या अधिपत्याखाली असलेल्या महापालिकेचे सगळे ठराव राज्य सरकारने रद्द का केले..? याचा अर्थ महापालिकेत आपण जे पदाधिकारी बसवले आहेत, ते सक्षम नाहीत का?

हे प्रश्न तुम्हीच काढलेले आहेत की मंदाताई म्हात्रे यांनी काढलेले आहेत? आमच्या लक्षात आले नाही, म्हणून विचारले. बाकी तुम्ही जे भांडत आहात तसेच भांडत राहा. भांडा, सौख्यभरे... हेच खरे!

तुमचाच, बाबूराव

ताजा विषय

लग्नासाठी झटपट वजन घटवण्याचा मोह

तत्काळ प्रभावाने वजन नियंत्रणात आणण्याच्या नादात त्वरित परिणाम दाखवणारी औषधे घेतल्याने गंभीर आरोग्य समस्या वाढत आहेत. लग्न आणि इतर सामाजिक प्रसंगी सडपातळ दिसण्यासाठी लोकांचा त्याकडे वाढता कल आहे, पण यामुळे धोका निर्माण होण्याची शक्यता आहे.

डॉ. संजय बोरुडे
स्थूलत्व सर्जन

लग्नाचा दिवस अविस्मरणीय करण्यासाठी वधू-वरांकडून अनेक महिन्यांपासून तयारी सुरू केली जाते. कपडे, दागिने, मेकअप, त्वचेची निगा यांसोबतच आता शरीरयष्टीकडेही विशेष लक्ष दिले जात आहे. मात्र, कमी कालावधीत वजन कमी करण्याच्या नादात आहार, व्यायाम आणि जीवनशैलीतील बदलांऐवजी वजन कमी करण्यासाठी वापरल्या जाणाऱ्या औषधांचा, गोळ्यांचा तसेच इंजेक्शनचा आधार घेण्याचा कल वाढताना दिसत आहे. विशेष म्हणजे केवळ वधू-वरच नव्हे, तर काही ठिकाणी त्यांच्या आई-वडिलांपासून सासू-सासऱ्यांपर्यंत वजन कमी करण्यासाठी अशा औषधांची मागणी होत आहे.

टिर्झेपाटाइड आणि सेमाग्लुटाइड यांसारखी औषधे मधुमेह, लठ्ठपणा आणि त्यातून उद्भवणाऱ्या चयापचयाशी संबंधित समस्यांच्या उपचारांसाठी विकसित करण्यात आली आहेत. मात्र, सध्या त्यांची चर्चा केवळ वैद्यकीय क्षेत्रापुरती मर्यादित न राहता सौंदर्य आणि जीवनशैलीच्या क्षेत्रातही मोठ्या प्रमाणात होत आहे. ही औषधे झटपट सडपातळ आणि आकर्षक दिसण्यासाठीचा मार्ग म्हणून वापरण्याचा उद्देश नाही. काही व्यक्तींमध्ये या औषधांमुळे वजन कमी होऊ शकते; मात्र, त्यांची जागा सकस आहार, नियमित व्यायाम, पुरेशी झोप आणि निरोगी जीवनशैली घेऊ शकत नाही.

रुग्णाची निवड अतिशय महत्त्वाची

लग्न, सुट्टी किंवा इतर सामाजिक कार्यक्रमांच्या तयारीसाठी या औषधांबाबत विचारणा करणाऱ्या रुग्णांच्या संख्येत वाढ झाली आहे. समाजमाध्यमांवरील प्रसिद्ध व्यक्तींचे अनुभव आणि झटपट वजन कमी झाल्याचे दाखवणारे संदेश पाहून अनेकांना तशाच परिणामांची अपेक्षा निर्माण होते.

त्यामुळे रुग्णांशी होणाऱ्या चर्चेत आता वास्तववादी अपेक्षा, संभाव्य दुष्परिणाम, पोषकतत्त्वांची कमतरता, स्नायूंचे प्रमाण कमी होण्याची शक्यता आणि औषधोपचाराची वैद्यकीय गरज यावर अधिक भर दिला जात आहे. ही औषधे घेताना रुग्णाची निवड अतिशय महत्त्वाची असते. या विषयातील तज्ज्ञच ते औषध कोणासाठी योग्य आहे की नाही ते सांगू शकतात.

औषधांसाठी अनेक कंपन्या बाजारात

या औषधांची काही विशिष्ट कंपन्यांकडे मक्तेदारी होती. मात्र, त्याचे पेटंट संपले आहे. त्यामुळे अनेक कंपन्या ही औषधे विविध नावाने बाजारात विक्रीसाठी घेऊन येत आहेत.

या औषधांच्या मागणीत वाढ झाल्याने निकृष्ट दर्जाची औषधे बाजारात येण्याचा धोका निर्माण होतो. त्यामुळे डॉक्टरांनी दिलेलीच औषधे घ्यावीत.

गंभीर गुंतागुंत होण्याचा धोका

वजन कमी करण्यासाठी अशा औषधांची गरज प्रत्येक व्यक्तीसाठी सारखी नसते. व्यक्तीची उंची, वजन, शरीरवस्तुमान निर्देशांक, इतर आजार, सुरू असलेली औषधे आणि एकूण आरोग्यस्थिती लक्षात घेऊनच उपचारांची आवश्यकता ठरवली पाहिजे.

गरज नसताना किंवा डॉक्टरांच्या सल्ल्याशिवाय औषधांचा वापर केल्यास मळमळ, उलट्या, अतिसार, बद्धकोष्ठता आणि पोटदुखी यांसारखे दुष्परिणाम होऊ शकतात. काही रुग्णांमध्ये अधिक गंभीर गुंतागुंत होण्याचा धोकाही असू शकतो.

सुरक्षित पद्धतीने वजन कमी करा...

लग्नाच्या काही आठवडे किंवा महिन्यांपूर्वी झटपट वजन कमी करण्याऐवजी दीर्घकालीन आणि सुरक्षित पद्धतीने वजन नियंत्रित करण्यावर भर देणे अधिक योग्य आहे.

संतुलित आहार, नियमित व्यायाम, पुरेशी झोप आणि आवश्यक असल्यास आहारतज्ज्ञ व डॉक्टरांचा सल्ला हा त्यासाठी सुरक्षित मार्ग आहे. समाजमाध्यमांवरील जाहिराती, मित्र-मैत्रिणींचे अनुभव किंवा ओळखीच्या व्यक्तीने सांगितलेल्या डोसवर विश्वास ठेवून अशी औषधे घेणे धोकादायक ठरू शकते.

एआय इमेज

लग्नाची केवायसी केली का?

लग्न ठरल्यानंतर मुलगी किंवा मुलगा कसा वागेल, याविषयी पालकांच्या मनात कायम चिंता असते. राज्यभर गाजलेले केतन अग्रवाल आणि सिया गोयल प्रकरण असो किंवा लग्नाचे आमिष दाखवून लुटले जाणारे मुलाचे किंवा मुलीचे पालक असो, दिवसेंदिवस हा प्रश्न बिकट होत आहे. लग्न ठरवण्याआधी कोणती काळजी घ्यायला हवी, दोन कुटुंबे एकत्र येताना त्यांच्यातील नाते वृद्धिंगत होण्यासाठी काय करावे, याविषयी दिशादर्शन करणारा हा लेख.

संजय गोविलकर
माजी अपर पोलिस अधीक्षक, मुंबई

लग्न हे अत्यंत पवित्र आणि विश्वासाचे नाते आहे. आयुष्यभर साथ देणारे, पुढील पिढी घडवणारे आणि दोन कुटुंबांना जोडणारे हे बंधन आहे. मात्र नुकत्याच घडलेल्या एका घटनेने मुला-मुलींच्या पालकांच्या मनात चिंता निर्माण झाली आहे. ही चिंता स्वाभाविकच म्हणावी लागेल. पुण्याजवळील प्रसिद्ध लोहगड किल्ल्यावर घडलेली ती घटना अपघात नसून एक भयानक हत्याकांड असल्याचे समोर आले आहे. केतन विशाल अगरवाल (वय २६, व्यावसायिक) याला त्याची होणारी पत्नी सिया गोयल (वय २०) आणि तिचा प्रियकर चेतन चौधरी (वय २२) यांनी १८ जून २०२६ रोजी गडावरून तब्बल ४०० फूट खोल दरीत ढकलून दिले. ही बातमी आणि त्यानंतर झालेले अनेक तपशीलवार खुलासे तुम्ही 'लोकमत'मधून वाचले असतीलच. अशा घटना घडतात तेव्हा लग्न ठरवण्याच्या प्रक्रियेतील विश्वासार्हतेवरच प्रश्नचिन्ह निर्माण होणे स्वाभाविक आहे.

अजून एक खरी घटना सांगतो. २०२१ मध्ये मध्य विभाग सायबर पोलिस ठाण्यात वरिष्ठ पोलिस निरीक्षक म्हणून काम करताना एक ३०-३२ वर्षांची तरुणी मला भेटण्यासाठी थांबली होती. महिला अधिकाऱ्याकडे तिची अडचण सांगण्याऐवजी ती मलाच भेटण्यावर ठाम होती. मी तिला भेटलो. डोळ्यांत अश्रू घेऊन तिने सांगितलेली कहाणी ऐकून मीही थक्क झालो. एका मॅट्रिमोनियल संकेतस्थळावर - जिथे घटस्फोटित वधू-वरांसाठी वेगळा कॉलम असतो - तिची ओळख कथित 'राजघराण्यातील' मुलाशी झाली. फोटो पाहणे, नंबर एक्सचेंज करणे आणि प्रत्यक्ष भेटी यातून तीन-चार भेटींतच त्याने तिला प्रभावित केले. घरच्यांना भेटण्याआधी सहा महिने एकमेकांना समजून घेऊ, असे सांगून त्याने तिचा विश्वास कमावला. मग हळूहळू आईच्या कॅन्सरच्या उपचारासाठी, व्यवसायातील तोट्यासाठी आणि विकलेल्या गाडीसाठी तिच्याकडून पैसे उकळले. नवी गाडीही घेतली. एवढे होऊनही लग्न तर दूरच, तो भेटणेही टाळू लागला, तेव्हा ती पोलिस ठाण्यात आली.

तपास सुरू केल्यावर धक्कादायक सत्य समोर आले. हा मुलगा संकेतस्थळावर स्वतःला घटस्फोटित दाखवून तरुण घटस्फोटित स्त्रियांशी संपर्क साधायचा. राजघराणे, गाडी-बंगला व मोठा व्यवसाय असल्याचे भासवून त्यांचे आर्थिक, मानसिक व शारीरिक शोषण करायचा. वारंवार मोबाइल बदलणाऱ्या, रोज वेगळ्या ठिकाणी राहणाऱ्या या आरोपीला पथकाने शर्थीचे प्रयत्न करून अटक केली. त्याचा मोबाइल तपासताच तो महाराष्ट्रभर अनेक मुलींना असेच फसवत असल्याचे उघड झाले. सुरुवातीला (Note: 'सुरू' is correct, 'सुरु' is wrong) पुढे यायला कचरणाऱ्या पीडित मुलींना समजावून विविध जिल्ह्यांत त्याच्याविरुद्ध तक्रारी दाखल करून त्याला अटक करण्यात आली; तो अजूनही कारागृहात आहे.

पडताळणी कशी कराल?

१. संबंधित व्यक्तीच्या कंपनीतील एचआरकडून आर्थिक स्थिती व स्वभावाची माहिती घ्या.
२. **नातेवाईक व गावातील प्रतिष्ठित व्यक्ती, पोलिस पाटील यांच्याकडून खातरजमा करा.**
३. सोशल मीडियावर उपलब्ध माहिती व गुन्हेगारी पार्श्वभूमी तपासा.
४. **शाळा-कॉलेजमधून शिक्षणाची खात्री करा.**
५. प्रत्यक्ष मुलगा/मुलगी व त्यांच्या आई-वडिलांना भेटल्याशिवाय विश्वास ठेवू नका.
६. **अनोळखी किंवा एआय निर्मित प्रोफाइलवर भुलू नका.**
७. मुला-मुलींनी आई-वडिलांशी संवाद ठेवून एकत्रच निर्णय घ्यावा.

कव्हर स्टोरी

एआय इमेज

या दोन्ही घटनांवरून एक गोष्ट स्पष्ट होते की, लग्न ठरवण्यापूर्वी मुला-मुलींची पूर्ण पडताळणी करणे अत्यंत आवश्यक आहे. खासगी गुप्तहेरांची मदत घेता येऊ शकते. मात्र, अशा गुप्तहेर संस्था महागड्या असतात आणि सर्वसामान्यांना परवडणाऱ्या नसतात. तरी काही सोप्या मार्गांनी पडताळणी शक्य आहे.

गुप्तहेराकडे जाताय? मग हे समजून घ्या...

गुप्तहेरांची मदत घेण्यापूर्वी आपल्याला 'डिजिटल पर्सनल डेटा प्रोटेक्शन कायदा २०२३ चे ज्ञान असणे गरजेचे आहे. मोबाईल, वेबसाइट, ॲप, बँक, सोशल मीडिया इत्यादी ठिकाणी दिलेली वैयक्तिक माहिती सुरक्षित ठेवणे हा या कायद्याचा उद्देश आहे.

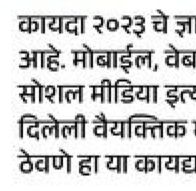

नाव, मोबाइल नंबर, ई-मेल, आधार क्रमांक, फोटो, लोकेशन, आर्थिक माहिती इत्यादी डिजिटल स्वरूपातील माहितीचा वैयक्तिक माहितीत समावेश होतो.

कोणतीही संस्था किंवा कंपनी तुमचा डेटा तुमची स्पष्ट संमती घेऊनच गोळा करू शकते. जर कोणी चुकीच्या मार्गाने डेटा गोळा करण्याचा प्रयत्न केला तर त्यांना मोठा दंड होऊ शकतो.

यापूर्वीही चुकीच्या पद्धतीने माहिती गोळा करताना अनेक गुप्तहेर अडचणीत आले आहेत. त्यामुळे योग्य त्या संस्थेकडे जावे. कोणी पोलिस मित्र असतील तर त्यांच्याकडून माहिती मिळवा.

पावसाळा सुरू झालाय, अन्न-धान्य सांभाळा

डॉ. रोहिणी कुलकर्णी (पांढरे)
सदस्या, मायक्रोबायोलॉजिस्टस् सोसायटी, इंडिया

पावसाळ्यात ढगाळ वातावरण आणि आर्द्रतेमुळे घरातील गहू, ज्वारी, डाळी, शेंगदाणे, खोबरे, तांदूळ, मका आदी साठवणुकीचे अन्न-धान्य ओलावा शोषून घेतात. त्यामुळे त्यांची योग्य साठवणूक करणे जिकिरीचे ठरते. दमट हवेमुळे या अन्नपदार्थांमध्ये सूक्ष्मजीवांच्या वाढीसाठी अनुकूल वातावरणनिर्मिती होते आणि त्यात कीटक आणि बुरशी वाढीस लागतात. बुरशीच्या वाढीमुळे अन्नपदार्थांचे फक्त पोषणमूल्य कमी होते असे नाही तर अतिशय गंभीर स्वरूपाची अन्न विषबाधाही होऊ शकते.

सूक्ष्मजीव अन्नपदार्थांमध्ये विषारी घटकांची निर्मिती करतात. असे प्रदूषित अन्न खाल्ल्याने आरोग्यावर परिणाम होतो. बुरशीद्वारे तयार झालेल्या विषाला मायकोटॉक्सिन असे संबोधले जाते आणि अन्नात तयार झालेले हे बुरशीजन्य विष अन्न शिजवल्याने, तळल्याने, भाजल्यानेही नष्ट होत नाही. अफ्लॉटॉक्सिन हे एक घातक बुरशीजन्य विष असून ते अस्परजिलस फ्लेवस या बुरशीमुळे तयार होते. ही बुरशी जेव्हा अन्नपदार्थात वाढते तेव्हा ती मुख्यत्वे मखमली, हलक्या पिवळसर रंगछटांपासून पोपटी हिरवट अशी असते आणि नंतर बिजाणू तयार होताना काळसर रंगाची होते. कधीकधी अन्नधान्यात दृश्य स्वरूपात बुरशी जरी आढळून आली नाही तरी जसे शेंगदाणे खवट लागणे म्हणजे त्यात बुरशीचा प्रादुर्भाव झालेला असतो.

आपले आरोग्य आपल्या घरात

बुरशीजन्य विषाचे घातक परिणाम असे...

अफलाटॉक्सिनचे अनेक प्रकार आहेत. त्यापैकी बी१, बी२, जी१ आणि जी२ हे अधिक घातक असतात. या प्रकारच्या अन्न विषबाधेची लक्षणे उलट्या होणे, रक्तस्राव या सामान्य त्रासापासून ते यकृत, जनुक, मूत्रपिंडाशी संबंधित रोग होणे, जनुकाशी निगडित रोगामुळे जन्मजात दोष निर्माण होणे, रोगप्रतिकारक शक्ती कमी होणे, मुलांमध्ये वाढ खुंटणे ते कर्करोग निर्मितीसाठी कारणीभूत होणे इतके गंभीर असतात.

राष्ट्रीय व आंतरराष्ट्रीय मान्यताप्राप्त प्रमाणानुसार एक किलोग्रॅम धान्यामध्ये एक मिलिग्रॅमपेक्षा जास्त विष असल्यास ते अन्नपदार्थ खाण्यास योग्य ठरत नाही.

बुरशीजन्य विषबाधेपासून संरक्षणासाठी हे करा...

१. नेहमी उत्तम, दर्जेदार, बुरशीमुक्त, रंग न बदललेले, न आक्रसलेले अन्नधान्य खरेदी करावे.

२. अन्नाची साठवण थंड आणि कीटकमुक्त परिस्थितीत करावी.

३. वेळोवेळी अन्नधान्याची तपासणी करावी आणि बुरशी आढळून आली तर त्या बुरशीजन्य वस्तू ताबडतोब काढून टाकाव्यात.

४. साठवणूक करताना वातावरणातील ओलावा शोषून घेणारे सिलिका जेल पॅकेट अथवा हवाबंद डबे वापरावेत.

चिंतन

युवाओं की उम्मीदों को लगेंगे पंख

देश की युवा आबादी को विकास की सबसे बड़ी ताकत मानते हुए प्रधानमंत्री के स्वतंत्रता दिवस संबोधन में युवाओं से जुड़े कई महत्वपूर्ण ऐलान किए गए। एक साल में एक करोड़ युवाओं को आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस यानी एआई का प्रशिक्षण देने और प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी करने वाले विद्यार्थियों के लिए मुफ्त ऑनलाइन कोचिंग की व्यवस्था शुरू करने की घोषणा ऐसे समय में हुई है, जब रोजगार, कौशल और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा युवाओं की सबसे बड़ी जरूरतों में शामिल हैं। इन घोषणाओं में संभावना बहुत बड़ी है, लेकिन इनकी सफलता का पैमाना घोषणाओं की संख्या नहीं, बल्कि जमीन पर मिलने वाला अवसर होगा। एआई दुनिया की अर्थव्यवस्था और रोजगार के स्वरूप को तेजी से बदल रहा है। आने वाले समय में पारंपरिक नौकरियों के साथ नए तरह के रोजगार और उद्यम के अवसर पैदा होंगे। ऐसे में एक करोड़ युवाओं को एआई कौशल से जोड़ने का लक्ष्य भारत को भविष्य की तकनीकी अर्थव्यवस्था में मजबूत स्थिति दिला सकता है। लेकिन प्रशिक्षण केवल प्रमाणपत्र बांटने तक सीमित नहीं होना चाहिए। युवाओं को वास्तविक परियोजनाओं, उद्योग की जरूरतों और रोजगार के अवसरों से जोड़ना होगा। प्रशिक्षण के बाद यदि युवा नौकरी या अपना उद्यम शुरू करने में सक्षम होते हैं, तभी इस पहल का वास्तविक प्रभाव दिखाई देगा। मुफ्त ऑनलाइन कोचिंग की घोषणा भी सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है। प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी आज कई परिवारों के लिए बड़ा आर्थिक बोझ बन चुकी है। ऑनलाइन मुफ्त कोचिंग व्यवस्था गुणवत्तापूर्ण अध्ययन सामग्री और विशेषज्ञ मार्गदर्शन को छोटे शहरों, कस्बों और गांवों तक पहुंचा सकती है। हालांकि इसके लिए डिजिटल सुविधाओं की उपलब्धता, अच्छे शिक्षकों की गुणवत्ता और नियमित मार्गदर्शन सुनिश्चित करना जरूरी होगा। युवाओं के लिए सबसे बड़ी चुनौती केवल परीक्षा पास करना नहीं, बल्कि बदलती अर्थव्यवस्था के अनुरूप खुद को तैयार करना है। इसलिए शिक्षा व्यवस्था को डिग्री केंद्रित होने के बजाय कौशल केंद्रित बनाना होगा। 2047 तक भारत को विकसित राष्ट्र बनाने के लक्ष्य में युवा केवल लाभार्थी नहीं, बल्कि सबसे महत्वपूर्ण भागीदार हैं। प्रधानमंत्री ने कार्य संस्कृति और सोच बदलने की बात कही है। इसका अर्थ युवाओं के लिए अवसरों का विस्तार भी होना चाहिए। यदि देश को अगले कुछ दशकों में दुनिया की अग्रणी अर्थव्यवस्थाओं में शामिल होना है तो युवाओं को रोजगार खोजने वालों से आगे बढ़ाकर रोजगार पैदा करने वालों में बदलना होगा। इसके लिए स्टार्टअप, छोटे उद्योग, नवाचार और स्वरोजगार के लिए आसान वित्त और बाजार उपलब्ध कराना होगा। बड़े सपने तभी पूरे होते हैं जब उन्हें मजबूत तैयारी और निरंतर मेहनत का आधार मिलता है। युवाओं के लिए घोषित योजनाएं भारत की भविष्य की क्षमता को मजबूत करने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम हो सकती हैं। जरूरत इस बात की है कि इनका क्रियान्वयन पारदर्शी, गुणवत्तापूर्ण और परिणाम आधारित हो। भारत की युवा शक्ति के पास ऊर्जा भी है और प्रतिभा भी। उसे सही दिशा, सही कौशल और समान अवसर मिल जाएं तो विकसित भारत का सपना महज संकल्प नहीं रहेगा। सचमुच, युवाओं की उम्मीदों को लगेंगे पंख, और इन्हीं पंखों से भारत 2047 की नई ऊंचाइयों तक उड़ान भर सकेगा।

विशेष
सुनील मिनोचा

बंटवारे का असहनीय दर्द

1947 का विभाजन केवल देश की सीमाओं का बंटवारा नहीं था, यह लाखों परिवारों के घर, जमीन, कारोबार और रिश्तों के उजड़ने की त्रासदी भी थी। पाकिस्तान से भारत आए पंजाबी शरणार्थी अपने साथ दर्दनाक यादें और संघर्ष की कहानियां लेकर आए। किसी ने उपजाऊ जमीन छोड़ी, किसी ने कारोबार और संपत्ति, तो किसी ने अपने प्रियजनों को हमेशा के लिए खो दिया। यमुनानगर और आसपास बसे अनेक परिवारों ने शून्य से अपना जीवन दोबारा शुरू किया और मेहनत के बल पर नई पहचान बनाई। उनकी आंखों में आज भी उस दौर की पीड़ा ताजा है। विभाजन की ये व्यक्तिगत गाथाएं इतिहास के उन पन्नों को सामने लाती हैं, जिन्हें आने वाली पीढ़ियों के लिए याद रखना जरूरी है।

पाकिस्तान से यहां बसे शरणार्थी, खासकर पंजाबी लोग, बंटवारे के दर्द को आज तक नहीं भूले हैं। जब कोई नाना-नानी, दादा-दादी अपनी भावी पीढ़ी को उनके साथ हुई लूटमार, जुल्म-शोषण की दास्तान सुनाते, तो उनकी आंखों में आंसू आ जाते। किसी ने अपना कोई सगा खो दिया था। कोई जान बचाने की खातिर धर्म परिवर्तन कर लिया या शादी कर ली। बातचीत करने पर किसी व्यक्ति को वहां के पंजाब की अपनी उपजाऊ जमीनों पर गर्व था तो कोई अपने पशुधन की गिनती बताता है। किसी को अपनी साइकिल रह जाने, तो किसी को अपना अच्छी नस्ल का घोड़ा खोने का भी दुख था। किसी को अपनी खूब चलती ड्राई-फ्रूट की दुकान, कोई आटा-चक्की, कोई माल से भरी दुकानों, किसी को अनाज मंडी में आढ़त की दुकान, तो कोई रूई की बड़ी फैक्टरी और माल से भरे गोदाम खोने का दुख था। ऐसी बातें सुनने को मिलीं।अधिकांश लोग प्रेमपूर्वक संयुक्त परिवार में रहना पसंद करते थे। इकट्ठा ही व्यापार करते थे। बुजुर्गों के नाम पर अपनी फर्म खोलते थे। यहां काफी देर बाद यदि किसी को कृषि योग्य जमीनें सरकार से मिलीं तो अक्सर बुजुर्ग कहते थे- ₹वहां जमीनें यदि एक रुपये वाली थीं तो यहां उन्हें चवन्नी वाली से गुजारा करना पड़ रहा है। फिर भी उन्होंने अपनी मेहनत से उन्हें हरा-भरा कर दिया।उस समय कई लोग वापस जाने की आस से बॉर्डर के शहरों में बस गए। कई लोग करनाल के पास जीटी रोड पर बसे। तब हरियाणा-पंजाब भी संयुक्त पंजाब ही होता था। पाकिस्तान में कई लोग मुसलमान पड़ोसियों के सहारे अपना घर देखभाल के लिए छोड़कर आए। कईयों को रास्ते में मारकर सोना-चांदी लूट लिया गया। कई बहू-बेटियों की अस्मत लूटी गई। कई स्थानों पर रेलगाड़ियां रोककर लाचार सवारियों का, मुख्यतः मुसलमानों द्वारा, कत्लेआम किया गया। कई जगह लोगों को लाशों के ढेर से गुजरना पड़ा। ऐसा इतिहासकार बताते हैं।यह विभाजन विभीषिका 1947 की घटना पूरे विश्व को हैरान कर देने वाली है। जब हिंदू-मुस्लिम, सिख के सैकड़ों साल के लंबे संघर्ष के बाद मिलकर आजादी प्राप्त की, परंतु बाद में बंटवारा धर्म की आड़ में राजनेताओं ने कर दिया, ताकि उनकी कुर्सी बची रहे। इससे आपसी सौहार्द भी खत्म हो गया। जिसमें हिंदुओं को अपनी जगह, घर-बार छोड़ना पड़ा और धन के लालच में पलायन भी खून-खराबे के बीच हुआ, जिसमें लाखों बेगुनाह धर्म की आड़ में मारे गए। यूं पड़ोसी ने पड़ोसी को धोखा दिया। बहू-बेटियों की इज्जत लूटी गई। इंसानियत शर्मसार हुई, जो अब तक नफरत की आग में कई बार युद्ध का रूप लेती रही है। अब भी दोनों पक्ष बदले की भावना से युद्ध में शामिल होते हैं। सर्वे बताता है कि हरियाणा के यमुनानगर में काफी पंजाबी परिवार रहते हैं। ज्यादातर लोग पाकिस्तान के सरगोधा जिले के हैं। जब पंजाब में जमीनें अलॉट करने के लिए नहीं बची थीं तो संयुक्त पंजाब में अब्दुलापुर में सरकार ने जमीनें दीं। पंजाबियों ने यहां अपनी अथक परिश्रम से हरी-भरी उपजाऊ भूमि बना दी, जो बाद में यमुनानगर कहलाया। पंजाबियों ने अपनी मेहनत से हर क्षेत्र में तरक्की की व देश-विदेश में नाम कमाया। मुझे यहां सिल्लावाली-फरूका से आए संयुक्त परिवार, जो लाला हरनाम दास, मैसर्ज मोती राम लद्दा राम फर्म से ताल्लुक रखता था, के बारे में जानने का

अवसर मिला। अब बच्चे-बच्चे संग अलग-अलग घर में रह रहे थे। यह सब बुजुर्ग मिनोचा परिवार से ताल्लुक रखते थे। उनके घरों में जाकर पूछकर तथ्य इकट्ठे करने की कोशिश लेखक ने की है। कृष्ण लाल ने बताया- तब मैं नौवीं कक्षा में पढ़ता था, जब हिंदुस्तान-पाकिस्तान बना। उस समय स्कूल में छुट्टियां थीं। हम सपरिवार हरिद्वार, ऋषिकेश अपनी माता, बहन व अन्य सदस्यों के साथ आए थे। फरूके में हमारी अंदाजन 250 किले जमीन संयुक्त परिवार की थीं। हमारे पिता लाला हरनाम दास, जो सरपंच के रूप में भी जाने जाते थे, ने पाकिस्तान के फरूका रेलवे स्टेशन के पास कॉटन मिल की स्थापना की थी। जिसमें तब 150 के करीब मुसलमान कर्मचारी काम करते थे। नौकरी पर मामा जी को भी साथ रखा था। कर्मचारियों को घर में चलने वाले लंगर में उन्हें भी बुलाया जाता था। घर में कई गाय-भैंसें रखी थीं। दूध कभी बेचते नहीं थे। दूध कोई भी चाहे निकालकर ले जा सकता था। पढ़ाई के बारे उन्होंने बताया कि मेरी उर्दू की लिखाई अच्छी थी। मैं अपने मास्टर जी की इज्जत करता था। उनके घर कभी-कभार गन्ने देने भी चला जाता था। उस समय जिले में किसी-किसी के पास साइकिल होती थी तो वह अमीर समझा जाता था। मेरे पास उस समय रैलीज की साइकिल थी। हमारे पिता ने बड़े भाई लाला लाजपत राय को अनाज की दुकान खोल दी थी। पाकिस्तान में लुथड़ा परिवार में उनकी शादी भी कर दी थी। उस समय दोहरी रिश्तेदारी होती थी।₹श्री लाजपत राय की पत्नी श्रीमती कृष्णा ने बताया- विभाजन के समय हमारे गोदाम गेहूं से भरे पड़े थे। ससुर की रूई की मिल थी। कई कच्ची रूई के गोदाम थे। यदि घर खोजें तो कहीं न कहीं पैसे ढूंढने से मिल जाएं। मेरे फिर जाने पर कृष्ण लाल ने बताया, जब पाकिस्तान बना तो पिता जी ने हवाई जहाज से दोनों को हिंदुस्तान भेज दिया था। हमारे पिता लाला हरनाम दास व उनके तीन भाई अपने परिवारों को गुरुओं के यहां हरिद्वार छोड़ने गए। फिर दोबारा पाकिस्तान फैक्टरी और जमीनों की दो ग्रुपों में रखवाली के लिए गए। उनमें अपने इलाके में जाते किसी किस्म का भय नहीं था, जैसे सभी अपने हों। लाला हरनाम दास की पत्नी केसरा बाई पुलिस सुरक्षा में संस्कार करने हरिद्वार गई थीं और हरिद्वार में सबको पता चला। बाद में हमारे बड़े जीजा द्वारका दास बत्तरा काम के सिलसिले में पंजाब होशियारपुर चले गए। फिर हम भी सभी वहां चले गए। वहां सात साल रहे। मेरा विवाह भी वहीं हुआ, जिसके लिए बारात अंबाला कैंट गई थी। मेरा होशियारपुर जीजा के साथ चीनी का डिपो था। बाद में जमीनें यमुनानगर के मंडोली गांव अलॉट हुईं। यहां नहीं हुईं। सभी भाइयों ने आपस में जमीनें बांटकर रहने लगे। वहीं घर बनाए व दुकानें कीं। फरूका से आए पंडित खेम चंद खेमा से मिलाया गया, जो पाकिस्तान में मिनोचा परिवार के पंडित थे व यमुनानगर बसकर दो बड़े भाइयों के घर रोटी लेने जाते रहे हैं। पंडित खेमा ने बताया- वहां छोटी टाइलों से बना इस परिवार का मजबूत घर तीन मंजिला था। बहुधा सम्पन्न परिवारों ने अपने आश्रितों के लिए कोई आर्थिक सहायता नहीं मांगी। जो हाथ देने वाले हों, वो लेने वाले नहीं हो सकते।देश की आजादी में इनका भी सक्रिय रोल रहा है, पर कोई स्वतंत्रता सेनानी पेंशन नहीं मांगी, जैसे कि कईयों को मिलती है। आने वाली पीढ़ी को इनकी दुख भरी गाथा सुनकर सीख लेनी चाहिए। चाहे यहां आकर पंजाबियों ने अपनी मेहनत के बलबूते अपने को फिर से स्थापित कर लिया है। वे विश्व के हर कोने में पहुंच गए हैं। परंतु दिल पर कहीं न कहीं चोट है। वे 1947 की इस त्रासदी को नहीं भूल पाए हैं।निस्संदेह विश्व की ऐसी घटना थी, जो आजादी प्राप्त होने के बाद भी स्थान परिवर्तन की कहीं नहीं घटी। जो सोचने को मजबूर करती है।

(लेखक स्वतंत्र स्तंभकार हैं, ये उनके अपने विचार हैं।)

लेख पर अपनी प्रतिक्रिया haribhoomi@gmail.com पर दे सकते हैं।

बलिदान
निरंकार सिंह

बाबू जगत सिंह 1799 के विद्रोह के महानायक

भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन विभिन्न प्रकार के क्रियाकलापों और घटनाओं की एक श्रृंखला थी, जिसका अंतिम उद्देश्य भारत में ब्रिटिश शासन को समाप्त करना था। यद्यपि सन 1857 के विद्रोह को 'स्वतंत्रता का प्रथम संग्राम' कहा जाता है, किन्तु भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन उससे भी बहुत पहले छिटपुट रूप से आरम्भ हो गया था। यह 1947 तक ही नहीं, बल्कि उसके बाद गोवा की मुक्ति तक चला। 16वीं शताब्दी में बाबर द्वारा स्थापित यह साम्राज्य उपमहाद्वीप के अधिकांश हिस्से पर शासन करता था। 1613 में मुगल बादशाह जहांगीर ने अंग्रेजों को गुजरात के सूरत में व्यापारिक चौकी स्थापित करने की अनुमति दी। यही भारत में अंग्रेजों के शुरुआती ठिकानों में से एक बना। इसके बाद ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी ने देश के अलग-अलग हिस्सों में व्यापारिक चौकियां स्थापित कीं और धीरे-धीरे आर्थिक प्रभाव को राजनीतिक और सैन्य शक्ति में बदलना शुरू किया। 1707 में औरंगजेब की मृत्यु के बाद मुगल साम्राज्य तेजी से कमजोर हुआ। 1757 की प्लासी की लड़ाई अंग्रेजी विस्तार का बड़ा मोड़ बनी। बंगाल के नवाब सिराजुद्दौला अंग्रेजों की बढ़ती शक्ति से चिंतित थे। उनके सेनापति मीर जाफर के विश्वासघात ने अंग्रेजों को निर्णायक बढ़त दिलाई। इसके बाद मीर जाफर को अंग्रेजों ने बंगाल का नवाब बना दिया। प्लासी की जीत ने ईस्ट इंडिया कंपनी को केवल व्यापारिक संस्था से सैन्य और राजनीतिक शक्ति में बदल दिया। 1764 के बक्सर युद्ध ने इस प्रभाव को और मजबूत किया तथा बंगाल, बिहार और उत्तर भारत में कंपनी की स्थिति लगातार मजबूत होती गई। लेकिन अंग्रेजी विस्तार के साथ प्रतिरोध भी शुरू हो गया था। 1799 में बनारस क्षेत्र में बाबू जगत सिंह और वजीर अली के नेतृत्व में हुआ प्रतिरोध इसका महत्वपूर्ण उदाहरण है। 13 जनवरी 1799 की शाम तक करीब 12,837 लोगों की भीड़ जुटाई गई। इतने कम समय में इतनी बड़ी संख्या में लोगों का एकत्र होना बताता है कि प्रतिरोध की तैयारी संगठित और योजनाबद्ध थी। लेकिन माधव दास बाग पर अंग्रेजी सेना के लिए हमला आसान नहीं था। एर्स्किन को लगातार और सुनियोजित गोलीबारी का सामना करना पड़ा। विद्रोहियों के संगठित दलों ने कई बार अंग्रेजी सैनिकों को नजदीक से चुनौती दी। अंग्रेजों को चार छह-पाउंडर तोपों और चार टम्ब्रिल की आड़ में धीरे-धीरे आगे बढ़ना पड़ा। इस संघर्ष में चार अंग्रेज अधिकारी कमांडर चेरी, कैप्टन कानवे, रॉबर्ट ग्राहम और रिचर्ड इवांस मारे गए। उनकी कब्रें वाराणसी के कैंट क्षेत्र में मकबूल आलम रोड स्थित ईसाई कब्रिस्तान में आज भी देखी जा सकती हैं। हालांकि दोनों पक्षों में मारे गए कुल लोगों की प्रमाणिक संख्या उपलब्ध नहीं है, लेकिन अनुमान है कि बड़ी संख्या में लोग मारे गए। अंग्रेजों की बेहतर तोपखाने की शक्ति और भारी गोला-बारूद विद्रोहियों पर भारी पड़े। बाबू जगत सिंह और वजीर अली की ओर से पर्याप्त तोपखाने का अभाव उनकी हार का प्रमुख कारण बना। इसके अतिरिक्त अंग्रेजों के पास बनारस के आसपास बड़ी सैन्य शक्ति भी मौजूद थी। विद्रोहियों ने अंग्रेजी सेना की प्रगति रोकने की योजना बनाई थी, लेकिन इसके लिए नियुक्त कुछ लोग समय पर अपने स्थान पर नहीं पहुंचे। इससे अंग्रेजी सेना को आगे बढ़ने का अवसर मिल गया। आखिरकार बाबू जगत सिंह गिरफ्तार कर लिए गए। उनके साथ बहादुर सिंह, गजराज सिंह, बीजक सिंह, रामदयाल, शिवशरण सिंह, लाल सिंह, शिवदेव सिंह, मिर्जा अली, इमाम अली, मिर्जा बेग, हफीजुल्लाह, खैरउद्दीन बेग और मुराद चैन सहित कई लोगों को गिरफ्तार किया गया। इन पर मुकदमे चलाए गए और अलग-अलग सजाएं दी गईं। बाबू जगत सिंह पर बनारस की विशेष अदालत में मुकदमा चला और उन्हें मृत्युदंड सुनाया गया। बाद में निजाम अदालत ने इसे आजीवन देश निकाले में बदल दिया। कलकत्ता काउंसिल ने भी इसकी पुष्टि की और उन्हें कलकत्ता भेजने का आदेश दिया। 31 अगस्त 1799 को कलकत्ता पहुंचने के बाद बाबू जगत सिंह को फोर्ट विलियम में कैद कर लिया गया। 18 अक्टूबर 1799 को उन्हें सेंट हेलेना भेजने का आदेश दिया गया। अंग्रेजों को जगत सिंह से इतना खतरा महसूस हुआ कि उन्हें भारत में रखना भी सुरक्षित नहीं समझा गया। 20 अक्टूबर 1799 को उन्हें सेंट हेलेना ले जाने वाले जहाज ओस्टरली पर सवार कराया जा रहा था। इसी दौरान उनके निधन को लेकर अलग-अलग विवरण मिलते हैं। एक विवरण में जहर खाने की बात कही गई है, जबकि दूसरा मत है कि उन्होंने विदेश की भूमि पर जाने के बजाय अपने देश में ही प्राण त्यागने का संकल्प लेकर हुगली नदी में जल समाधि ली।

(लेखक हिन्दी विश्वकोश के पूर्व सहायक संपादक है, ये उनके अपने विचार हैं।)

हमारी सोच बनाती है जीवन की तस्वीर

संकलित
दर्शन

संसार अपने आप में न अच्छा है, न बुरा। हम उसे जिस दृष्टि से देखते हैं, वही हमारे लिए उसकी तस्वीर बना देती है। एक ही परिस्थिति किसी के लिए परेशानी हो सकती है तो किसी दूसरे के लिए आगे बढ़ने का अवसर। आग स्वयं न शुभ है, न अशुभ। वही आग ठंड में राहत देती है और लापरवाही होने पर नुकसान पहुंचाती है। इसलिए जीवन की परिस्थितियों को कोसने के बजाय अपनी सोच और प्रतिक्रिया को समझना अधिक जरूरी है। यह भ्रम भी नहीं पालना चाहिए कि दुनिया हमारे सहारे चल रही है। प्रकृति की अपनी व्यवस्था है और जीवन अपनी गति से आगे बढ़ता रहता है। हमारे होने या न होने से संसार की गति रुकने वाली नहीं। लेकिन इसका अर्थ यह भी नहीं कि हम अपने दायित्वों से मुंह मोड़ लें। मनुष्य होने का अर्थ ही है कि हम अपने सामर्थ्य के अनुसार दूसरों के काम आएं। परोपकार करते समय सबसे जरूरी है कि उसमें अहंकार न आए। किसी जरूरतमंद की सहायता करके उस पर एहसान जताना सहायता की भावना को छोटा कर देता है। वास्तव में किसी के दुख में काम आ पाने का अवसर हमारे लिए ही सौभाग्य है। दूसरों की मदद करते हुए हम उनके जीवन में जितना बदलाव लाते हैं, उससे कहीं अधिक अपने भीतर संवेदना और मानवता को विकसित करते हैं। अंततः संसार हमारे उपकार का मोहताज नहीं, लेकिन दूसरों के लिए किया गया हर अच्छा कर्म हमारे व्यक्तित्व को जरूर समृद्ध करता है। यही जीवन को बेहतर बनाने का सबसे सरल रास्ता है।

विनम्रता ही सबसे बड़ी ताकत है

संकलित
प्रेरणा

एक बार दांत और जीभ के बीच बहस छिड़ गई। दांत अपनी चमक और मजबूती पर इतराते हुए जीभ से बोले, "तुम तो बस मांस का एक टुकड़ा हो। न तुम्हारा कोई खास रूप है, न रंग और न ही हमारी तरह चमक। देखो, हम कितने सुंदर और मजबूत हैं।"जीभ ने दांतों की बात का कोई जवाब नहीं दिया। वह शांत रही। समय बीतता गया। दिन महीनों में और महीने वर्षों में बदल गए। उम्र बढ़ने लगी तो एक-एक करके दांत कमजोर होते गए और गिरने लगे। इसके विपरीत जीभ पहले की तरह अपना काम करती रही।जब कुछ आखिरी दांत भी गिरने की स्थिति में पहुंचे तो जीभ ने मुस्कुराकर कहा, "भाइयो, बहुत समय पहले आपने मुझसे अपने रूप और मजबूती को लेकर कुछ कहा था। आज समय ने ही उसका जवाब दे दिया। मैं तुमसे पहले इस शरीर में आई थी और अब उम्र में भी तुमसे बड़ी हूं। फिर भी तुम एक-एक करके मुझसे पहले विदा हो रहे हो।"दांतों को अपनी गलती का अहसास हुआ। उन्होंने विनम्र होकर कहा, "अब समझ में आया कि केवल मजबूत होना ही पर्याप्त नहीं। कठोरता ने हमें कमजोर कर दिया, जबकि तुम्हारी कोमलता ने तुम्हें लंबे समय तक टिकाए रखा।"यह छोटी-सी कहानी जीवन का बड़ा सत्य सिखाती है। कठोरता अक्सर टकराव पैदा करती है, जबकि विनम्रता रिश्तों को बचाती है। सामने वाला उम्र, पद या क्षमता में छोटा हो या बड़ा, सम्मान हर व्यक्ति का अधिकार है।सच्ची ताकत दूसरों को दबाने में नहीं, बल्कि विनम्र रहकर सबका दिल जीतने में है।

अंतर्मन

आज की पाती

बच्चों का बचपन छीन रही स्क्रीन

आज मोबाइल, टीवी, टैबलेट और कंप्यूटर बच्चों की दिनचर्या का अभिन्न हिस्सा बन चुके हैं। पढ़ाई और मनोरंजन के नाम पर बच्चे घंटों स्क्रीन के सामने बिताते हैं। इसका असर उनकी आंखों, नींद, शारीरिक गतिविधियों और मानसिक स्वास्थ्य पर पड़ रहा है। माता-पिता को बच्चों के लिए स्क्रीन टाइम की स्पष्ट सीमा तय करनी चाहिए। भोजन और सोने से पहले मोबाइल से दूरी तथा रोजाना कुछ समय खेलकूद, किताब पढ़ने और परिवार के साथ बातचीत के लिए निर्धारित किया जाना चाहिए। अभिभावकों को स्वयं भी मोबाइल का सीमित उपयोग कर बच्चों के सामने उदाहरण प्रस्तुत करना होगा। बच्चों का बचपन स्क्रीन में नहीं, मैदान और किताबों के बीच सुरक्षित रह सकता है। इस दिशा में परिवार और स्कूल दोनों को गंभीर प्रयास करने चाहिए। तभी बच्चे स्क्रीन से दूर रह सकेंगे।

-सूर्यांश कौशिक, रोहतक

करंट अफेयर

मानसून में छुट्टियां बिताने के लिए गोवा पसंदीदा गंतव्य

भारत में मानसून के दौरान तीन-चार दिन की छुट्टियों में घूमने के लिए गोवा लोगों की पहली पसंद बनकर उभरा है। राज्य के पर्यटन विभाग के अनुसार, मानसून में यात्रा के लिए घरेलू स्तर पर जानकारी हासिल करने की गतिविधियों यानी 'सर्च' में सालाना आधार पर करीब 40 प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई है। विभाग ने कहा कि एयरबीएनबी के 'सर्च' आंकड़े यात्रा की पसंद में बदलाव का संकेत देते हैं। भारतीय मानसून के दौरान अचानक बनाए गए सप्ताहांत के कार्यक्रम और तीन से पांच दिन की छोटी छुट्टियों को काफी पसंद कर रहे हैं। गोवा के पर्यटन मंत्री रोहन ए. खूंटे ने कहा कि यह रुझान इस बात की पुष्टि करता है कि गोवा की पहचान केवल समुद्र तट वाले गंतव्य के रूप में नहीं है। उन्होंने कहा, "मानसून के दौरान राज्य हरे-भरे जंगलों, झरनों, आध्यात्मिक अनुभवों और स्थानीय त्योहारों के जीवंत स्वरूप में बदल जाता है।" पर्यटन विभाग ने कहा कि एयरबीएनबी के आंकड़ों के अनुसार, महानगरों से इतर गंतव्यों के लिए 'सर्च' में भी 40 प्रतिशत से अधिक की वृद्धि हुई है। यह लोगों की प्रकृति, संस्कृति और अनूठे अनुभवों के प्रति बढ़ती पसंद को दर्शाता है। एयरबीएनबी विभिन्न देशों और क्षेत्रों में अल्पकालिक एवं दीर्घकालिक 'होमस्टे' की सेवा मुहैया कराने वाला ऑनलाइन मंच है।

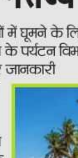

ऑफ बीट

जब जिन्ना बंटवारे की भयावहता से रूबरू हुए

वर्ष 1947 में जब बंटवारे ने उपमहाद्वीप को झकझोर दिया, तो सांप्रदायिक हिंसा, हत्याओं और लूटपाट के बीच लाखों लोगों को नई बनी सीमा पार करके भागने पर मजबूर होना पड़ा। इसी माहौल में, विभाजित पंजाब से लोगों का सैलाब गुजरते देख पाकिस्तान के संस्थापक मुहम्मद अली जिन्ना ने कथित तौर पर अपना माथा पीटा और निराशा में कहा, "मैंने यह क्या कर दिया?" इस घटना का जिक्र पत्रकार और लेखक कुलदीप नैयर की आत्मकथा 'बियॉन्ड द लाइन्स' में किया गया है। किताब में कहा गया है कि जब जिन्ना लाहौर में थे, तो पाकिस्तान के पुनर्वास मंत्री इफ्तिखार-उद-दीन और 'पाकिस्तान टाइम्स' के संपादक मजहर अली खान उन्हें डकोटा विमान से विभाजित पंजाब के ऊपर ले गए। इसमें कहा गया है, "जब उन्होंने (जिन्ना) लोगों की भीड़ को पाकिस्तान में आते या वहां से भागते देखा, तो उन्होंने निराशा में अपना हाथ माथे पर मारा और कहा: मैंने क्या कर दिया?" इफ्तिखार और मजहर, दोनों ने ही उस टिप्पणी का किसी से जिक्र न करने का संकल्प लिया। हालांकि, बाद में मजहर ने अपनी पत्नी ताहिरा को भरोसे में लिया और बताया कि जिन्ना ने क्या कहा था। उन्होंने, अपने पति के गुजरने के काफी समय बाद, जिन्ना की बात नैयर को बताई। यह टिप्पणी तब आई जब बंटवारे के साथ हुई मानवीय त्रासदी का दायरा साफ़ तौर पर दिखने लगा था।

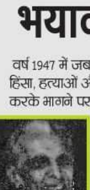

ट्रेंड

दवा क्षेत्र में काम किया

हमने दवा क्षेत्र में महत्वपूर्ण काम किया है, लेकिन आज जरूरत इस बात की है कि एक-दो भारतीय कंपनियां दुनिया की शीर्ष पांच कंपनियों में प्रमुख स्थान हासिल करें। भारत को वहां अपना स्थान सुनिश्चित करना चाहिए। **-नरेंद्र मोदी**, प्रधानमंत्री

युवाओं को सही दिशा दें

युवा देश के लिए 'डेमोग्राफिक डिविडेंड' हैं। अगर उन्हें सही दिशा दी जाए तो देश को फायदा होगा, ऐसा नहीं हुआ तो भविष्य में समाज पर बोझ बढ़ेगा। युवाओं को भविष्य की पीढ़ियों की जरूरतों का भी ध्यान रखना चाहिए। **-मोहन भागवत**, आरएसएस प्रमुख

राष्ट्र निर्माण में लगाएं प्रतिभा

मैं युवा मित्रों से कहना चाहती हूं-अपनी ताकत को सोशल मीडिया तक सीमित मत रखिए। अपने विचारों का उपयोग स्टार्टअप के लिए और अपनी रचनात्मकता का उपयोग नवोन्मेष के लिए कीजिए। शोध कीजिये अपनी प्रतिभा को राष्ट्र निर्माण की दिशा में लगाइए।

-रेखा गुप्ता, सीएम दिल्ली

एक करोड़ नौकरी देंगे

हमारी सरकार ने 2030 तक राज्य के लोगों को एक करोड़ सरकारी नौकरियां और रोजगार के अवसर उपलब्ध कराने का नया लक्ष्य निर्धारित किया है। हमारी औद्योगिक नीति राज्य में अधिकतम रोजगार पैदा करने पर केंद्रित है।' इससे युवाओं को रोजगार मिलेंगे और बिहार का विकास होगा। **-सम्राट चौधरी**, सीएम बिहार

हमारा पता
हरिभूमि कार्यालय
नजदीक इंडस पब्लिक स्कूल, दिल्ली रोड, रोहतक-124001 फोन: 9253681019-20
ई-मेल : haribhoomi@gmail.com
वेब-साइट : www.haribhoomi.com

चला, शांततेचा डीजे वाजवू या...

उत्सवी दिवसांची चाहूल लागल्यावर सगळ्यात पहिल्यांदा धडकी भरते ती डीजेच्या आवाजाची…

सुनील शेणॉय

एका उत्सवी दिवशी डीजेच्या सुमधुर आवाजाने आमच्या एका तरुण वरिष्ठ नागरिकांच्या कानांनी अर्धवट प्राण त्यागला. या गोष्टीस आता काही महिने लोटले. गेलेल्या गोष्टीचं दुःख हळूहळू विस्मरणात जातं. त्याप्रमाणे ते दुःख हलकं होत असतानाच काल मध्यरात्री आसमंत आवाजाने दुमदुमायला लागला. आता पुढील काही महिने वेगवेगळे सण, उत्सव, महापुरुषांचे जन्मदिवस या कारणांनी डीजेची भेट होतच राहाणार आहे. कुठल्याही जाती-धर्म-पंथावर टीका करणं हा या प्रस्तुत लेखाचा विषय नाही. डीजेयुक्त मिरवणुका, परिणामी होणारे असह्य ध्वनिप्रदूषण तद्अनुषंगाने होणारं हे मुक्त आत्मचिंतन आहे.

डीजे आणि त्यामुळे होणारं ध्वनिप्रदूषण यावर आजपर्यंत प्रचंड ऊहापोह झाला आहे. वेगवेगळ्या न्यायालयांनी यावर अनेक आदेशसुद्धा दिले आहेत. परंतु प्रत्यक्षात या आदेशांना केराची टोपली दाखवली जाते. पोलिसांच्या डोळ्यांसमोर हे डीजे वाजविले जातात. लेसर प्रकाशझोत डागले जातात. परंतु त्या बिचाऱ्यांना काही दिसत नाही, काही ऐकू येत नाही व म्हणून ते काही बोलत नाहीत. एखाद्या नतद्रष्ट डीजेद्वेषी यःकश्चित 'झुरळा'ने तक्रार केलीच तर अत्यंत नाइलाजाने ते गुन्हा दाखल करतात. फारच झालं तर डीजे जप्त करतात आणि ही कारवाई न चुकता दुसऱ्या दिवशीच्या वर्तमानपत्रात छापून आणतात. एवढं केलं की त्यांना व त्या नतद्रष्ट डीजेद्वेषी यःकश्चित तक्रारदाराला धन्य वाटतं. त्या तक्रारींचं आणि त्या जप्त केलेल्या डीजेचं पुढं काय झालं याचं कोणालाही देणं-घेणं नसतं.

मध्यंतरी अशीच एक बावळट तक्रार घेऊन प्रदूषण नियंत्रण मंडळाच्या कार्यालयात गेलो असता तिथं एक नवीन ज्ञान मिळालं. त्यांनी आम्हांस असं शिकविलं की हे मंडळ फक्त औद्योगिक ध्वनिप्रदूषणाच्या तक्रारी घेतं. डीजेमुळे होणारं प्रदूषण हे 'औद्योगिक' प्रदूषण या सदरात मोडत नसल्याने असल्या (निरर्थक) तक्रारींसाठी तुम्ही पोलीस किंवा महापालिकेत जा. हे ऐकून आमचे कर्ण डीजेच्या आवाजाने बधिर होण्यापूर्वी एकदा धन्य झाले !!!

डीजेमुळे कान कामातून जाऊ शकतात, हृदय बंद पडू शकतं, रक्तदाब वाढू शकतो, लेसर झोतांमुळे डोळे जातात. हे सगळं माहीत असूनसुद्धा आपल्यातीलच काही उत्साही महामानव डीजेसमोर उभं राहून नाचण्याचं धाडस (की मूर्खपणा) अंगी कसं बाळगू शकतात? त्यांचे पालक/ पत्नी/मुलं / बहिणी /भाऊ यांना या गोष्टीची कशी भीती वाटत नाही? की यांचे कान आणि हृदय स्टेनलेस स्टीलचं असतं? गेल्या दहा वर्षांत श्रवण यंत्रांची विक्री दरसाल ९.६ टक्के चक्रवाढ दराने वाढत आहे. गेल्या दहा वर्षांतील वाढत्या ध्वनिप्रदूषणाचा विदा माहितीजालावर उपलब्ध आहे. या दोघांमधील सहसंबंधांवर लिहायची खरंच गरज आहे? कधी कधी गमतीने असं वाटतं की श्रवण यंत्र बनवणाऱ्या कंपन्याच डीजे विकत असाव्यात.

या डीजेयुक्त मिरवणुका व तद्अंगभूत असलेले खानपान व इतर खर्च हे नक्की कोण करतं? जे हा अफाट खर्च करतात त्यांचा उत्पन्नाचा स्रोत काय असतो? हा खर्च करण्यामागे त्यांचा उद्देश काय असतो? याची ईडी चौकशी कधी होईल का?

नागरिकांचं आपल्याविरुद्ध 'बोलणं' बंद व्हावं असं सध्याच्या सरकारला वाटणं अपेक्षित आहे. परंतु लोकांचं 'ऐकणं'सुद्धा बंद व्हावं सरकारला का वाटावं? तसं वाटत नसेल तर हे थांबत का नाही?

सोलापूरमध्ये डीजेमुक्त गणेशोत्सव झाला असं म्हणतात. खरं-खोटं श्री गणेश जाणे, पण जर हे खरं असेल तर सगळीकडे सर्व उत्सव डीजेमुक्त का नाही होत? राजकीय इच्छाशक्ती कमी पडते आहे की लोकानुनय लोककल्याणावर स्वार झालाय?

या डीजेवर वाजवली जाणारी गाणीसुद्धा 'डीजे स्पेशल' असतात. अत्यंत कानठळ्या बसविणारं भेसूर संगीत व त्याहून बेसूर किंचाळणं यामुळे सर्वात आधी डोकं दुखायला लागतं. डीजेचे जर इतके दुष्परिणाम आहेत तर सरकार त्याच्या उत्पादनावर वा विक्रीवर बंदी का नाही घालत? अत्यंत शक्तिशाली डीजे जो विकत घेतो तो त्याचा वापर काय स्वतःच्या घरी हेडफोन लावून करणार आहे का ? मग हे सरकारी अधिकाऱ्यांच्या लक्षात का येत नाही?

ध्वनिक्षेपकांच्या (की ध्वनिप्रदूषकांच्या) भिंती जीवनावश्यक गोष्टी आहेत का ? मग त्यावर बंदी घालायला अमेरिकेच्या राष्ट्राध्यक्षांची परवानगी लागणार आहे का?

कुठल्याही देवाने, धर्माने, प्रेषिताने, महामानवाने 'भक्तांनो, तुम्ही डीजे लावून नाचा' असं सांगितल्याचं माझ्या तरी अल्प ज्ञानात नाही. मग हा सगळा खर्च वाचवून एखादं रुग्णालय का नाही बांधता येणार?

कुठल्याही मिरवणुका काढण्यावर अजिबात आक्षेप नाही. मिरवणुका 'वाजत-गाजत' असण्यावरसुद्धा आक्षेप नाही. सनई-चौघडे वाजवत पारंपरिक वाद्यांच्या साथीनं मिरवणुका काढता येतील, कार्यक्रम करता येतीलच की. ज्यावेळी जगात डीजे नव्हते त्यावेळी मिरवणुका, कार्यक्रम होतंच होते.

मला वाटतं या प्रश्नाचं मूळ आपण विसरत चाललेल्या संस्कारांमध्ये आहे. आपल्या कुठल्याही कृतीने शेजार पाजाऱ्यांना अजिबात त्रास होता कामा नये ही एकेकाळी मूलभूत शिकवण होती. तसं काही केल्यास कोणाहीकडून तक्रार येण्याअगोदर घरचे धरून बदडायचे. इतका मार मिळायचा की तक्रार घेऊन आलेले शेजारी स्वतः त्या मारातून सोडवायचे. सध्या हा विचार लुप्त पावलाय. 'आमच्या डीजेमुळे तुला त्रास होत असेल तर तुझं तू बघ. मला आत्ता (बीभत्सपणे अश्लील हावभाव करत) नाचू दे', हा नवा विचार रुजलाय.

एका मानसशास्त्रज्ञाने सांगितलं की असं रस्त्यावर येऊन नाचण्याने मानसिक ताणतणाव कमी होतो. होत असेल बुवा... पण त्यासाठी इतरांच्या कानाचा का बळी देताय? हे लोण इतकं वाढत चाललंय की लहान मुलांच्या शाळेतसुद्धा त्यांना डीजे लावून नाचायला, कसरती करायला लावतात. अगदी अनेक सोसायट्यांमध्ये रंगपंचमीसारखा उत्सव डीजेवर नाचून साजरा केला जातो. त्या घरांच्या निर्जीव काचासुद्धा ध्वनिकंपन भीतीने थरथरत असतात. पण आम्ही बेदरकारपणे नाचत सुटतो.

त्यापेक्षा मायबाप सरकारने इनडोअर बंदिस्त स्टेडियम बांधावीत व तिथं हौशी जनांना डीजे लावून मनसोक्त नाचू द्यावं.

की हा प्रश्न सोडविण्यासाठी एखाद्या जंतर-मंतरवर एखादं आंदोलन करावं लागेल? या आंदोलनाचा आवाज कर्णबधिर शासनापर्यंत पोचावा म्हणून एखादा डीजे लावावा लागेल का?

कोणी सांगेल का...?

asgujrathi@gmail.com

ऋषितुल्य काव्यवृक्ष

डॉ. प्रल्हाद देशपांडे

ज्वलनशील वायूच्या दाहिनीत धडाडणाऱ्या अग्निशिखा फार काळ दिसत नाहीत. बंद दरवाजाआड पार्थिव मूकपणाने अग्नीच्या स्वाधीन होत जाते. कवी द. भा. धामणस्कर यांनी आपल्या पूर्ण हयातीला असेच कवितेच्या स्वाधीन करून टाकलेले. अंत्यसंस्कार होण्याआधी 'दभां'चा मुलगा अजित म्हणत होता, 'आबा निसर्गकवी होते हे जाहीरच आहे. त्यांचे अंत्यविधी, निसर्गाला जवळचे म्हणजे कसे करावेत?', 'अर्थात, विद्युतदाहिनी, डिझेल किंवा एलपीजी वायुदाहिनी.' मी सांगितलं.

आबांची आठवण आली की त्यांच्या ज्या कविता क्षणात आठवतात त्यांपैकी, 'झाडे सत्तेवर आली की...' ही कविता हट्टाने स्वतःला पुढे करते.

उद्या झाडे सत्तेवर आली की तीही
तोडलेल्या माणसांची हाडे
अशीच उघड्यावर रचून ठेवतील;
खुनाच्या अवशेषांची विल्हेवाट लावण्याची कला
झाडेही आत्मसात करतील...

अशा या ओळी केवळ पर्यावरण आणि मानवनिर्मित निसर्गविनाशाची दवंडी देत नाहीत तर माणसाच्या आत्मघाती विकासावरच्या कवितिक विधानाची नोंद करतात.

प्रस्तुत लेखाच्या मर्यादेच्या पल्याड असलेलं असं खूप काही धामणस्करांच्या कवितेत आहे आणि त्यांच्या व्यक्तित्वातही शिगोशिग भरून होतं. रक्ताच्या नात्यांनी आणि कवितेने चाहत्यांनी त्यांना बहाल केलेलं 'आबा' हे लाडकं संबोधन. आबांशी हितगुज करताना एकदा ते म्हणाले, 'देवाने मला रक्ताच्या नात्यांचं एक कुटुंब दिलंय आणि कवितेमुळे मला तुमच्यासारख्या कवींच्या नात्यांचं अजून एक कुटुंब मिळालं.'

वयाच्या ऐन पौगंडावस्थेत पहिली कविता लिहिल्यावर पुढली पंधरा वर्ष, 'मनासारखी कविता' सापडण्याची वाट पाहणाऱ्या या कवीच्या संयमशीलतेला सामान्य, अधीर कवींनी सलाम करावा.

'कविता', 'सत्यकथा', 'हंस', 'कविता रती', 'अनुष्टुभ', 'मौज', 'दीपावली' अशा नामांकित प्रकाशनांमधून मुशाफिरी होऊनही धामणस्करांच्या संयमाने त्यांना संग्रह प्रकाशित करण्याच्या घाईत लोटलं नाही. पहिला-वहिला, 'प्राक्तनाचे संदर्भ' संग्रहाचे बाड अनोळखी प्रकाशकाच्या टेबलावरून उचलून मौजेच्या टेबलावर नेऊन ठेवण्याचा लाघवी तरीही अनाग्रही हेका धामणस्कर करू जाणोत. या संकोची स्वभावामुळेच की काय त्यांचे तिन्ही संग्रह १५-२० वर्षांच्या अंतराने रसिकांच्या भेटीस आले.

'प्राक्तनाचे संदर्भ'मधल्या 'हस्तांतर' कवितेने तर या कवीला, देशातल्या पाच विविध भाषांतल्या रसिकांत नेऊन ठेवलं.

या पहिल्याच संग्रहातल्या 'पोर वयात', 'हस्तांतर', 'झाडे सत्तेवर आली की', 'फुलांच्या कविता' अशा कवितांनी धामणस्कर हे नाव करुणा, जीवनाप्रति कळवळा आणि निसर्गातल्या चैतन्याविषयी अपार ओढ अशा काव्यगुणांचं या कवीशी असलेलं नातं दृढ केलं. नंतर, यथावकाश प्रकाशित झालेल्या, 'बरेच काही उगवून आलेले' आणि वयाच्या नवव्या दशकात आलेल्या 'भरून आलेले आकाश' या संग्रहातल्या कवितांनी धामणस्कर हे नाव मराठी कवितेच्या क्षितिजावर अढळ करून ठेवलं.

जगण्यातल्या चैतन्य शक्तीवरचा गाढ विश्वास, मानवी भावभावनांना स्वतःच्या स्नेहमयी दृष्टीने टिपण्याची अमोघ कुशलता, हे कौशल्य साजूक शब्दांमध्ये उतरवण्याची हातोटी आणि अल्पाक्षरात रसिकाच्या मनाला साद घालणारी शैली या गुणांनी सजलेल्या या कवितेने संवेदनशील रसिकांना कवेत घेतलं.

जगण्यातल्या चैतन्य शक्तीवरचा गाढ विश्वास, मानवी भावभावना स्वतःच्या स्नेहमयी दृष्टीने टिपण्याची अमोघ कुशलता, हे कौशल्य साजूक शब्दांमध्ये उतरवण्याची हातोटी आणि अल्पाक्षरात रसिकांच्या मनाला साद घालणारी शैली या गुणांमुळे द. भा. धामणस्कर यांच्या कवितेने संवेदनशील रसिकांना कवेत घेतलं.

'बरेच काही...' संग्रहात 'कंदील विकणारी मुले', 'अनंताचे फूल', 'मी चराचराशी निगडित', 'नवी पालवी', 'साधना' अशा हळुवार आशयाच्या कवितांनी या कवीच्या तरल प्रतिभेचा जिव्हाळायुक्त आविष्कार घडवला. वाचक अशा कविता परस्परांना ऐकवताना त्या कविता आपल्या स्वतःच्याच असल्यागत वागतात ही खरी या कवितेला मिळालेली हृद्य दाद असते.

२०१६ साली, कवीच्या वयाच्या ८६ व्या वर्षी 'भरून आलेले आकाश' हा कवितासंग्रह प्रकाशित झाला तेव्हा या कवीचे वाचक कवितेची वाट पाहत तिष्ठत होतेच. 'फुलांचं जिणं' या पहिल्या कवितेपासून ते 'सूर्यास्तानंतर' या अखेरच्या कवितेपर्यंत रसिक वाचक,

'सूर्यास्तानंतरचे आकाश आपले नाही हे
फारच उशिरा ध्यानी आलेल्या
दिङ्मूढ पक्ष्यासारखा मी...'

या ओळींना गाठेस्तोवर, संग्रह हातातून सोडत नाही.

अशा या कवी धामणस्करांना कुणी डोंबिवलीचे कुसुमाग्रज म्हणो, कुणी या नगरीचे काव्यपितामह म्हणो, तर कुणी त्यांना काव्यमहर्षी म्हणो. आबा हे आपल्या स्वतःच्या काव्यनिर्मितीइतकेच मराठी भाषेत कविता लिहिणाऱ्या संत तुकारामाच्या अभंगापासून ते महाराष्ट्राच्या कोपऱ्यात, चांगली कविता लिहिणाऱ्या पोरसवदा कवीच्या कवितेतही तितक्याच तन्मयतेने रमलेले असायचे. आवडलेल्या प्रत्येक कवितेच्या, लेखाच्या निर्मात्याचा संपर्क शोधून त्याला, सुवाच्य अक्षरात, आवर्जून कौतुकपर प्रतिक्रिया कळवायचे. केवळ आपल्या ममतेने, आश्वासक शाबासकीने कवी घडवणारा आबा ही कदाचित एकमेव असामी असावी.

कवितेबाबतची आबांची मतं नर्म भाषेतली असूनही त्यांत सुप्त दाहकता समजूतदार नवख्याला जाणवे. 'कवी कितीही थोर असो, त्याच्या संग्रहातल्या एकूण कवितांपैकी काही मोजक्याच कविता अस्सल असतात. बाकीच्या केवळ पानपूरक.' असं मत व्यक्त करणाऱ्या आबांच्या तीनही संग्रहातली प्रत्येक कविता थांबून थांबून वाचावी लागते आणि याविषयी आबा कधीच प्रौढी मिरवताना दिसणार नाहीत.

आबांना एकदा भेटून गेलेली व्यक्ती भारावून गेल्याविना परतत नाही याचा अनुभव ठायी ठायी यायचा. गॉसिप या प्रकाराला आबा मोठ्या खुबीने बगल द्यायचे. समोरच्याने एखाद्याबद्दलचा कोणताही दोष आबांना सांगितला की, 'पण, त्यांची साहित्यिक जाण घेण्यासारखी आहे.' म्हणत आबा विषय बदलायचे.

तुकाराम, कुसुमाग्रज, बोरकर, अनिल, इंदिरा संत, शंकर वैद्य, विंदा असे तालेवार कवी तर आबांना मुखोद्गत होतेच पण, एखाद्या नवोदिताच्या, त्यांना भावलेल्या ओळीही ते स्मरणात राखून उद्धृत करीत असत. 'हा कवी नवीन असला तरी प्रॉमिसिंग आहे. जरूर वाचा.' असं ते सांगत तेव्हा त्या कवितेबाबत आपली निराशा होणार नाही याची ऐकणाऱ्याला पूर्ण खात्री असायची.

ओशो, जे. कृष्णमूर्ती, इमर्सन अशा विचारवंतांची त्यांनी उद्धृत केलेली कोटेशन्स म्हणजे आबांच्या ओठावर तरळणारी उद्बोधक सायच जणू. 'द अर्थ लाफ्स इन फ्लावर्स' या इमर्सनच्या सुभाषितांचा आविष्कार आबांच्या एकूणच कवितेतून झालेला आपल्याला दिसेल.

तिच्या केसांत अनंताचे फूल आहे
म्हणजे तिच्या अंगणात अनंताचे झाड असणार
या विचाराने मी अंतर्बाह्य मोहरून जातो.

अशी कमाल सौंदर्यदृष्टी लाभलेल्या या कवीच्या प्रतिभेने वाचक शहारून जातो. बालकवी, इंदिरा संत आणि नलेश पाटील यांच्या मालिकेत मराठीतला सर्वात मोहक निसर्गकवी कोण असा विचार करता द. भा. धामणस्कर हेच नाव आपल्या नजरेसमोर येतं.

दिशा हरवलेल्या आजच्या काळाला ज्या निरामयतेची आवश्यकता आहे, ज्या सात्त्विक दिलाशाची निकड आहे तीच निरामय आणि सात्त्विक प्रभा द. भा. धामणस्कर या विभूतीसोबत अनंताच्या मार्गावर प्रस्थान करती झाली. त्यांच्या कवितेतील 'महामूर', 'निवळशंख' अशांसारखी विशेषणे यापुढे कवितेमधून विखुरलेली दिसणार नाहीत.

काळाने आपल्या खुणा शरीरावर कोरायला सुरुवात केली आणि त्यामुळेच, हल्ली हल्ली उतारवयानुसार आबांच्या भटकंतीवर मर्यादा आल्या तरीही त्यांच्या घरी जाऊन भेटण्यासाठी जाणाऱ्या चाहत्यांसाठी ही भेट म्हणजे पंढरीच्या पांडुरंगाच्या विटेला स्पर्श करण्याइतकंच पावन कृत्य असायचं.

कवितालेखन म्हणजे आपला श्वास मानणाऱ्या धामणस्करांना, श्री. पु. भागवत, राम पटवर्धन, शंकर वैद्य, पाडगावकर, विंदा, गुरुनाथ सामंत, परेन जांभळे, नारायण लाळे, अरुण म्हात्रे, रविप्रकाश कुलकर्णी, हेमंत जोगळेकर असे अनेक कवी म्हणजे 'आपलं जगणं सोपं करणारे...' सुहृद वाटायचे इतकी या कवीच्या मनाची ऋजुता सात्त्विक होती.

धामणस्करांच्या अंत्ययात्रेप्रसंगी त्यांच्या चाहत्या शिष्यांनी आपल्या गुरुतुल्य कवीच्या कवितांचं वाचन करतच स्मृतिवंदना दिली.

कवी प्रवीण दामले याने जी प्रार्थना सादर केली त्याचे सार... 'तुझ्या भविष्यातील ध्येय, कर्म आणि ध्येयसूत्रासाठी निसर्गाशी समरूप होण्याकरिता आम्ही आमच्या साऱ्या सदिच्छा आपणाला देत आहोत.' हे होतं, त्यापेक्षा उचित अशी कोणती श्रद्धांजली आबांएवढ्या थोर कवीला द्यावी...!

आबांच्याच एका कवितेतील एक तहानलेले पाखरू पाण्याशी जाताना त्याला ज्या मानवाची धास्ती वाटत होती तोच महामानव आज, पाखराच्या मनातील भीती दूर करण्यासाठी स्वतःच आकाश होऊन गेला की काय असे वाटत राहते.

drpralhadd@gmail.com

चांदनी चौकातून

दिल्लीवाला

'जेन-झीं'वरून भाजपमध्ये चर्वितचर्वण

जेन-झींचं करायचं काय हा प्रश्न भाजपला सतावू लागला आहे हे भाजप नेत्यांच्या बोलण्यातून स्पष्टपणे दिसू लागलेलं आहे. अशाच एका चर्चेमध्ये जेन-झींचं म्हणणं आम्हाला ऐकून घ्यावं लागेल अशी कबुली भाजपच्या एका नेत्यानं दिली. हा नेता मोदींच्या विश्वासातील असल्यानं भाजपमध्ये जेन-झींवरून चर्वितचर्वण सुरू झालेलं आहे याची खात्री पटली. भाजपची अडचण अशी आहे की, जेन-झी मोदी सरकारच्या विरोधात उभे राहिले आहेत. त्यांना कितीही टोमणे मारा, टीका करा, त्यांच्याशी संवाद साधा, नाही तर उपदेश द्या, ते काही भाजपच्या हाताला लागताना दिसत नाहीत. मोदींच्या इन्स्टाचा काही उपयोग झालेला नाही. ही परिस्थिती बदलली नाही तर काँग्रेस जेन-झींवर कब्जा मिळवेल अशी भाजपला भीती वाटू लागली आहे.

भाजपचे नवे अध्यक्ष नितीन नवीन इन्स्टाग्रामवर आता अधिक सक्रिय झालेले आहेत. आणखी एखाद-दोन नेत्यांना इन्स्टाचं महत्त्व आधीच कळलं होतं. पण, इतर भाजप नेत्यांना इन्स्टावर रीळं बनवावी लागणार आहेत. हा झाला वरवरचा भाग. त्यातून काही जेन-झी भाजपकडं वळणार नाहीत. आत्तापर्यंत २०-२२ वर्षांचे तरुण 'अभाविप'च्या माध्यमातून भाजपशी जोडले जात होते. व्हॉट्सॲप वगैरे माध्यमातून भाजपचा आयटी विभाग त्यांच्यापर्यंत पोहोचत होता, त्यातून 'व्हॉट्सॲप' विद्यापीठं निघाली आणि दामटून माहिती पोहोचवली गेली. पण आता हे अस्त्र कुचकामी झालेलं आहे. जेन-झी पोरं काय सांगू पाहताहेत याचा अभ्यास सध्या भाजपमध्ये केला जात आहे. जेन-झींना पोरं सज्ञान होतील तेव्हाच त्यांना अभाविप किंवा भाजपच्या युवा मोर्चामध्ये घेतलं जाऊ शकतं. पण तोपर्यंत ती लांब गेली तर संभाव्य मतदारच निघून जातील ही भाजपची दुसरी भीती आहे. या मुलांना संघटनेत आणता आलं नाही तरी त्यांच्यापर्यंत कसंही करून पोहोचा, असा विचार आहे. हा मार्ग काय असेल यावर भाजपमध्ये चर्चा केली जात आहे. ही मुलं काँग्रेसकडं जाणार नाही याची दक्षता घेणं हा भाजपच्या रणनीतीचा मुख्य भाग आहे. हे कसं करायचं त्यावर सखोल विचार होत आहे. मग, प्रत्यक्ष अंमलबजावणी ठरेल. या जेन-झींनी फक्त मोदींचं राज्य पाहिलं आहे. इतर पक्षांच्या नेत्यांचं राज्य कसं वाईट होतं त्यांच्या हे गळी उतरवावं लागेल. मग, पुन्हा नेहरू-इंदिरा गांधी-मनमोहन सिंग आलेच. हिंदू-मुस्लीम आलेच. उत्तर प्रदेश वगैरे राज्यातील हिंसाचार वगैरे आलाच. हेच गुऱ्हाळ भाजपनं जेन-झींबाबतही चालू ठेवलं तर जेन-झी भाजपला मिळणार कसे? पण, भाजपमध्ये जेन-झींना आपल्या कळपात ओढण्यासाठी जोरदार विचारमंथन सुरूआहे हे नक्की!

पवारांचे खासदार मोदींना का भेटतात?

शरद पवारांचं बोट धरून राजकारणात आलो असं मोदींनी म्हटल्यापासून मोदी-पवारांच्या भेटीची दिल्लीत चर्चा होत असते. पवार 'एनडीए'त जात नाहीत आणि मोदी पवारांचं बोट सोडायला तयार नाहीत. परवादेखील शरद पवार मोदींच्या संसदेतील दालनात भेटायला गेले तर मोदींनी पवारांचा हात धरून आपलेपणाने त्यांचं स्वागत केलं. या दोन दिग्गजांची अधूनमधून भेट होत असते. कधी स्वतः पवार आपल्या आमदार-खासदारांचे प्रश्न घेऊन मोदींना भेटतात. कधी राष्ट्रवादी काँग्रेस शरदचंद्र पवार पक्षाच्या खासदार सुप्रिया सुळे खासदारांचे प्रश्न घेऊन भेटतात. कोणी भेटलं तरी हा पक्ष कधी 'एनडीए'मध्ये सामील होतोय, अशी चर्चा होते. संसदेच्या पावसाळी अधिवेशनाच्या सुरुवातीलाच शरद पवार आणि सुप्रिया सुळे दोघेही मोदींना भेटले. इतर मुद्द्यांवर चर्चा झालीच असेल पण, सुप्रिया सुळे यांच्या कन्येच्या लग्नाचा स्वागत समारंभ दिल्लीत होणार होता, त्याची रीतसर निमंत्रण पत्रिका दोघांनी मिळून मोदींना दिली होती. त्यानंतर या समारंभाला मोदी उपस्थितही राहिले होते. पण, ज्या दिवशी हा समारंभ झाला त्याच दिवशी सकाळी सुप्रिया सुळे आणि पक्षाचे इतर सात खासदारही मोदींना भेटले. त्यांची अर्धा तास भेट झाली. प्रत्येक खासदाराने आपापल्या मतदारसंघातील प्रश्न, समस्या मांडल्या. त्यांच्या मागण्यांबाबत मोदींनी सकारात्मक भूमिका घेतल्याचं या खासदारांनी मोदींच्या दालनातून बाहेर आल्यावर सांगितलं. या खासदारांच्या भेटीमुळे तीन मुद्द्यांभोवती चर्चा रंगली. लोकसभा मतदारसंघांच्या फेररचनेच्या घटनादुरुस्ती विधेयकाला पवारांच्या पक्षाने पाठिंबा दिला असावा आणि ते मोदींना कळवलं असावं. पण, अशा मुद्द्यांची चर्चा मोदींच्या दालनात करण्याची गरज नसते आणि मोदींना अशा चर्चेची गरज असेल तर ते थेट शरद पवारांशी आणि सुप्रिया सुळेंशी बोलू शकतात. त्यासाठी खासदारांचं शिष्टमंडळ बोलावण्याची मोदींना गरज नाही! दुसरी चर्चा होती, दोन्ही राष्ट्रवादी काँग्रेसच्या विलीनीकरणाची. या पक्षाच्या खासदारांचं म्हणणं आहे की, हा पवार कुटुंबातील प्रश्न आहे. त्यांना वाटलं तर पक्ष एकत्र येतील, नाही तर वेगळे राहतील. आम्ही सगळे शरद पवारांबरोबर आहोत, ते सांगतील ते आम्ही करू. पवारांना आम्ही दगा देणार नाही. शिवाय, आम्ही एकत्रितपणे निर्णय घेऊ. आम्ही एकमेकांशी चर्चा करत असतो. एकमेकांना सगळं सांगतो. आम्ही काहीही लपवून ठेवलेलं नाही... हे खासदारांचं म्हणणं खरं असेल तर विलीनीकरण होणार की नाही हे शरद पवारच ठरवतील. त्यांच्याकडून तरी थेट, 'हा विषयच नाही', असं सांगण्यात आलेलं आहे. मग, राहिला तिसरा मुद्दा... मग हे खासदार मोदींना भेटतात कशाला? हा पक्ष 'एनडीए'मध्ये सामील होणार आहे का? खरंतर दोन वेगवेगळे राष्ट्रवादी काँग्रेस एकाच वेळी 'एनडीए'मध्ये सामावून घ्यायला भाजपच्या नेतृत्वाचा विरोध आहे, असं सांगितलं जातंय. दोन्ही राष्ट्रवादी काँग्रेसने एकत्र यायचं की नाही हे त्यांनी ठरवावं. ते एकत्र आले तर संयुक्त राष्ट्रवादी काँग्रेस 'एनडीए'मध्ये सामील होऊ शकतो, या स्वरूपाला भाजपचा विरोध असण्याचं काहीही कारण नाही. पण, विलीनीकरण अजून झालेलं नाही. विलीनीकरण होत नाही आणि सत्तेत जाता येत नसेल तर विरोधी बाकांवर बसलेले खासदार अस्वस्थ होऊ शकतात. त्यांनाही मतदारसंघ सांभाळायचा आहे. विरोधी खासदारांकडं ना केंद्र वा राज्य सरकार लक्ष देतं. मतदारसंघातील विकास कामं अडतात, निधी मिळत नाही, तातडीची कामं होत नाहीत. मतदार दारात आले तर खासदार त्यांना काय सांगणार, हा प्रश्न आहे. मतदारांची नाराजी वाढत गेली तर पुढच्या निवडणुकीत तोंड दाखवायला जागा उरणार नाही ही या खासदारांची खरी खंत आहे. त्यातून कुठल्या पक्षाने संपर्क करण्याचा प्रयत्न केला तर आपण सत्ताधारी का नाही, हा प्रश्न आणखी सतावू लागतो. त्यावर पर्याय एकच असतो, या सगळ्या खासदारांचं वेळोवेळी शंका समाधान करत राहणं, त्यांची अस्वस्थता कमी करणं, त्यांना एकत्र ठेवण्यासाठी थेट मोदींची भेट घालून देणं... शरद पवार आणि सुप्रिया सुळे यांचं राष्ट्रीय स्तरावरील 'गुडविल' खूप आहे. हे दोघे जेव्हा हवं तेव्हा मोदींना किंवा शहांना भेटू शकतात. खरंतर मोदी सरकारमधील कुठल्याही मंत्र्यांना भेटून आपल्या खासदारांच्या मतदारसंघातील कामांचा निपटारा करू शकतात. एखाद्या कामासाठी थेट मोदी-शहांकडं जाऊ शकतात. या वेळच्या भेटीतही हेच घडलं आहे. त्यातून दुसऱ्या पक्षांना इशाराही दिला जातो की, आमच्या खासदारांना हात लावण्याचा प्रयत्न करू नका... या वेळच्या मोदीभेटीमध्ये 'इशारो-इशारो' में अनेक पक्षी मारले गेल्याचं सांगितलं जातंय.

'सर्वपक्षीय बैठकी'त न झालेलं हस्तांदोलन

अलीकडं संसदेच्या आधी होणाऱ्या सर्वपक्षीय बैठकीमध्ये फार काही होत नाही, या बैठकीला फारसा काही अर्थ उरलेला नाही. पण, कधी कधी अशा खेळीमेळीत 'सर्वपक्षीय' बैठका भरतात की संसदेमध्ये असं सौहार्दाचं वातावरण का नसतं असं विचारावंसं वाटतं. अशीच एक 'सर्वपक्षीय' बैठक गेल्या आठवड्यामध्ये 'सहा जनपथ'वर भरलेली होती. त्यामध्ये कधी नव्हे ते पंतप्रधान नरेंद्र मोदीही सहभागी झालेले होते! त्यांच्या आदरातिथ्याला अख्खा पक्षच उभा होता. या बैठकीत बऱ्याच जणांनी हास्यविनोद केले, हस्तांदोलन केलं. गप्पा मारल्या, गॉसिप केलं. पण, एक हस्तांदोलन मात्र राहून गेलं. हेच ते ठिकाण होतं, जेव्हा पूर्वीच्या एका हस्तांदोलनाची चर्चा झाली होती. त्या हस्तांदोलनाचं छायाचित्रं कोणी काढणार नाही आणि ते प्रसिद्ध होणार नाही याची अचूक दक्षता घेतली गेली होती. अशी चतुराई दाखवावीच लागते. निमित्त होतं शरद पवारांच्या वाढदिवसाचं. त्या वेळी अजित पवारही होते, त्यांच्या उपस्थितीने तर कार्यक्रम गाजला होता आणि दोन पक्षांच्या विलीनीकरणाच्या प्रक्रियेवर अप्रत्यक्षपणे शिक्कामोर्तब झालं होतं. तेव्हा त्या सोहळ्याला पहिल्यांदा आले ते मोठे उद्योजक- घनिष्ठ मित्र गौतम अदानी. त्यानंतर आले राहुल गांधी आणि प्रियंका गांधी-वाड्रा. त्या वेळीही कार्यक्रमामध्ये गप्पा रंगल्या. राहुल-प्रियंका दोघेही शरद पवारांशी बोलत असल्याचं छायाचित्र प्रसिद्ध झालं होतं. या कार्यक्रमामध्ये राहुल गांधी आणि गौतम अदानी यांचं हस्तांदोलन झालं होतं. राहुल गांधी अदानींवर किती टीका करतात हे सगळ्यांना माहीत आहे. तरीही शिष्टाचाराचा भाग म्हणून दोघांनी हस्तांदोलन केलं असेलही. पण, चर्चा तर होणारच! तशी झालीही... या वेळीही 'सहा जनपथ'वरील कार्यक्रमाच्या वेळी हे दोघे एकाच वेळी उपस्थित होते. राहुल, प्रियंका, त्यांची दोन मुलं, सोनिया गांधी असं सगळं गांधी कुटुंब होतं. त्याच वेळी गौतम अदानीही होते. या वेळी मात्र राहुल-अदानी हस्तांदोलन झालं नाही. तसं होणारच नव्हतं म्हणा. मोठ्या मंडपात ढीगभर पत्रकार कॅमेरे घेऊन उभे होते. अदानी वधु-वरांना भेटले. तेव्हा गांधी कुटुंब बाजूला एका टेबलावर गप्पा मारत बसले होते. तिथं खरगे वगैरे काँग्रेसचे नेते होते. 'राष्ट्रवादी'चे जितेंद्र आव्हाड, रोहित पवार आदी नेते होते. अदानी निघून गेले तरी गांधी कुटुंब बसून होतं. नंतर पंतप्रधानांच्या स्वागताचीही वेळ झाली, त्यामुळं ते उठले असावेत. ते मंडपातून बाहेर पडले आणि आवारातच त्यांना मोदी भेटले. संसदेत नाही पण 'सहा जनपथ'वर एकमेकांची भेट झाली आणि संवादही झाला! पवार राजकारणातील दुवा कसा ठरतात हे पुन्हा दिसलं. असो. गांधी कुटुंब येऊन गेलं, अदानीही निघून गेले, मोदी वीस मिनिटं थांबून गेले. मग, कार्यक्रमात संगीत सुरू झालं आणि मैफल थोडी सैलावली. गटागटानं गप्पा सुरू झाल्या, त्या होत्या सर्वपक्षीय. सत्ताधारी-विरोधक हास्यविनोद रंगले. कार्यक्रम संपला. दुसऱ्या दिवशी हेच नेते संसदेच्या मकरद्वारासमोर एकमेकांना भिडले, हमरातुमरीवर येऊन. मग, सुरक्षारक्षकांना मध्ये पडून त्यांची भांडणं सोडवावी लागली होती. असो.

एकाच वेळी अनेक मोठे प्रकल्प नकोत...

मुंबई महानगरपालिकेच्या पहिल्या महिला आयुक्त अश्विनी भिडे यांनी 'लोकसत्ता'च्या 'लोकसंवाद' उपक्रमात मुंबई शहराला भेडसावणाऱ्या विविध समस्यांवर केवळ चर्चाच केली नाही, तर भविष्यात करण्यात येणाऱ्या उपाययोजनांची माहितीही दिली. रस्ते, वाहतूक व्यवस्था, मलनिस्सारण केंद्र, पाणीपुरवठा आदी विविध विभागांचा आढावाही त्यांनी घेतला.

मुंबई महापालिकेची मी आता आयुक्त असले तरी यापूर्वी २०२० ते २०२४ या कालावधीत मी अतिरिक्त आयुक्त म्हणून सुमारे चार वर्षे काम केले आहे. ज्यामध्ये अडीच वर्षे लोकप्रतिनिधींसोबत थेट काम करण्याची संधीही मिळाली. हे लोकप्रतिनिधी मुंबईतील २२७ प्रभागांचे प्रतिनिधित्व करतात आणि महापालिकेच्या बैठकांमध्ये स्थानिक समस्या मांडतात. पालिकेतील विविध समित्यांच्या कार्यपद्धतीची मला चांगली माहिती आहे. यापूर्वी मी स्थायी समितीसह अनेक समित्यांच्या बैठकींनाही उपस्थित राहिले आहे. त्यामुळे त्यांच्या सूचना आणि त्यांचा सहभाग हा खूप महत्त्वाचा असतो. त्यामुळे नुकतेच स्थानिक स्वच्छता मोहिमांमध्ये सक्रिय सहभाग घेण्यासाठी लोकप्रतिनिधींना पत्र पाठवून त्यांना सहभागी होण्याचे आवाहन करण्यात आले.

रस्त्यांचे जाळे विस्तारण्यासाठी मर्यादा

मुंबईतील रस्त्यांच्या सुधारणेसाठी केवळ अर्थसंकल्पात निधीची तरतूद करणे पुरेसे नसते. शहरात रस्त्यांचे जाळे पुरेसे आहे का आणि त्यांची गुणवत्ता कशी आहे, हे अधिक महत्त्वाचे असते. रस्त्यांच्या बाबतीत दोन प्रमुख मुद्दे आहेत, पहिला म्हणजे रस्त्यांच्या जाळ्याचा विस्तार (रोड नेटवर्क) आणि दुसरा म्हणजे रस्त्यांची गुणवत्ता. मुंबईतील रस्त्यांचे जाळे विस्तारण्यासाठी काही मर्यादा आहेत. मुंबईचा आकार हा सरळ एका रेषेत असून मुळातली सात बेटे नंतर एकमेकांना जोडली आहेत. मुंबईला तिन्ही बाजूंनी समुद्राने वेढलेले आहे. तसेच या क्षेत्रफळामध्ये संजय गांधी राष्ट्रीय उद्यानासारखे वनक्षेत्र आहे, समुद्र तटीय क्षेत्र आहे. त्यामुळे रस्त्यांची लांबी वाढवणे शक्य नाही. दिल्लीतील २८,००० किमी रस्त्यांच्या तुलनेत मुंबईत सुमारे २,०५० किमीचे रस्त्यांचे जाळे आहे. त्यामुळेच आपल्याकडे उड्डाणपूल, उन्नत मार्ग किंवा भूमिगत मार्ग यावर लक्ष केंद्रित केले जात आहे.

लोकसत्ता लोकसंवाद

ज्यामध्ये मरीन ड्राइव्हपासून दहिसर/विरारपर्यंत सागरी किनारा मार्गाचा विस्तार करण्यात येत असून हा प्रकल्प २०२९ - ३० पर्यंत पूर्ण करण्याचे लक्ष्य आहे. तसेच पूर्व पश्चिम जोडणारा गोरेगाव-मुलुंड जोड मार्गही बांधला जात आहे, त्याचा बराचसा भाग हा भूमिगत बोगद्याच्या स्वरूपात आहे. तर एमएमआरडीए बोरिवली-ठाणे बोगदा आणि वरळी-शिवडी उन्नत मार्ग तयार करून पूर्व मुक्त मार्गाचा विस्तार करण्यात येत आहे. सागरी किनारा मार्ग हा रस्ता एकमेव अधिकचा रस्ता आपण बनवत आहोत. पण बाकीचे मार्ग हे एकतर उन्नत मार्ग किंवा भूमिगत मार्ग असू शकतात. तेदेखील केवळ १०० ते २०० किमीपर्यंतच वाढवता येणार आहेत त्यापेक्षा जास्त वाढवता येणार नाहीत.

रस्त्यांच्या सुधारणेसाठी प्रयत्न

रस्त्यांच्या विस्ताराबरोबर रस्त्यांच्या गुणवत्तेचा विचार केला तर मुंबईतील एकूण २,०५० किमीपैकी १,९०० किमी रस्त्यांचे काँक्रीटीकरण पूर्ण झाले आहे. उर्वरित १५० किमी रस्त्यांचे पूर्ण काँक्रीटीकरण केले जात आहे. पावसाळ्यानंतर या कामाला सुरुवात होईल. काँक्रीटीकरणामुळे रस्त्यावरील खड्ड्यांचे प्रमाण निश्चितच कमी होईल. त्याचबरोबर सर्व प्रभागांमधील अरुंद रस्ते (९ मीटरपेक्षा कमी) रुंद करणे आणि विकास आराखड्यातील रस्ते पूर्ण करणे यालाही येत्या काळात प्राधान्य दिले जाणार आहे. रस्ते न खोदता उपयोगिता वाहिन्यांसाठी युटिलिटी डक्ट्सचा वापर करण्यासाठी युटिलिटी पुरवठादारांना (बेस्ट, महानगर गॅस, टेलिकॉम इत्यादी) प्रोत्साहन देण्यासाठी लवकरच नवीन धोरण लागू करण्याचे लक्ष्य आहे, ज्यासाठी एक स्वयंचलित आणि पारदर्शक ऑनलाइन प्रणाली तयार केली जात आहे.

मेट्रोमधील गुंतवणूक भविष्यासाठी आवश्यक

मेट्रोमध्ये अतिगुंतवणूक झाली अशी टीका केली जाते, पण ती मला मान्य नाही. मेट्रोसाठी करण्यात आलेली गुंतवणूक भविष्यासाठी अत्यंत आवश्यक आहे. मात्र, बस सेवा आणि 'लास्ट माइल कनेक्टिव्हिटी'साठी आवश्यक असलेल्या वाहतूक व्यवस्थेत तुलनेने कमी गुंतवणूक झाली आहे, असे नक्कीच म्हणता येईल. मेट्रोमुळे लास्ट माइल कनेक्टिव्हिटी म्हणजेच प्रवासाच्या शेवटच्या टप्प्यापर्यंत वाहन व्यवस्था मिळत नसल्याची टीका होत असते. परंतु, खरे तर बेस्ट बस, टॅक्सी, रिक्षा यांची यामध्ये मोठी भूमिका आहे. बेस्टकडे पुरेसा ताफा नसल्यामुळे प्रवाशांची ती गरज पूर्ण होत नाही. बेस्टचा ताफा वाढवण्यासाठी बेस्ट प्रशासन प्रयत्न करीत असून ताफा वाढवल्यावर हा प्रश्न मिटू शकतो. सध्या सात हजार बसगाड्यांची आवश्यकता असून प्रत्यक्षात केवळ अडीच हजार बसगाड्या आहेत. वेगवेगळ्या मेट्रो मार्गिका (मेट्रो २, मेट्रो ३, मेट्रो ६, मेट्रो ७) एकमेकांशी जोडल्यानंतर शेवटच्या टप्प्यातील कनेक्टिव्हिटी आपोआप सुधारेल. तसेच पादचाऱ्यांसाठी पदपथ आणि स्थानक परिसराचा विकास करण्याचे काम सुरू आहे.

सार्वजनिक वाहतूक व्यवस्थेचा विस्तार हाच दीर्घकालीन उपाय

मुंबईत अनेक प्राधिकरणे आहेत. मात्र मूलभूत नागरी सेवा पुरवण्याची प्रमुख जबाबदारी बृहन्मुंबई महानगरपालिकेचीच आहे. एमएमआरडीए, म्हाडा, एसआरए यांसारख्या विशेष नियोजन प्राधिकरणांची भूमिका मुख्यतः बांधकाम आणि विकास प्रकल्प उभारण्यापुरती मर्यादित असते. एकदा तो परिसर विकसित झाला की त्या भागातील पाणीपुरवठा, सांडपाणी व्यवस्था, रस्ते, कचरा व्यवस्थापन अशा मूलभूत नागरी सेवा पुरवण्याची जबाबदारी पालिकेवर येते. यामुळे काही प्रमाणात ताण येतो. मुंबईच्या २०३४ च्या विकास आराखड्यात विशिष्ट प्रमाणात एफएसआय वाढेल आणि त्यानुसार बांधकाम क्षेत्र वाढेल, असे गृहीत धरले होते. परंतु प्रत्यक्षात अनेक पुनर्विकास योजनांमुळे एफएसआय अधिक वाढतो आणि बांधकाम क्षेत्र अपेक्षेपेक्षा जास्त वाढते. काही भागांमध्ये रस्त्यांची रुंदी आणि वाढलेली बांधकामांची घनता यामध्ये ताळमेळ राहात नाही. मात्र मुंबईच्या भौगोलिक रचनेमुळे रस्ते मोठ्या प्रमाणात रुंद करण्यासही मर्यादा आहेत. त्यामुळे सार्वजनिक वाहतूक व्यवस्थेचा विस्तार हाच दीर्घकालीन उपाय आहे. काही रस्ते सार्वजनिक बांधकाम विभाग किंवा इतर संस्थांच्या अखत्यारीत होते. मात्र आता हळूहळू ती संख्या कमी होत आहे. एमएसआरडीसीने अनेक उड्डाणपूल पालिकेकडे हस्तांतरित केले आहेत. एमएमआरडीएकडील काही रस्ते आणि प्रकल्पही पूर्ण झाल्यानंतर पालिकेकडे येतात.

■ प्रकल्पांमध्ये सल्लागारांवर अवलंबित्व गैर नाही

प्रकल्पांच्या पूर्ततेसाठी सल्लागारांवर अवलंबून राहणे यात वाईट काही नाही. उदाहरणार्थ, मेट्रो ३ हा मुंबईतील पहिलाच मोठा भुयारी मेट्रो प्रकल्प होता. अशा प्रकारचे तांत्रिक कौशल्य आपल्याकडे उपलब्ध नव्हते. त्यामुळे रेल्वे आणि इतर क्षेत्रांतील तज्ज्ञांना एकत्र आणावे लागले. एमएमआरसीची मूळ तांत्रिक टीम फार मोठी नव्हती; मात्र त्यांच्यासोबत सुमारे ५०० सल्लागार कार्यरत होते. प्रकल्प पूर्ण झाल्यानंतर ते निघून गेले. सल्लागार विविध देशांतील आणि विविध प्रकल्पांवरील अनुभव घेऊन येतात. मेट्रो-३ मध्ये बोगदे आणि विशेषतः तंत्रज्ञानासाठी युरोपमध्ये काम केलेले तज्ज्ञ काही काळासाठी आमच्यासोबत होते. त्या अनुभवातून भारतीय अभियंत्यांनाही खूप शिकायला मिळाले. ही आंतरराष्ट्रीय अनुभवांची देवाण-घेवाण अत्यंत महत्त्वाची असते. सर्व काही आपणच करण्याचा प्रयत्न केला, तर प्रचंड मनुष्यबळ आणि मोठ्या निधीची गरज भासेल. मात्र सल्लागारांवरील अतिअवलंबित्व योग्य नाही. संस्थेने स्वतःची अंतर्गत क्षमतादेखील विकसित केली पाहिजे. दिल्ली मेट्रो रेल कॉर्पोरेशन याचे उत्तम उदाहरण आहे. सुरुवातीला त्यांनी सल्लागारांसोबत काम केले. नंतर स्वतःची क्षमता विकसित केली आणि आज ते इतर प्रकल्पांना सल्लागार सेवा पुरवतात. त्यांच्या महसुलाचा मोठा भाग सल्लागार सेवांमधून येतो. आपल्याकडील मेट्रो-३ च्या देखभाल आणि प्रचलनासाठी डीएमआरसीने स्पर्धात्मक निविदेत भाग घेतला आणि काम मिळवले. पालिकेच्या अभियंत्यांकडेही अनेक क्षेत्रांमध्ये अद्वितीय अनुभव आहे. भविष्यात मुंबई महापालिकेनेही स्वतःचे तांत्रिक कौशल्य विकसित करून सल्लागार सेवा देण्याइतकी क्षमता निर्माण केली पाहिजे.

मिठागरांच्या जमिनीवर बांधकाम

मिठागरे अर्थात सॉल्ट पॅन जमीन ही केंद्र सरकारच्या मीठ आयुक्त विभागाच्या मालकीची आहे. राज्य सरकारला विशिष्ट सार्वजनिक प्रकल्पांसाठी ही जमीन वापरण्याची परवानगी मिळू शकते. मात्र मुंबईतील अशा जमिनींच्या बाबतीत अंतिम निर्णय केंद्र सरकारच्या मंत्रिमंडळाकडून घेतला जातो. पूर्व उपनगरांमध्ये अनेक मिठागरे ही नैसर्गिक पाणी साठवण क्षेत्र म्हणून काम करतात. मात्र आताच्या काळात पर्जन्य जलवाहिन्यांच्या जाळ्यांची क्षमता वाढवली आहे. तर काही भागांत मिठागरे हीच पाणी साठवण क्षेत्र म्हणून काम करत असतात. त्यामुळे कोणती जमीन जतन करायची आणि कोणती सार्वजनिक सुविधांसाठी वापरायची, याचा अत्यंत सखोल अभ्यास करूनच निर्णय घेतला जातो. या जमिनींचा वापर शहराच्या गरजा आणि पर्यावरणीय समतोल या दोन्हींचा विचार करूनच व्हायला हवा.

■ डेटा सेंटरला पुनर्प्रक्रिया केलेले पाणी

मुंबई आणि नवी मुंबई परिसरात गेल्या काही काळात मोठ्या प्रमाणावर विदा केंद्रे अर्थात डेटा सेंटर उभी राहात आहेत. या डेटा सेंटरना पाणी कसे देणार हा प्रश्न विचारला जातो. मात्र राज्य सरकारचे डेटा सेंटर धोरण अत्यंत महत्त्वाचे आहे आणि त्यामध्ये पुनर्वापर केलेल्या पाण्याचा वापर अनिवार्य करण्यात आला आहे. विशेषतः नवी मुंबई आणि आसपासच्या भागात उभारल्या जाणाऱ्या अनेक डेटा सेंटरसाठी ही अट लागू आहे. सिडको, तसेच नवी मुंबई महानगरपालिकेकडे सांडपाणी प्रक्रिया प्रकल्प आहेत आणि तेथून तृतीय स्तरावर प्रक्रिया केलेले पाणी उपलब्ध होते. या डेटा सेंटर्सना पिण्याचे पाणी दिले जाते असे नाही. पुनर्वापर केलेले पाणीच त्यांना वापरणे बंधनकारक आहे. तसेच या डेटा सेंटरना मोठ्या प्रमाणावर वीज लागते. त्यासाठी त्यांना हरित ऊर्जा खरेदी करावी लागते किंवा निर्माण करावी लागते.

मुंबई महापालिकाही सांडपाण्यावर प्रक्रिया करून त्या पाण्याचा पुनर्वापर करण्याकरिता प्रकल्प उभे करीत आहे. डिसेंबर २०२७ पर्यंत सगळे सातही प्रकल्प पूर्ण होतील. मुंबईला दररोज ४,१०० दशलक्ष लिटर पाण्याची गरज असते आणि त्यापैकी २,४०० दशलक्ष लिटर पाण्याचे रूपांतर सांडपाण्यात होते. तर या २,४०० दशलक्ष लिटर पाण्यावर आतापर्यंत आपण दुय्यम प्रक्रिया करून ते समुद्रात सोडून देत होतो. पण आता या सांडपाणी प्रकल्पांमुळे या २,४०० दशलक्ष लिटर पाण्यावर प्राथमिक, दुय्यम आणि त्रिस्तरीय प्रक्रिया केली जाईल. त्यातून आपल्याला जे १,२०० दशलक्ष लिटर पाणी मिळेल जे शहरात पिण्याव्यतिरिक्त अन्य कामांसाठी वापरता येऊ शकेल. ते पाणी डेटा सेंटर्सला मिळू शकेल किंवा ज्या संस्थांना पिण्याव्यतिरिक्त अन्य कामासाठी पाण्याची गरज आहे त्यांना ते वापरता येईल.

> **मोकळ्या जागांची कमतरता भरून काढणार**
>
> मुंबईत मोकळ्या जागा, उद्याने आणि क्रीडांगणे यांची कमतरता आहे, हे खरे आहे. परंतु मुंबईची भू-संपत्ती अत्यंत मर्यादित आहे. त्यामुळे उपलब्ध जमिनीचा अत्यंत कल्पक पद्धतीने वापर करावा लागेल. भविष्यात इमारतींच्या रचनांमध्येच अधिक सार्वजनिक मोकळ्या जागा निर्माण करण्यावर भर द्यावा लागेल. कोस्टल रोड प्रकल्पामुळे सुमारे ७० हेक्टर क्षेत्र सार्वजनिक वापरासाठी उपलब्ध होणार असून तेथे उद्याने, क्रीडांगणे, सांस्कृतिक कार्यक्रमांसाठी जागा आणि नागरिकांसाठी खुली मैदाने विकसित केली जात आहेत.

भविष्यात पाण्याचा पुनर्वापर करावाच लागेल ...

आज मुंबईत प्रति व्यक्ती साधारण १३५ लिटर प्रतिदिन पाणीपुरवठा केला जातो. झोपडपट्ट्यांमध्ये तो सुमारे ५५ लिटर प्रतिदिन आहे. तर काही भागांत तो २०० लिटर प्रतिदिन पेक्षाही जास्त आहे. वितरण पूर्णपणे समसमान नाही. सध्याची मुंबईची पाण्याची एकूण मागणी सुमारे ४,६०० दशलक्ष लिटर आहे. मात्र मुंबई महापालिका ४,१०० दशलक्ष लिटर पाणीपुरवठा करत आहे. २०३० पर्यंत ही मागणी ६,००० दशलक्ष लिटरपेक्षा जास्त होईल. मग एवढे पाणी कोठून आणायचे, हा अत्यंत महत्त्वाचा प्रश्न आहे.

मुंबई मोठ्या प्रमाणात पावसावर अवलंबून आहे. एखाद्या वर्षी पाऊस पडला नाही तर आपल्याला पर्यायी स्रोतांचा विचार करावा लागेल. समुद्राच्या पाण्याचे गोड्या पाण्यात रूपांतर करण्याचा निक्षारीकरण प्रकल्प पालिकेने हाती घेतला आहे. परंतु तो अत्यंत खर्चिक आहे. या प्रकल्पातून पहिल्या टप्प्यात दरदिवशी २०० दशलक्ष लिटर पाणी मिळू शकणार आहे. तर भविष्यात आणखी एक प्रकल्प उभारण्यात येणार असून त्यातून एकूण सुमारे ६०० दशलक्ष लिटर प्रतिदिन पाणी मिळू शकणार आहे. याशिवाय गारगाई धरण प्रकल्पावरही काम सुरू झाले असून त्यातून सुमारे ४५० दशलक्ष लिटर प्रतिदिन पाणी मिळेल. या सर्व प्रकल्पांमधून मिळून सुमारे १००० दशलक्ष लिटर प्रतिदिन अतिरिक्त पाणी उपलब्ध होईल. मात्र तेही पुरेसे ठरणार नाही. म्हणूनच पाण्याचा पुनर्वापर करणे अत्यावश्यक आहे. सांडपाणी पुनर्प्रक्रिया प्रकल्पातून दर दिवशी मिळणारे १२०० दशलक्ष लिटर पुनर्प्रक्रिया केलेले पाणी भविष्यात अत्यंत उपयुक्त ठरणार आहे. आज सिंगापूरमध्ये पाण्याचा प्रत्येक थेंब पुनर्वापर केला जातो. इस्रायलमध्येही मोठ्या प्रमाणावर पाण्याचा पुनर्वापर होतो. त्यामुळे हे तांत्रिकदृष्ट्या कठीण नाही. मात्र आपली मानसिकता आणि पायाभूत सुविधा बदलण्याची गरज आहे. सध्या पालिकेची पाणीपुरवठा व्यवस्था विशिष्ट पद्धतीने तयार करण्यात आली आहे. मुंबईला सात धरणांमधून पाणी मिळते. काही जलाशये जवळ आहेत, तर काही सुमारे १५० किमी अंतरावर आहेत. तेथून गुरुत्वाकर्षणाने आणि पंपिंग प्रणालीद्वारे पाणी शहरात आणले जाते, त्यावर प्रक्रिया करून ते उंच जलाशयांमध्ये साठवले जाते आणि तेथून विविध भागांत पुरवठा केला जातो.

सांडपाणी प्रक्रिया केंद्रातून मिळणारे पाणी या व्यवस्थेत कसे समाविष्ट करायचे? त्यासाठी आम्ही काही भूमिगत बोगदे उभारत आहोत. या बोगद्यांद्वारे पाणी मुख्य वितरण केंद्रापर्यंत आणले जाईल आणि त्यानंतर विद्यमान वितरण व्यवस्थेत त्याचा वापर केला जाईल. पिण्याव्यतिरिक्तच्या कामासाठी पाणी मात्र स्वतंत्र मोठ्या ग्राहकांना पुरवावे लागेल. भविष्यात जर मान्सूनमध्ये मोठी घट झाली, तर प्रत्येक थेंबाचा पुनर्वापर करावा लागेल आणि त्यासाठी संपूर्ण जलपुरवठा व्यवस्थेत बदल करावे लागतील.

पाण्याची गळती आणि चोरी

आज मुंबईत सुमारे ३८ टक्के पाणी 'नॉन-रेव्हेन्यू वॉटर' म्हणून गणले जाते. म्हणजे या पाण्याचा हिशोब नाही. त्यामागे दोन प्रमुख कारणे आहेत, पाणी चोरी आणि गळती. पाणी चोरी काही प्रमाणात नियंत्रणात आणता येते आणि झोपडपट्ट्यांचे पुनर्विकास होत गेल्यास ती कमी होईल. अनेक ठिकाणी घराघरांत अधिकृत पाणी जोडणी देण्यासाठी जागेचीच समस्या असते. त्याचबरोबर वितरण जाळ्यातील गळतीही मोठ्या प्रमाणात आहे. त्यामुळे प्रत्येक थेंबाचा अत्यंत काटेकोर आणि जबाबदारीने वापर करणे आवश्यक आहे.

अनेक मोठ्या प्रकल्पांमुळे बांधकामाचा ताण...

मुंबईकडून इतर शहरांना पण अनेक गोष्टी शिकता येतील. इतर शहरांनीही प्रथम आपली दीर्घकालीन विकास दिशा, बलस्थाने, कमकुवत बाजू आणि भविष्यातील गरजा यांचा अभ्यास करून त्यानुसार पायाभूत सुविधा आराखडा तयार केला पाहिजे. मात्र एकाच वेळी खूप मोठ्या प्रमाणात प्रकल्प सुरू करणे टाळायला हवे. दिल्ली मेट्रोने टप्प्याटप्प्याने काम केले. पहिला टप्पा पूर्ण होत असतानाच दुसऱ्या टप्प्याची तयारी केली. त्यामुळे प्रवाशांना सेवा लवकर मिळाली, महसूल सुरू झाला आणि तो पुढील टप्प्यांसाठी वापरता आला. मुंबईत अनेक प्रकल्प एकाच वेळी सुरू असल्यामुळे बांधकामाचा ताण मोठा आहे. ते टाळले पाहिजे.

शब्दांकन– इंद्रायणी नार्वेकर

जंतर-मंतरचे ऋण

शिक्षण राजकीय पटलावर

मिलिंद मुरुगकर

आज बहुतांश शिक्षण संस्था राजकीय नेत्यांच्या हातात आहेत. हे प्रस्थापित राजकीय हितसंबंध नवनवीन शैक्षणिक प्रयोगांसाठी आणि स्पर्धेसाठी एक मोठा अडथळा ठरत आहेत. या पार्श्वभूमीवर कॉक्रोच जनता पार्टीमुळे शिक्षणाच्या गुणवत्तेचा मुद्दा पहिल्यांदाच प्रभावीपणे राजकीय पटलावर आला आहे.

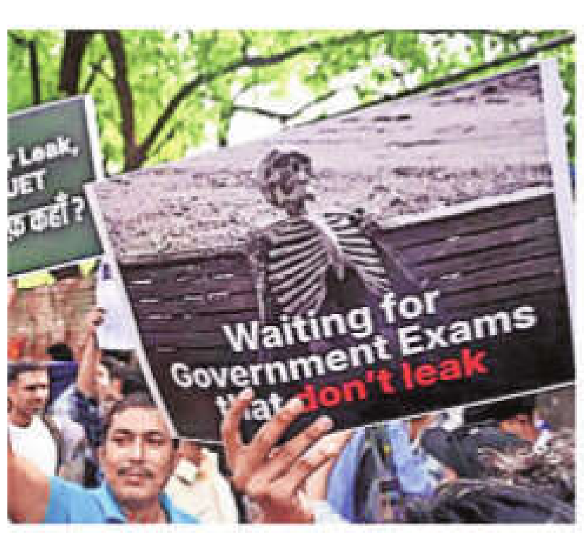

कॉक्रोच जनता पार्टीच्या जंतर-मंतरवरील आंदोलनाने देशातील शिक्षणाचा मुद्दा प्रभावीपणे राजकीय पटलावर आणला आहे. 'नीट' हे हिमनगाचे टोक आणि निमित्त होते. आंदोलक बेरोजगारी आणि बेरोजगारीशी संबंध असलेला शिक्षणाच्या गुणवत्तेचा मुद्दा याबद्दल असंतोष व्यक्त करत होते. हा असंतोष नेहमी व्यक्त होत राहणे आणि शिक्षण हा मुद्दा राजकीय पटलावर तसाच राहणे देशाच्या विकासासाठी आवश्यक आहे.

जंतर-मंतरवर हे आंदोलन सुरू होते तेव्हाच म्हणजे जुलै महिन्याच्या पहिल्या आठवड्यात केंद्र सरकारने देशाच्या उच्चशिक्षणाच्या प्रवेशासंदर्भात ऑल इंडिया सर्व्हे ऑन हायर एज्युकेशन (AISHE) हा एक महत्त्वाचा अहवाल प्रकाशित केला आहे. त्यातील धक्कादायक गोष्ट अशी की २०११ सालापासून पहिल्यांदाच बारावीपर्यंतचे शिक्षण पूर्ण झाल्यावर पदवीसाठी शिक्षण घेणाऱ्या विद्यार्थ्यांच्या संख्येत घसरण झाली आहे. आणि देशपातळीवर झालेल्या या घसरणीत महाराष्ट्राचा वाटा मोठा आहे. म्हणजे महाराष्ट्रात ही घसरण पाच टक्क्यांपेक्षा जास्त आहे. म्हणजे आधीच्या वर्षी जितके तरुण पदवी शिक्षणाकडे वळले त्याच्या संख्येमध्ये सुमारे दोन लाखांची घट झाली, ही गंभीर बाब आहे. बारावीपर्यंतचे शिक्षण घेतलेल्या महाराष्ट्रातील तरुणांपैकी फक्त २८ टक्केच पदवी देणाऱ्या शिक्षणाकडे वळू शकतात, हे कळणे हाच अनेकांसाठी धक्का असतो. आणि त्यात आता पाच टक्क्यांची घट.

इथे प्रश्न असा निर्माण होईल की अशी शक्यता नाही का की हे तरुण कौशल्य देणाऱ्या छोट्या अवधीच्या सर्टिफिकेट कोर्सेसकडे किंवा डिप्लोमा कोर्सेसकडे वळले असावेत? आणि असे असेल तर मग या आकडेवारीने आपण अस्वस्थ का व्हावे? पण वास्तव तसे नाही. केंद्र सरकार प्रकाशित करत असलेला हा अहवाल डिप्लोमा आणि सर्टिफिकेट कोर्सला प्रवेश केलेल्या विद्यार्थ्यांचीही आकडेवारी सांगतो. आणि आपल्याला दिसते की तिथे प्रवेश घेणाऱ्या विद्यार्थ्यांच्या संख्येत किरकोळ वाढ झाली आहे. त्यामुळे बारावीनंतर कोणत्याच प्रकारचे शिक्षण न घेणाऱ्या महाराष्ट्रातील विद्यार्थ्यांच्या संख्येत सुमारे दोन लाखांनी झालेली वाढ ही चिंताजनक गोष्ट ठरते. आणि त्यावर फारशी चर्चा होणे हे आणखीन चिंताजनक. आणि इथे जंतर- मंतर किंवा झारखंडमधील विद्यार्थ्यांची आंदोलने महत्त्वाची ठरतात. आपल्या पायाखाली काय जळते आहे याचे भान आपल्यामध्ये जागे ठेवतात.

महाराष्ट्रातील बारावीपर्यंतचे शिक्षण घेतलेले बहुसंख्य तरुण पुढील शिक्षणाकडे पाठ का फिरवत असतील आणि त्या संख्येत आता भर का पडली असेल? याचा अर्थ आता हे शिक्षण घेण्याचा उत्साह कमी झाला आहे किंवा त्यांच्या पालकांची आर्थिक क्षमता कमी झाली आहे. आणि ही दोन्ही कारणे एकमेकांशी जोडलेली आहेत. यापुढील शिक्षण घेण्यासाठी पैसा आणि वेळ यांची गुंतवणूक चांगला रोजगार, नोकऱ्या उपलब्ध करून देणार नसेल तर हे शिक्षण का घ्यायचे असाच विचार महाराष्ट्रातील बहुसंख्य पालक करत असतात आणि त्यांच्या उत्पन्नात घट झाली असेल तर अर्थातच हा निर्णय घेण्याची शक्यता जास्तच वाढते. बारावीनंतरच्या शिक्षणासाठी प्रवेश घेणाऱ्या विदयार्थ्यांचा आकडा आणि अशा तरुणांच्या एकूण संख्येशी त्यांची टक्केवारी गोळा करून जाहीर करायला २०११ सालापासून सुरुवात झाली. ही टक्केवारी वाढत गेली आहे पण वाढीचा वेग मंदावत गेला आणि आता पहिल्यांदाच देशपातळीवर पदवी शिक्षणासाठी प्रवेश घेणाऱ्या विद्यार्थ्यांच्या संख्येत थोडी घट झाली आहे. आणि देशपातळीवर झालेल्या या घटीचे कारण म्हणजे महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल या राज्यांतील विद्यार्थ्यांच्या संख्येत झालेली मोठी घट. तमिळनाडूमध्ये पदवी देणाऱ्या शिक्षणाकडे वळणाऱ्या विद्यार्थ्यांच्या संख्येत वाढ झाल्याचे संबंधित अहवालामध्ये दिसते. पण महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश आणि पश्चिम बंगाल या राज्यांतील घट इतकी जास्त आहे की याचा परिणाम म्हणून देशपातळीवरील या आकड्यांतदेखील घट झालेली दिसते.

एक सर्वसामान्य समज असा आहे की प्रगत देशात खूप कमी विद्यार्थी हे पदवीच्या शिक्षणासाठी प्रवेश घेतात. पण हे खरे नाही. उदाहरणार्थ अमेरिकेत हे प्रमाण ६४ टक्के आहे. म्हणजे भारताच्या जवळपास दुप्पट. सर्व प्रगत देशांत हे प्रमाण भारतापेक्षा दुपटीहून अधिक आहे. आणि या सर्व देशांत या शिक्षणाची गुणवत्ता ही भारतापेक्षा किती तरी चांगली आहे. केंद्र सरकारने ही आकडेवारी जाहीर केली त्याच वेळेस केंद्र सरकारने देशाच्या जीडीपीच्या तुलनेत शिक्षणावरील खर्च कमी केला हा मुद्दादेखील चर्चेत आला होता. शिक्षणावरील खर्च वाढवला पाहिजे असे सातत्याने मांडले जात असताना असे घडले, हे कमालीचे आक्षेपार्ह आहे. पण उच्चशिक्षणाच्या गुणवत्तेचा मुद्दा खूप गुंतागुंतीचा आणि आव्हानात्मक आहे.

या आव्हानाचा एक मुख्य पैलू म्हणजे पदवीने गमावलेले संकेत मूल्य (सिग्नलिंग इफेक्ट). पदवी हा बाजारपेठेसाठी एक 'संकेत' असतो. असायला हवा. तो याची खात्री देतो की पदवीधारकाकडे कामासाठी लागणारे ज्ञान आणि कौशल्य आहे. पण भारतातील बहुसंख्य महाविद्यालयांमधील गुणवत्तेचा दर्जा खालावल्यामुळे, पदवीने हा विश्वासार्ह संकेत देण्याची क्षमता गमावली आहे. पदवी ही आता केवळ एक 'किमान औपचारिक गरज' उरली असून ती विद्यार्थ्याच्या खऱ्या ज्ञानाची आणि कौशल्याची ग्वाही देत नाही. असे घडण्यामागचे एक प्रमुख कारण म्हणजे आज उच्चशिक्षणाच्या गुणवत्तेसाठी जी नियामक व्यवस्था आहे तिने सांभाळलेले हितसंबंध. बाजारपेठेला ज्या कौशल्याची, ज्ञानाची आवश्यकता असते असे ज्ञान आणि कौशल्य देणाऱ्या नवीन शिक्षणसंस्थांची निर्मिती करणे आजच्या नियामक व्यवस्थेत जवळपास अशक्य आहे. त्यामुळे प्रस्थापित संस्थांना स्पर्धेपासून संरक्षण लाभते. त्यांच्यावर शिक्षणाची गुणवत्ता वाढवणे, आपल्या अभ्यासक्रमात बदल करणे, शिकवण्याच्या पद्धतीत बदल करणे यासाठी आवश्यक तो दबाव नसतो. त्यामुळे खऱ्या शिक्षणप्रेमी उद्योजकांचे खच्चीकरण होते. याउलट, या 'लायसन्स-परमिट राज'चा फायदा राजकीय नेत्यांनी घेतला असून, तेच आज देशातील नवीन शिक्षण संस्थांचे सर्वात मोठे पुरवठादार बनले आहेत. हे प्रस्थापित राजकीय हितसंबंध नवनवीन शैक्षणिक प्रयोगांसाठी आणि स्पर्धेसाठी एक मोठा अडथळा ठरतात. उच्चशिक्षणाच्या ढासळलेल्या गुणवत्तेसंदर्भातील हे एकमेव नसले तरी महत्त्वाचे कारण आहे. त्यामुळे शिक्षणाचे बाजारीकरण झाले आहे या वाक्यात तथ्य आहे पण ते मर्यादित अर्थाने आहे. कारण आजच्या व्यवस्थेत कमी गुणवत्तेचे आणि बाजारव्यवस्थेच्या मागणीला अनुरूप असे शिक्षण न देताही टिकून राहता येते. इतकेच नाही तर तशाच गुणवत्ता नसलेल्या नवीन शिक्षण संस्थांच्या निर्मितीसाठीदेखील त्यांना प्रोत्साहन मिळत राहते.

पदवीचे हे 'संकेत मूल्य' (Signaling Value) विद्यार्थी खर्च करत असलेल्या पैशांच्या आणि वेळेच्या तुलनेत कमी होते, तेव्हा पदवी शिक्षणाकडे पाठ फिरवणे हा पालकांसाठी एक तर्कसंगत आर्थिक निर्णय ठरतो. विद्यार्थी मग या व्यवस्थेतून बाहेर पडणे पसंत करतात. आधीच्या वर्षीच्या तुलनेत महाराष्ट्रातील दोन लाख तरुणांनी पदवी शिक्षणाकडे फिरवलेली पाठ आपल्या उच्चशिक्षणाची वाढती निरुपयोगिता दाखवते. आव्हान मोठे आहे. पण ते पेलायलाच हवे. शिक्षण क्षेत्रातील आपल्या देशाचे मोठे अपयश हे पक्षीय राजकारणाच्या मर्यादा ओलांडते. राजकीय पक्षांनी शिक्षण क्षेत्राशी असलेले हितसंबंध तोडावेत यासाठी त्यांच्यावर सदोदित दबाव असण्याची गरज आहे. कॉक्रोच जनता पार्टीचे आंदोलन हे शिक्षणसंदर्भातील अतिशय निराशाजनक पार्श्वभूमीवर आशेची एक झुळूक आहे. शिक्षणाच्या गुणवत्तेचा मुद्दा पहिल्यांदाच प्रभावीपणे राजकीय पटलावर येत आहे. तो तसाच दीर्घकाळ टिकून राहणे आवश्यक आहे.

आर्थिक आणि सामाजिक प्रश्नांचे अभ्यासक
milind.murugkar@gmail.com

80वें बरस को जो सोचना है

हम अगले दशक में बुढ़ाने लगेंगे। क्या हम उस चुनौती के लिए तैयार हैं? इस मुद्दे पर अभी से सोचना होगा। क्यों न इस विचार यात्रा का आरंभ आज से ही किया जाए? हमें यह भी सोचना होगा कि जो पीछे छूट गया है, उसे कैसे संजोएं? जो आगे की राह रोक रहा है, उससे कैसे मुक्ति पाएं! आजादी के 80वें वर्ष के पहले सप्ताह का इससे सार्थक कोई और उपयोग नहीं हो सकता।

आजकल स्तंभ के तहत प्रकाशित आलेखों के लिए

शशि शेखर

आजकल

स्वतंत्रता दिवस समारोह की खुमारी के बाद हमें कुछ जटिल मुद्दों पर विचार के लिए खुद को तैयार करना चाहिए। क्या हैं ये मुद्दे?

मैं आपको 1960 के दशक के उत्तर प्रदेश में ले चलना चाहता हूं। उसी की शुरुआत में मेरा वाराणसी में जन्म हुआ था। उसी दशक में मेरी पीढ़ी को चेतना हासिल होनी आरंभ हुई थी। हमारा लोकतंत्र भी दो आम चुनावों के बाद अपनी मजबूत उपस्थिति दर्ज कराने लगा था। तमाम युगांतरकारी काम उसी दशक में हुए। तब से अब तक का यह सफरनामा किसी व्यक्ति विशेष या पीढ़ी का नहीं, बल्कि समूचे मुल्क का है। उन दिनों के आईने में आज को देखना, खुद को आंकने के बराबर है।

शैशवकाल में देखी गंगा का चौड़ा पाट और उसमें तिरती नावें मुझे आज भी नहीं भूलतीं। उस दौरान शहर में घंटों बिजली नहीं रहती और गांवों में तो अधिकांश घर 'बत्तीविहीन' थे। उन्हीं दिनों भयंकर अकाल और सूखा पड़ा था। गंगा की धारा सूख चली थी और उसके किनारे की कीचड़ में अक्सर मरी मछलियां फंसी दिखाई देतीं। पास-पड़ोस के जंगलों से आदिवासियों के जत्थे के जत्थे मिर्जापुर शहर में भोजन प्राप्ति की उम्मीद में आते और निराश लौट जाते।

जो नहीं जानते, उन्हें बता दूं कि इंसानी सभ्यता के ये आदि मानव मजबूरी में महुआ के फूल तक खा लेते हैं, लेकिन आसमानी आग ने पेड़ों को ठूंठ में तब्दील कर दिया था। मेरी यादों में राशन की वे सरकारी दुकानें भी बसी हैं, जहां लंबी लाइनें लगतीं और उनके सिमटने से पहले वहां ताला लटक जाता। उसी दहाई में भारत और पाकिस्तान के बीच जंग छिड़ी थी। इस जंग में हमारे जवानों के शौर्य ने तीन साल पहले चीन से हुई हार का कलंक हल्का कर दिया था।

युगांतरकारी माने जाने वाले जवाहरलाल नेहरू भी इसी दहाई में परलोक सिधारे और उनकी जगह आए लाल बहादुर शास्त्री भी अल्पायु साबित हुए थे। इंदिरा गांधी का आगमन शास्त्री जी के असामयिक देहावसान की देन था। भारत में वंशवादी राजनीति की परंपरा तभी शुरू हुई। उन दिनों दलित तमाम सार्वजनिक कुओं या जलाशयों से पानी नहीं ले सकते थे और विवाह के दौरान घोड़ी नहीं चढ़ सकते थे।

मुसलमान अपेक्षाकृत बेहतर स्थिति में थे, लेकिन विभाजन का निरर्थक अपराध बोध उनके ऊपर हावी था। देश को पहला मुस्लिम राष्ट्रपति और अब तक की अकेली महिला प्रधानमंत्री तभी मिलीं। अमेरिका तक में तब यह अकल्पनीय था। उसी दौरान पिछड़ों ने दक्षिण भारत की राजनीति में अपनी जबरदस्त दखल दिखाई, जो बदलती सियासत का दिशा संकेत थी। इसके बावजूद राजे-रजवाड़ों और जमींदारों का रौब कायम था।

उधर, खेल, शिक्षा, तकनीक और विज्ञान के मामलों में हमने कदम बढ़ाने शुरू कर दिए थे। 1960 के रोम ओलंपिक में पदक न जीत पाने के बावजूद मिल्खा सिंह ने दुनिया का दिल जीत लिया था। जकार्ता एशियन खेलों में दो स्वर्ण भी उन्होंने हासिल किए थे। फुटबॉल और हॉकी का वह स्वर्ण-काल था। नवाब पटौदी के नेतृत्व में भारतीय क्रिकेट टीम न्यूजीलैंड को हरा चुकी थी। इसी दौरान भारतीय प्रबंधन संस्थान स्थापित होने शुरू हुए। थुंबा से पहला रॉकेट छोड़ा गया और बाद में इसरो अस्तित्व में आया। स्पेस के साथ एटमी ऊर्जा के लिए भी यह दशक मील का पहला पत्थर था।

आज भारत आर्थिक महाशक्ति बनने की ओर अग्रसर है, लेकिन विसंगतियां कायम हैं।

साल 2009 से नई दिल्ली में अलग-अलग गठबंधनों का ही सही, लेकिन मुकम्मल सरकारों का शासन है। बिजली, स्वास्थ्य, शिक्षा जैसे क्षेत्रों में जबरदस्त बढ़ोतरी हुई है, लेकिन यह भी सच है कि सरकारी आंकड़ों और जमीनी हकीकत में बहुत फर्क है। हमारे पास संसार के सर्वाधिक स्नातक हैं, लेकिन उनमें से करीब 45 फीसदी अपनी डिग्री के अनुरूप

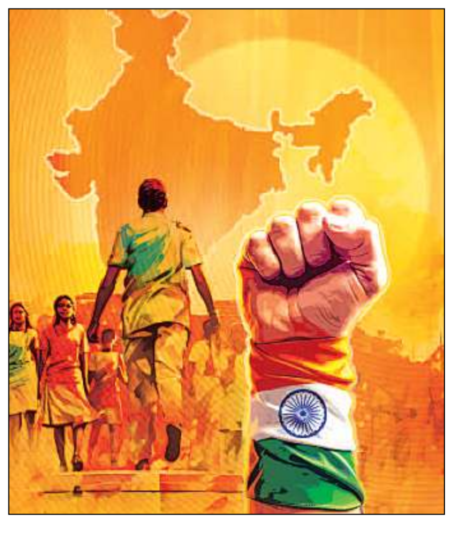

काम हासिल करने के योग्य नहीं हैं।

प्रकृति का हाल भी अच्छा नहीं है। भागीरथी की पवित्रता और प्रवाह, दोनों छीज रहे हैं। इस समय बारिश का मौसम है, लेकिन बिहार की 26 नदियां सूखी पड़ी हैं। उत्तराखंड से खबर है कि वहां की वन छतरी 25 प्रतिशत के आसपास लुट चुकी है। इससे वर्षा का जल पेड़ों के बजाय सीधे शिलाओं से टकराकर तबाही का सबब बन जाता है। स्वतंत्रता दिवस की पूर्व संध्या पर जब ये पक्तियां लिख रहा हूं, तब भी चमोली की एक सुरंग में मलबा भरने से घायल 14 लोग अस्पताल में जिंदगी और मौत से जूझ रहे हैं। इस हादसे में अब तक सात लोगों की मौत हो चुकी है।

ऐसे में, अनायास याद आता है, जिन छोटे शहरों में मैंने बचपन गुजारा, वहां बिजली और हर घर नल जल भले न हो, लेकिन बारिश होने पर जानलेवा जलभराव भी नहीं होता था। आज देश की व्यापारिक राजधानी मुंबई तक में जलजमाव राहगीरों के लिए काल साबित होता है। हमारे मंझोले शहरों में आज अगर 'हाईराइज बिल्डिंग' बन रही हैं, तो गांव के गांव वीरान हो रहे हैं।

तय है। आबादी का संतुलन कायम रखना है, तो रोटी और रोजगार को हमें गांवों तक वापस ले जाना होगा। सीमाओं की सुरक्षा के साथ पर्यावरण और सामाजिक सुरक्षा को भी समूची संवेदना के साथ सहेजना होगा। 1991 की आर्थिक क्रांति के बाद हमने भारत को 'इंडिया' बनाने की कोशिश की है। नतीजतन, आर्थिक विषमता ने अब सारे कीर्तिमान तोड़ दिए हैं। ऐसी असमानताएं सोवियत संघ को तोड़ चुकी हैं। यूरोप के तमाम देशों का नक्शा बदल चुकी हैं।

इसके बावजूद निराश होने की जरूरत नहीं है। हम अपनी विषमताओं और विवशताओं की जंजीरें तोड़कर आगे बढ़ना जानते हैं। तमाम गुलाम, खिलजी और मुगल वंश आए, यहीं के हो गए। डच, फ्रेंच और अंग्रेज आए, चले गए। हमने हरेक से जो सीखा, उसे आत्मसात किया। इस्लाम ने हमें बराबरी का संदेश दिया, तो पश्चिमी रवायतों से हमने सती प्रथा जैसी प्रथाओं से मुक्ति पाई। ऐसे तमाम उदाहरण हमारे इर्द-गिर्द मौजूद हैं। आजादी के बाद के ये 79 साल इस दास्तान को साल-दर-साल बुलंद करते आए हैं।

जो रुक जाए, वह भारत और भारतीयता नहीं है।

आज जब 1960 के दशक में जन्मी पीढ़ी खुद उम्र की छठी दहाई से गुजर रही है, तब इस बात की खुशी है कि हम युवाओं का देश हैं। संभावनाएं, ऊर्जा और यौवन एक-दूसरे के पूरक होते हैं, लेकिन इस सिक्के का दूसरा पहलू यह है कि हम अगले दशक में बुढ़ाने लगेंगे। तीस साल बाद हिन्दुस्तान में जवानों से ज्यादा बुजुर्ग होंगे। क्या हम उस चुनौती के लिए तैयार हैं? इस मुद्दे पर अभी से सोचना होगा। क्यों न इस विचार यात्रा का आरंभ आज से ही किया जाए? हमें यह भी सोचना होगा कि जो पीछे छूट गया है, उसे कैसे संजोएं? जो आगे की राह रोक रहा है, उससे कैसे मुक्ति पाएं!

आजादी के 80वें वर्ष के पहले सप्ताह का इससे सार्थक कोई और उपयोग नहीं हो सकता।

@shekharkahin
@shashishekhar.journalist

जीना इसी का नाम है

दादासाहेब भगत
उद्यमी

ऑफिस ब्वॉय से उद्यमी बनने की प्रेरक यात्रा

लगभग 1,000 कमरों के उस अतिथि-गृह में 500 मीटर का एक गलियारा था, जिसमें दिन भर पोंछा लगाने का जिम्मा दादासाहेब को मिला। छोटी उम्र से ही वह शारीरिक श्रम करते आ रहे थे, जबकि उसी दफ्तर में उनके हमउम्र सिर्फ कंप्यूटर पर काम करके काफी पैसे कमा रहे थे।

हम सुधरेंगे, जग सुधरेगा- यह कोई नारा नहीं है, हालांकि इसे उपदेश देने या नारे के रूप में ही ज्यादा इस्तेमाल किया गया, जबकि यह तो विशुद्ध जीवन-दर्शन है। अध्यात्म में सूक्ष्म धरातल पर ही नहीं, एक सभ्य नागरिक, मनुष्य बनने की कसौटी पर भी। हर कोई अपने आप को संवारने, श्रेष्ठ बनाने में जुट जाए, तो किसी परिवार, समाज, राष्ट्र और इस दुनिया को स्वर्ग बनने से कौन रोक लेगा? यह कहना आसान है, करना बहुत कठिन, क्योंकि इसके लिए पहली कुर्बानी अपनी अना की देनी होगी। दादासाहेब भगत ने यही किया, अपने अहंकार को बाजू में रखा, कर्म की पूजा की और देश के लिए मिसाल बन गए। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने अपने *मन की बात* कार्यक्रम में इनकी खूब सराहना की।

महाराष्ट्र का बीड जिला अक्सर सूखाग्रस्त होने के कारण देश-दुनिया में सुर्खियां बटोरता रहा है। यहीं के एक गरीब परिवार में आज से 35 साल पहले दादासाहेब पैदा हुए। पिता और माता, दोनों खेतिहर मजदूर थे। मां को भी मजदूरी इसलिए करनी पड़ती थी, ताकि दोनों वक्त चूल्हा जल सके। ऐसे में, दादासाहेब की पढ़ाई-लिखाई की ओर उनका ध्यान क्या जाता? फिर भी, पिता ने गांव के सरकारी स्कूल में उनका दाखिला करा दिया था। चूंकि वह इलाका अक्सर सूखाग्रस्त रहता है, इसलिए गांव में पूरे साल मजदूरी लायक काम नहीं होता है, इसलिए मजदूर परिवार छह महीने तक दूसरे गांव जाकर गन्ने की कटाई, लदाई का काम करते हैं। उन दिनों में दादासाहेब सरकारी स्कूल के बोर्डिंग में ही रहते थे।

गरीबी और अभाव के बीच बड़े हो रहे दादासाहेब को गर्भावस्था के आखिरी महीनों में भी मां को गन्ना काटते और ढोते देखकर गहरी पीड़ा हुई, इसलिए बड़े होते ही छुट्टियों के दिनों में वह पिता के साथ कुआं खोदने की मजदूरी करने लगे। तब उन्हें 80 रुपये दिहाड़ी मिला करती थी। स्कूल के साथ-साथ मजदूरी करके दादासाहेब ने दसवीं तक की पढ़ाई पूरी की। इसके बाद एक साल का आईटीआई का डिप्लोमा कोर्स किया। वहां से 'ब्लू कॉलर वर्कर' का प्रशिक्षण लेकर वह नौकरी की तलाश में पुणे आ गए।

दादासाहेब अब जल्द से जल्द अपने माता-पिता को कुछ सुकून के पल मुहैया कराना चाहते थे। पुणे की एक फैक्टरी में नौकरी भी मिल गई, मगर तनख्वाह सिर्फ 4,000 रुपये थी। इतने पैसों में वह अपने परिवार की मदद क्या ही कर पाते, मगर उस समय उनके पास विकल्प भी क्या था? वहीं उन्हें इन्फोसिस के अवसर के बारे में पता चला। किसी ने बताया कि वहां 'ऑफिस ब्वॉय' को 9,000 रुपये मिलते हैं। दादासाहेब के मौजूदा वेतन से दोगुने से भी ज्यादा! उस वक्त पैसा उनके लिए बहुत महत्वपूर्ण था। इसलिए वह इन्फोसिस पहुंच गए।

दादासाहेब की नियुक्ति इन्फोसिस के एक बड़े गेस्ट हाउस

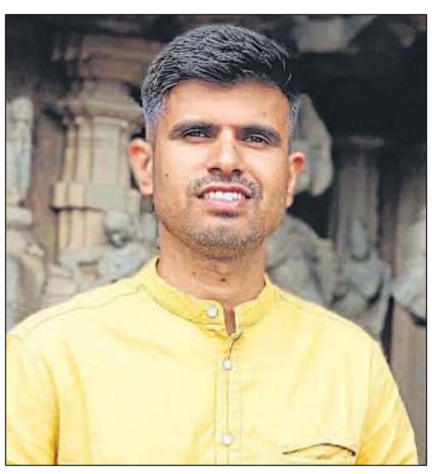

में हुई। लगभग 1,000 कमरों के उस अतिथि-गृह में 500 मीटर का एक गलियारा था, जिसमें दिन भर पोंछा लगाने का जिम्मा दादासाहेब को मिला। छोटी उम्र से ही वह शारीरिक श्रम करते आ रहे थे और यहां भी दिन भर शारीरिक परिश्रम करना पड़ रहा था, जबकि उसी दफ्तर में उनके हमउम्र सिर्फ कंप्यूटर पर काम करके काफी पैसे कमा रहे थे। दादासाहेब इन काम करने वालों से कहा करते- 'सर, मुझे भी आपके जैसा कुछ करना है।' सब उनकी शैक्षिक योग्यता पूछते और यही जवाब मिलता कि 'हम जो काम करते हैं, उसकी शैक्षणिक योग्यता तुम्हारे पास नहीं है।' एक दिन किसी ने कहा, 'हां! ग्राफिक्स डिजाइन और एनिमेशन के क्षेत्र में तुम कुछ कर सकते हो। उसमें 'क्रिएटिविटी' अधिक महत्वपूर्ण है।'

इसी मोड़ पर बचपन में स्कूल में सीखी गई ड्रॉइंग और पेंटिंग की याद आई। दादासाहेब नाइट शिफ्ट में ऑफिस ब्वॉय का काम करते और दिन में एनिमेशन स्कूल जाते। इस शुरुआत के साल बीतते-बीतते वह पुणे की ही एक कंपनी में बतौर पेशेवर डिजाइनर नियुक्त कर लिए गए थे। इसके बाद वह 'प्राइम फोकस टेक्नोलॉजीज' पहुंचे। वहीं काम करते समय एक सड़क हादसे ने दादासाहेब को कई दिनों के लिए बिस्तर पर समेट दिया। अचानक आई इस आपदा ने यह अवसर दिखाया कि वह टेम्पलेट बनाकर ऑनलाइन बेच सकते हैं। आइडिया काम कर गया। तनख्वाह से ज्यादा यहां से कमाई होने लगी। दादासाहेब ने कुछ ही दिनों में नौकरी छोड़ दी और अपनी पहली कंपनी 'नाइंथमोशन' की नींव रखी। पैसे आए, तो उन्होंने पुणे और गांव में बंगले बनवाए, गाड़ियां खरीदीं, दूसरी तमाम सुख-सुविधाएं भी जुटाईं।

फिर कोरोना आ गया। लॉकडाउन में दफ्तर बंद करना पड़ा, तो दादासाहेब भी बारगांव चले आए। मगर पहाड़ी गोदी में बसे गांव में बिजली-इंटरनेट की समस्या खड़ी हो गई। ऐसे में, उन्होंने अपनी जड़ों को याद किया कि किन अभावों में वह जीते थे। पुणे में अर्जित कुछ चीजों को समेटा और उससे हासिल पैसे को उन्होंने अपने स्टार्टअप में लगाने का फैसला किया। गांव के कुछ लड़कों के साथ मिलकर दादासाहेब ने पहाड़ी पर गोशाला जैसी एक छोटी सी जगह बनाई। वहां मोबाइल से इंटरनेट चलाना आसान था। एक तरफ गायें बंधतीं और दूसरी ओर वह गांव के बच्चों को डिजाइन सिखाया करते। दादासाहेब ने वहीं से अपनी स्टार्ट-अप कंपनी 'डू ग्राफिक्स' शुरू की, जिसने प्रधानमंत्री का ध्यान भी खींचा।

तनख्वाह से ज्यादा तो यहां से कमाई होने लगी। दादासाहेब ने कुछ ही दिनों में नौकरी छोड़ दी और अपनी पहली कंपनी 'नाइंथमोशन' की नींव रखी। काम चल निकला। पैसे आए, तो उन्होंने पुणे और अपने गांव में बंगले बनवाए, गाड़ियां खरीदीं, दूसरी तमाम सुख-सुविधाएं भी जुटाईं।

महामारी के बाद दादासाहेब पुणे लौटे, स्टार्टअप का कारवां आगे बढ़ा। वह शार्क टैंक में गए, तो उनके भक्तवत्सल प्रोडक्शन को अमन गुप्ता से एक करोड़ रुपये का निवेश भी मिला। तब से वह आगे ही बढ़ते जा रहे हैं। एक छोटे से गांव से निकले दादासाहेब भगत आज करोड़ों के मालिक हैं। डिजाइन की दुनिया की दिग्गज वैश्विक कंपनियों से वह प्रतिस्पर्द्धा कर रहे हैं। उनकी स्टार्टअप कंपनियां कई लोगों को रोजगार मुहैया करा रही हैं। ऐसे नौजवान को कौन सलाम न करेगा?

प्रस्तुति : चंद्रकांत सिंह

वो लम्हा

मैडोना
पॉप गायिका व कलाकार

मां की जगह कोई नहीं ले सकता

बच्चों की शरारतों का बोझ मां उठाती थीं। बच्चे गंदगी करते चलते और मां पीछे-पीछे साफ करती चलती थीं। वह बच्ची भी मनमानियों से मां को परेशान किया करती थी। उसे पता था कि मां को गंभीर बीमारी है। मां काम करते-करते थकने लगी हैं।

वह एक ऐसा मध्यवर्गीय अमेरिकी परिवार था, जिसमें बच्चे बड़े शरारती थे। बच्चों को न पिता टोकते थे और न मां डांटती थीं। उसी परिवार में एक बच्ची थी, जिसके दो बड़े भाई थे और दो छोटे भाई-बहन। अक्सर ऐसा होता है, मां-बाप सीधे हों, तो उनके बच्चे बहुत नाजायज हरकतों को अंजाम देते हैं।

जाहिर है, बच्चों की शरारतों का बोझ मां उठाती थीं। बच्चे गंदगी करते चलते और मां पीछे-पीछे साफ करती चलती थीं। वह बच्ची भी मनमानियों से मां को परेशान किया करती थी। उसे पता था कि मां को गंभीर बीमारी है। मां काम करते-करते थकने लगी हैं। एक दिन मां काम करते-करते थककर सोफे पर बैठी थीं और वह बच्ची अपनी जिद्द लिए पहुंच गई, 'मां, चलो मेरे साथ खेलो।' मां ने मना किया, पर बच्ची अड़ गई, 'चलो खेलो, जैसे पहले खेलती थी।' मां ने फिर मना किया, तो बच्ची उनकी पीठ पर चढ़कर हठ करने लगी। मां टस से मस नहीं हुईं। बच्ची ने गुस्से में मां की पीठ पर मुट्ठी से मारा, पर मां ने कुछ नहीं कहा।

तब बच्ची ने गौर किया कि मां रो रही हैं। बच्ची के भाव अचानक बदल गए। उसने मां को अपनी बांहों में भर लिया और उन्हें सिसकती हुई महसूस करने लगी। बच्ची को लगा कि मानो, उसकी मां ही छोटी बच्ची बन गई हो। भावनाओं का ज्वार उठा और बच्ची में न जाने कहां से परिपक्वता उमड़ आई। उसने मन ही मन में ठान लिया कि अब मां को कभी सताना नहीं है। ऐसा नहीं है कि उस दिन के बाद से वह बच्ची दुखी, कमजोर या बेबस हो गई। उसने सिर्फ यह फैसला किया कि अब से वह सामने आने वाले तमाम हालात को खुद अपने काबू में रखेगी और हर चीज अपने दम पर ठीक करने की कोशिश करेगी।

बच्ची ने मां को बार-बार अस्पताल में देखा। पिता को रोते-सिसकते देख कई बार टूटने को हुई, पर खुद को संभाला। कभी हमेशा खिलखिलाने और दूसरों को हंसाते रहने वाली मां खामोश होती चली गईं। बच्ची के दिल में दर्द का यह सिलसिला दर्ज होता चला गया। एक दिन मां ने खाने के लिए हैमबर्गर मांगा था, लेकिन उन्हें पता था कि वह खा नहीं पाएंगी। फिर भी बहुत दिनों से भूखी मां के मन में यह एक आखिरी इच्छा थी और न जाने कितनी अन्य इच्छाएं लिए मां हमेशा के लिए विदा हो गईं।

तब अनाथ हुई उस बच्ची की उम्र का महज छठा वर्ष चल रहा था और वह घर की बड़ी बहन या बेटी थी, तो अपने छोटे भाई-बहन की मां की भूमिका निभाने के लिए मजबूर होने लगी। वह समझ गई कि अब यहां से जो राह आगे जाएगी, उसे अकेले ही तय करना पड़ेगा। दिल की आवाज बनने के लिए मां आसपास कहीं नहीं होंगी, तब अपनी आवाज को ही बुलंद करना होगा।

पिता ने दूसरा विवाह कर लिया, तो हालात और मुश्किल हो गए। अफसोस, बिन मां की वह बेटी कभी अच्छी लड़कियों में नहीं गिनी गई। शायद उसे बहुत अच्छा बनना भी नहीं था, पर वह पढ़ाई में अव्वल थी। गायन, वादन, नृत्य में कुशल थी। स्टेज पर ड्रम बजाती थी, तो कभी गिटार बजाती थी। जिस दिन उसके पास कुछ पैसे जुट गए, वह पहली बार हवाई जहाज पर सवार अपने मिशिगन को छोड़ ख्वाब के नगर न्यूयॉर्क पहुंच गई। बिन मां की वह बेटी, ऊंचाई पर पहुंचना चाहती थी। वह ग्लैमर की दुनिया में खो गई। पिता और परिवार से संपर्क लगभग टूट गया।

कुछ ही वर्ष बाद एक दिन आया, जब पिता ने रेडियो पर एक गीत सुना, *एवरीबॉडी, कॉम ऑन, डांस ऐंड सिंग / एवरीबॉडी, गेट अप ऐंड डु योर थिंग।* वह बड़े अचंभित हुए कि यह तो उनकी सबसे बड़ी बेटी मैडोना की दिलकश आवाज है और यह उसी का लिखा गीत है, जिसे अब पूरी दुनिया सुन रही है।

मैडोना गीत-दर-गीत शोहरत के शिखर पर चढ़ती चली गईं। उन्होंने पश्चिमी संगीत और पॉप कल्चर को बदलकर रख दिया। वह अपने पहले एलबम के बाद ही दुनिया की सबसे महंगी गायिका बन गईं। उन्होंने फिल्मों में भी अभिनय किया। उनकी खूबसूरती ने उनकी कला में चार चांद लगा दिए।

16 अगस्त को जन्मीं मैडोना (जन्म 1958) 68 साल की हो चुकी हैं। इस उम्र में भी वह स्टेज पर किसी नवयौवना की तरह नाचती-गाती हैं। वह पॉप संसार में यूनिवर्सिटी की तरह हैं। अनगिनत कलाकारों ने उनकी खूबियों से ही नहीं, उनकी कमियों से भी बहुत सीखा है। संगीत प्रदर्शन से शास्त्रीय शिक्षा तक मैडोना की रचनाओं, विचारों, प्रभावों को बार-बार याद किया जाता है।

...और मैडोना अक्सर अपनी मां को याद करती हुई अंग्रेजी में जो गीत गाती हैं, उसके भाव देखिए, 'एक समय था, जब मेरी एक मां थी। उनकी जगह कोई नहीं ले सकता...। / मैं समझ न पाई, मैं तो बस एक बच्ची थी...। / ओह मां, आप मेरे साथ क्यों नहीं हैं... / मैं कर रही हूं अपने आंसू पोंछने की पूरी कोशिश।'

प्रस्तुति : ज्ञानेश उपाध्याय

हिंदी साहित्य का नया मिजाज

तिरछी नजर

सुधीश पचौरी हिंदी साहित्यकार

एक दिन उसने धमकी दी, मैं तुम्हें ब्लॉक कर दूंगा। मैंने कहा, कर दो ब्लॉक, उससे क्या हो जाएगा? तुम हो कौन? अपने को क्या समझते हो? क्या तुम खुदा हो? बात तो तुमने ही शुरू की थी, तुमसे जवाब न बन पड़ा, तो खिसियाकर अपनी पर उतर आए। किस-किस को ब्लॉक करोगे? एक दिन तुम खुद ही ब्लॉक हो जाओगे।

असहमति के ऐसे ही सीजन में एक कॉमरेड नाराज होकर कहने लगे, मैं तुम्हें 'अन्फ्रेंड' कर दूंगा। मैंने कहा, कर दो, तुम्हारी दोस्ती चाहिए ही किसे? मैं जरा असहमत हुआ, तो तुम इतने लाल-पीले हो गए? तुम तो अपने को 'जनवादी' कहते हो, जनंतात्रिक मूल्यों में यकीन करने वाला कहते हो और मेरी जरा सी असहमति नहीं सह पाए? असहमति को सहना ही तो जनतंत्र है। जो नहीं सह सकता, वह जनतांत्रिक कैसे?

आजकल हिंदी साहित्य की यही संस्कृति है। जब तक आप किसी की हां में हां मिलाते हैं, तब तक आप 'फ्रेंड लिस्ट' में हैं। 'माई डियर' हैं, साथी हैं, कॉमरेड हैं, मेरे हमदम मेरे दोस्त हैं, मेरी दोस्ती मेरा प्यार हैं, हमजुल्फ हैं, 'फैमिली' हैं, हम प्याला हम निवाला हैं।

हिंदी साहित्य में साहित्य कम, मेर-तेर अधिक है। जब तक हां जी, हां जी है, तब तक हां जी हां जी है, अगर ना जी है, तो ना जी है! जब तक आपके लिए कोई महान है, तब तक उसके लिए आप महान हैं, बाकी सब दुकान हैं। आपके बिना हिंदी साहित्य अधूरा है, बाकी घूरा है। जब तक आप दोस्त हैं, तब तक साहित्य में आप ही आप हैं। आप सबके बाप हैं। जिस दिन आपने आंखें मूंदकर हां में हां नहीं मिलाई, आप ब्लॉक हुए, अनफ्रेंड हुए, वर्गशत्रु हुए, दो कौड़ी के हुए।

इन दिनों हिंदी साहित्य में ऐसे ही छोटे-छोटे अनगिनत ईश्वर मिलते हैं, जिनका अहंकार उनके कद से सौगुना बड़ा है। सामने पड़ जाएं, तो आप 'हलो' भले कर लें, उनकी ओर से कभी हलो नहीं होता। आप पूछ लें, तो पूछ लें कि साथी कैसे हैं? वे कभी नहीं पूछते कि आप कैसे हैं? क्या हाल-चाल हैं? उनको लगता है, हलो किया, तो वे छोटे हो जाएंगे, हीन हो जाएंगे। बंदा सोचेगा, जरूर कोई गरज पड़ी है, तभी तो फोन कर रहा है, अन्यथा तो कभी फोन नहीं करता?

इन दिनों फोन भी 'कैल्कुलेट' करके उठाया जाता है। उठाने से पहले सोचता है- पता नहीं कौन है? अच्छा, यह उसकी कॉल है... पता नहीं, क्या चाहता है? कहीं उसकी कोई किताब तो नहीं आ रही कि फिर लिखने को कहे? ऊपर से सब कहते हैं कि सत्य एक है, जिसके अर्थ बहुत से हैं, लेकिन अंदर से कहते हैं- सत्य वही, जिसे मैं कहूं और अर्थ भी वही, जो मैं करूं। जो कहे 'नो', वो गया 'खो'।

इसी तरह, सब जानते हैं, *वादे वादे जायते तत्वबोधः बोधे बोधे भासते चंद्रचूड़ः*, यानी संवाद से ही सत्य का बोध होता है और बोध से शिव-दर्शन होते हैं, पर जैसे ही आपने संस्कृत का नाम लिया, आप पुराणपंथी हुए और शिवजी का नाम लिया, तो क्रांतिकारियों की नजर में आप हिंदूवादी, प्रतिक्रियावादी हुए, 'गो टु हेल' हुए। आप कहेंगे कि संस्कृत की न मानो, तो निराला की मान लो, जिन्होंने कहा है, आराधन का दृढ़ आराधन से दो उत्तर, तो जवाब आएगा कि आराधन का मतलब प्रार्थना, यानी भक्ति, यानी गुलामी। अब हमसे प्रार्थना करवाओगे सा...?

ऐसे लोग, पहले बात-बात पर संवाद की हत्या करते हैं, फिर रोते हैं कि संवाद नहीं है। मैं एक साहित्यिक समारोह में घुसता हूं। सब नामी-गिरामी आ-जा रहे हैं। सब अपने मोबाइल में घुसे हैं। कोई किसी से बोलता नहीं, जैसे आदमी नहीं, भूत गुजर रहे हों। साहित्य की कमीज तो है, तमीज नहीं है। बशीर बद्र ने तो पहले ही कह दिया था, *कोई हाथ भी न मिलाएगा, जो गले मिलोगे तपाक से/ ये नए मिजाज का शहर है, जरा फासले से मिला करो!*

जो हाल इस 'शेर' में 'शहर' का है, आज वही साहित्य का है, क्योंकि यह नए मिजाज का साहित्य है।

कटाक्ष

राजेंद्र धोड़पकर

79 साल की यात्रा

15 अगस्त केवल राष्ट्रीय गौरव का दिन नहीं, बल्कि उस अधूरे संकल्प को फिर से याद करने का भी दिन है, जिसे आजादी के समय हमने अपने सामने रखा था।

आजादी की 79वीं वर्षगांठ का यह ऐतिहासिक दिन हमें उस लम्हे की याद तो दिलाता ही है, जब भारत ने औपनिवेशिक शासन की लंबी रात से निकलकर अपने भाग्य का निर्णय स्वयं करने का अधिकार हासिल किया था; लेकिन यह दिन सिर्फ अतीत का उत्सव नहीं, बल्कि आत्म परीक्षण का अवसर भी है। आखिर स्वतंत्रता का अर्थ केवल विदेशी शासन से मुक्ति नहीं, बल्कि ऐसा समाज और राष्ट्र बनाना भी है, जहां हर नागरिक को गरिमा, अवसर, न्याय और अपनी आकांक्षाओं को पूरा करने की स्वतंत्रता हासिल हो। अब तक हमने जिस यात्रा को तय किया है, वह यकीनन असाधारण है। गरीबी, अशिक्षा, विभाजन और विस्थापन जैसी गहरी चुनौतियों का सामना करते हुए, आज अपना देश दुनिया की प्रमुख अर्थव्यवस्थाओं में जगह बना चुका है। लोकतंत्र की जड़ें मजबूत हुई हैं, विज्ञान और प्रौद्योगिकी ने नई ऊंचाइयां हासिल की हैं, अंतरिक्ष से लेकर डिजिटल तकनीक तक भारत ने अपनी क्षमताओं का लोहा मनवाया है। करोड़ों लोगों का जीवन बदला है और दुनिया के मंच पर भारत की आवाज पहले से कहीं अधिक प्रभावशाली हुई है। लेकिन उपलब्धियों का यह उत्सव हमें उन सवालों से विमुख नहीं कर सकता, जो आज भी हमारे सामने खड़े हैं। क्या आर्थिक विकास का लाभ समाज के अंतिम व्यक्ति तक समान रूप से पहुंच रहा है? क्या हम एक ऐसे समाज का निर्माण कर पा रहे हैं, जिसमें असहमति को लोकतंत्र की कमजोरी नहीं, उसकी शक्ति माना जाए? क्या हम देश के विभिन्न हिस्सों में दिख रही युवाओं की बेचैनी को खारिज कर सकते हैं? स्वतंत्रता का उत्सव तभी सार्थक होगा, जब हम इन प्रश्नों से ईमानदारी से रूबरू हों। विडंबना यह है कि जिस समय युवा लोकतांत्रिक संस्थाओं से अपने प्रश्नों का उत्तर चाहते हैं, उसी समय संसद में बहस, संवाद और सहमति की गुंजाइश लगातार सिकुड़ती दिखी। लिहाजा 15 अगस्त केवल राष्ट्रीय गौरव का दिन नहीं, बल्कि उस अधूरे संकल्प को फिर से याद करने का भी दिन है, जिसे आजादी के समय हमने अपने सामने रखा था।

भारत अब कूटनीति की मेज के किनारे प्रतीक्षा नहीं करता; उसकी शर्तें तय करने में शामिल होता है। पुरानी आदत के चलते पश्चिम अब भी हमें लोकतंत्र पर उपदेश देता है। पर, भारत का जवाब अब सिर्फ शब्दों में नहीं है। यह हमारी युवा पीढ़ी है, जो अपने भविष्य का निर्माण, प्रक्षेपण व संचालन खुद कर रही है।

अब यह देश प्रतीक्षा नहीं करता

आज भारत अपना 80वां स्वतंत्रता दिवस मना रहा है और साथ ही अपनी नियति से आठ दशकों के संघर्ष का हिसाब भी कर रहा है। हर वर्षगांठ उत्सव का अवसर होती है; यह वर्षगांठ आत्ममंथन का भी अवसर है, उन लड़ाइयों का, जो हमने अपनी सीमाओं के भीतर व बाहर लड़ीं; उस कीमत की, जो आजादी के लिए चुकाई गई, जिसे अब हम सहज मान बैठे हैं; और उस दूरी की, जो एक कमजोर नवजात गणराज्य से एक ऐसी सभ्यता तक तय हुई, जो एक बार फिर अपने स्वरों में बोलती है।

कभी ऐसा भी समय था, जब पश्चिमी कल्पना में भारत को महज एक कौतूहल बना दिया गया था, उसे सपेरों का देश तथा गरीबी की पहचान समझा जाता था और जिसकी संभावनाओं पर संदेह किया जाता था। पश्चिमी यात्री भारत से निराश होने की उम्मीद लेकर आते थे। अक्सर वैसा होता भी था। कूटनीति की उच्च मेज पर हमारी कोई जगह नहीं थी; बहुत हुआ, तो हमें उसके किनारे खड़े रहने की इजाजत थी, नीति में गुटनिरपेक्ष, सच कहें, तो सत्ता से पूरी तरह असंबद्ध। दुनिया की दिशा कहीं और तय होती थी। भारत बस देखता और प्रतीक्षा करता रहा।

लेकिन, अब वह भारत नहीं रहा। आज का भारत गुटनिरपेक्ष नहीं, बहु-संरेखित है, जिसे अब मनाया जाता है, जो मनाता नहीं। हम दुनिया की पांच सबसे बड़ी अर्थव्यवस्थाओं में शामिल हैं, और जब हम किसी देश के साथ आर्थिक संबंध गहरे करने का फैसला करते हैं, तो वह रिश्ता सिर्फ हमारा नहीं, उनका भी भविष्य गढ़ता है। अब हम मेज के किनारे प्रतीक्षा नहीं करते; उसकी शर्तें तय करने में शामिल होते हैं। पुरानी आदत के चलते पश्चिम अब भी हमें लोकतंत्र पर उपदेश देता है। पर, भारत का जवाब अब शब्दों में नहीं है, यह हमारी युवा पीढ़ी है, जो अपने भविष्य का निर्माण, प्रक्षेपण व संचालन खुद कर रही है। भारतीय निजी उद्यम अब अंतरिक्ष तक पहुंचते हैं, बिना सरकार की अनुमति या खजाने की प्रतीक्षा किए। जिस पीढ़ी को कभी बेचैन कहकर खारिज किया जाता था, वह आज उस सदी की नींव रख रही है, जिसे शायद भारत की सदी के रूप में याद किया जाएगा।

यह सब बिना कीमत चुकाए नहीं मिला। लगभग चार दशकों तक, स्वतंत्र भारत के जीवन का आधा हिस्सा, इस देश ने एक ऐसा युद्ध लड़ा है, जो कभी औपचारिक रूप से घोषित नहीं हुआः जम्मू-कश्मीर और उसके बाहर पाकिस्तान प्रायोजित आतंकवाद। पुलवामा से पहलगाम तक, इन हमलों का मकसद कभी सिर्फ नागरिकों को मारना और भय फैलाना नहीं था। उद्देश्य था भारत को धीमा करना, एक उभरती हुई शक्ति को उसके ही खून में डुबो देना, इससे पहले कि वह और ऊंचा उठे। पाकिस्तान, जो अपनी जनता को गरीबी से बाहर नहीं निकाल सका, उसने इसके बजाय हमारी धरती पर अराजकता निर्यात करना चुना। यह रणनीति अनुत्तरित नहीं रही। 2016 की सर्जिकल स्ट्राइक, उरी हमले के बाद, और 2019 की बालाकोट एयरस्ट्राइक, पुलवामा हमले के बाद, एक नए जवाबी सिद्धांत की घोषणाएं थीं। पर, पहलगाम की कायरतापूर्ण घटना के बाद 2025 का ऑपरेशन सिंदूर एक निर्णायक मोड़ साबित हुआ-यह प्रमाण कि भारत के धैर्य की एक सीमा है, पर उसकी पहुंच की नहीं। रावलपिंडी के निकट एक ठिकाने का धधकना, वह दृश्य है, जिसे पाकिस्तानी सैन्य प्रतिष्ठान जल्दी नहीं भूल पाएगा। भारत की मंशा यही है कि वह भूल भी न पाए।

आदित्य राज कौल
वरिष्ठ रक्षा पत्रकार और 'धुरंधर' के रिसर्च कंसल्टेंट

इस बाहरी सतर्कता के साथ-साथ, भीतर भी एक बड़ा फैसला हुआ। 2019 में अनुच्छेद 370 को हटाने से उस मनगढ़ंत अलगाववाद का अध्याय बंद हुआ, जिसने तीन दशकों से अधिक समय तक जम्मू-कश्मीर की पहचान तय की थी, और विकास व रोजगार के अवसरों की ओर एक धीमा, असमान, मगर वास्तविक रास्ता खुला। दशकों की उपेक्षा के बाद जम्मू-कश्मीर में रातोंरात बदलाव संभव नहीं था, पर यह अब शुरू हो चुका है।

इसी बीच, रेड कॉरिडोर के जंगलों और दुर्गम इलाकों में एक और युद्ध चुपचाप करवट ले रहा था। वर्षों तक बस्तर, माओवादी हिंसा से बनाए गए एक स्वघोषित 'मुक्त क्षेत्र' की राजधानी बना रहा, जिसकी कीमत सुरक्षाबलों और निर्दोष ग्रामीणों, दोनों की जान से चुकाई गई। छत्तीसगढ़, महाराष्ट्र, झारखंड, बिहार और आंध्र प्रदेश में यह विद्रोह अब रीढ़ से टूट चुका है। जो बचा है, वह ताकत से ज्यादा स्मृति के सहारे टिकी एक धुंधलाती प्रतिध्वनि मात्र है और यह समय की बात है कि नक्सलवाद केवल इतिहास की किताबों में सिमट जाए।

भारत ने दुनिया के लिए खुद को खोला, हिचकिचाहट से नहीं, बल्कि 'वसुधैव कुटुंबकम्' के उस प्राचीन विश्वास के आत्मविश्वास से, कि यह दुनिया एक परिवार है। आज कई देश भारत के साथ व्यापार समझौतों और साझेदारियों के लिए कतार में खड़े हैं, केवल उसके बाजार तक पहुंच के लिए नहीं, बल्कि इसलिए, क्योंकि उन्हें भरोसा है कि भारत अपनी बात निभाएगा। संघर्षों और अनिश्चितता से टूटी हुई दुनिया में, भारत एक महाशक्ति से भी दुर्लभ चीज बन गया है, एक भरोसेमंद शक्ति। आज, अपने इतिहास में पहली बार, लाल किले की प्राचीर से 'वंदे मातरम्' गाया जाएगा, इसकी रचना के डेढ़ सौ वर्ष पूरे होने के अवसर पर। यह महज एक गीत नहीं है। यह एक नवीनीकृत प्रतिज्ञा है कि जिस सभ्यता को कभी गरीबी व विखंडन की नियति मान लिया गया था, वह अपनी शर्तों पर, अपने समय में टिकी रही, फिर से खड़ी हुई, और ऊंची उठी।

अस्सी वर्ष गर्व करने के लिए काफी लंबे हैं, और यह याद रखने के लिए काफी कम कि इसकी कीमत क्या चुकाई गई। उरी, बालाकोट और पहलगाम की छाया में डटा हर सैनिक; बस्तर के जंगलों में गश्त करने वाला हर पुलिसकर्मी, हर वह साधारण नागरिक, जिसने गणराज्य के अनिश्चित दशकों में भी उस पर विश्वास बनाए रखा, वे ही कारण हैं कि यह वर्षगांठ केवल कैलेंडर की एक तारीख नहीं, बल्कि एक कर्ज है, जिसे हम ढो रहे हैं।

इसलिए, आज हम सिर्फ झंडा नहीं फहराते। हम झुकते हैं, इस मिट्टी के आगे, इस बलिदान के आगे, और उस मां के आगे, जिसने हमसे बस इतना ही मांगा कि हम उस पर विश्वास करें।

त्वम् हि दुर्गा दशप्रहरणधारिणी,
कमला कमलदलविहारिणी,
वाणी विद्यादायिनी, नमामि त्वाम्,
नमामि कमलाम् अमलाम् अतुलाम्,
सुजलां सुफलां मातरम्। वंदे मातरम्।
वंदे मातरम्। जय हिंद।

कदम मिलाकर चलना होगा

महात्मा गांधी का दृढ़ विश्वास था कि भारत को एक मंच पर एकजुट करना तभी संभव है, जब लोगों में आपसी सद्भाव और एकता हो।

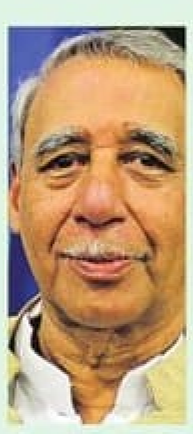

शंकर कुमार सान्याल

समय की मांग प्रगतिशील जीवन-शैली को अपनाकर युगानुरूप उन्नति के साथ कदम मिलाकर चलना है।

महात्मा गांधी ने एक सचमुच स्वतंत्र राष्ट्र बनाने के मकसद से शांति, सद्भाव और एकता बनाए रखने के लिए, अपनी पूरी जिंदगी अलग-अलग धर्मों के लोगों के बीच सहनशीलता और अहिंसा के सिद्धांतों तथा आदर्शों को अपनाया एवं उनका प्रचार किया। महात्मा गांधी का मानना था कि भारत को अपनी धर्मनिरपेक्ष छवि बनाए रखने में सही भूमिका निभानी चाहिए, जहां सभी धर्मों और आस्थाओं के लोग इस मिली-जुली संस्कृति वाले देश को अपना घर मानते हैं और एक जटिल धार्मिक संस्कृति में मिल-जुलकर रहने के आदी हैं। गांधीजी का मिशन भारत में अलग-अलग धर्मों, अनुयायियों और आस्थाओं वाली विशाल आबादी के बीच तालमेल बिठाना और पूरे देश में एक धर्मनिरपेक्ष आधार और सोच कायम करना था।

गांधीजी के अहिंसा और सत्याग्रह के सिद्धांत का जन्म अलग-अलग धर्मों की जटिल, विरोधाभासी और संकीर्ण व्याख्याओं और उनके पालन के तरीकों से हुआ था, जबकि असल में सभी धर्म दुनिया की, पूरी मानवता की शांति, खुशी और सद्भाव से जुड़े हैं। उनका विश्वास था कि भारत को एक मंच पर एकजुट करना तभी संभव है, जब लोगों में आपसी सद्भाव व एकता हो; और यही एकता भारत में औपनिवेशिक ब्रिटिश शासन से आजादी की लड़ाई को व्यवस्थित, प्रभावी तथा निर्णायक ढंग से आगे बढ़ा पाएगी। यह एकजुट सोच से ही संभव होगा, न कि हिंसक टकराव से, क्योंकि भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन की असली ताकत सहनशीलता और अहिंसा से ही बनी रहेगी। भारतीय सभ्यता की ताकत का यही शाश्वत स्रोत है, जिसे स्वामी विवेकानंद ने भी माना था-ठीक उसी समय, जब गांधीजी दक्षिण अफ्रीका में अपनी मुहिम शुरू करने वाले थे, जो आजीविका की मजबूरी में काम कर रहे गरीब भारतीय मजदूरों के साथ होने वाले भेदभाव के खिलाफ थी।

भारतीय जाति के बहुत पुराने इतिहास से उपजी अपनी अंतरात्मा की आवाज से प्रेरित होकर, गांधीजी ने अहिंसा के आदर्शों और सिद्धांतों को भारतीय सभ्यता के विकास की परंपरा के रूप में अपनाया। ये सिद्धांत एक ऐसी आधुनिक सोच को जन्म देंगे, जो आध्यात्मिकता के शाश्वत मानवीय लक्ष्य पर आधारित होगी और सभी धर्मों के बीच सामंजस्य बिठाएगी। पूरी मानवजाति एक ही खून से जुड़ी है, एक ही हवा में सांस लेती है और एक ही आसमान के नीचे रहती है; ये सभी सामंजस्यपूर्ण शक्तियां सर्वशक्तिमान रचयिता की कृपा से मानवता को उस आध्यात्मिक साम्राज्य में प्रवेश करने के लिए सौंपी गई हैं, जिसे इन्सान 'स्वर्ग' के रूप में जानते हैं और जो धरती माता की पवित्र गोद में छिपा हुआ था। रवींद्रनाथ ठाकुर ने भी कहा था कि सच्चा धर्म 'मानव-धर्म' है, जिसे जीवन-मूल्यों की संज्ञा दी जा सकती है। हमें उन पुरातन आदतों और प्रथाओं से ऊपर उठना चाहिए, जो चरमपंथी नेताओं द्वारा समाज पर थोपी जा रही हैं और जो केवल रूढ़िवादी प्रवृत्तियों को बढ़ावा देती हैं, जबकि समय की मांग प्रगतिशील जीवन-शैली को अपनाकर युगानुरूप उन्नति के साथ कदम मिलाकर चलना है।

सिर्फ श्लोक नहीं है वंदे मातरम

वंदे मातरम केवल श्लोक मात्र नहीं, बल्कि वह महामंत्र है, जिसने सदियों से बिखरी हुई जनता को एकता के सुदृढ़ और अभेद्य सूत्र में बांधा।

वंदे मातरम केवल छह अक्षरों या दो शब्दों का साधारण ध्वनि-समूह अथवा गीतिमय श्लोक मात्र नहीं, अपितु समस्त भारतवर्ष की आत्मा, उसकी सुप्त राष्ट्रीय चेतना व हमारी अस्मिता को जगाने वाला दिव्य महामंत्र है, जिसकी गूंज से ब्रिटिश साम्राज्य की नींव हिल उठी। जब बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय ने अपने अमर उपन्यास *आनंदमठ* में इस पावन श्लोक की रचना की थी, तब शायद किसी ने यह कल्पना भी नहीं की होगी कि एक दिन यही शब्द भारत माता के करोड़ों बंदियों और पददलित पुत्रों के कंठ का एकमात्र स्वर तथा स्वतंत्रता संग्राम की सबसे महान शक्ति बन जाएंगे। जब हम पूर्ण भक्तिभाव से 'वंदे मातरम' का उच्चारण करते हैं, तब केवल अपनी इस मिट्टी को नमन ही नहीं कर रहे होते, बल्कि अपनी पौराणिक संस्कृति, भव्य इतिहास, गौरवशाली परंपराओं और उस भारत माता का प्रत्यक्ष आह्वान कर रहे होते हैं, जो अपनी संतानों से धर्म, सत्य और स्वतंत्रता की रक्षा हेतु सर्वस्व न्योछावर कर देने का संकल्प मांगती है। स्वदेशी, बहिष्कार और राष्ट्रीय शिक्षा का हमारा यह संपूर्ण त्रिमुखी आंदोलन वास्तव में वंदे मातरम के इसी महान और पावन दर्शन पर पूरी तरह आधारित है, क्योंकि यदि मन में मातृभूमि के प्रति ऐसा अगाध और निःस्वार्थ प्रेम न हो, तो राष्ट्रहित के लिए अपनी स्वार्थ-भावनाओं का त्याग कर पाना कभी संभव ही नहीं हो सकता। इस पवित्र महामंत्र ने देश के उत्तर से दक्षिण और पूर्व से पश्चिम तक फैली भाषा, धर्म और जातियों की तमाम कृत्रिम सीमाओं को एक झटके में ध्वस्त कर दिया है तथा सदियों से बिखरी हुई जनता को एकता के सुदृढ़ और अभेद्य सूत्र में पिरो दिया है।

बाल गंगाधर तिलक
स्वतंत्रता सेनानी

सत्ता जनता की सेवा के लिए

जब शासन में गांवों की आवाज को प्राथमिकता मिलेगी और प्रशासन में ईमानदारी एवं सेवा-भाव बना रहेगा, तभी भारत का लोकतंत्र अजेय रहेगा।

जब हम भारत जैसे कृषि-प्रधान और गांवों के देश में लोकतंत्र की बात करते हैं, तो हमें यह कभी नहीं भूलना चाहिए कि वास्तविक भारत हमारे गांवों में बसता है। स्वतंत्रता संग्राम के दिनों से ही पूज्य बापू (महात्मा गांधी) ने हमें यह सिखाया था कि जब तक सत्ता का वास्तविक विकेंद्रीकरण नहीं होगा और गांव आत्मनिर्भर नहीं बनेंगे, तब तक सच्चा प्रजातंत्र स्थापित नहीं हो सकता। संविधान निर्माण के समय और उसके पश्चात भी मेरा यह दृढ़ विश्वास रहा कि यदि हम लोकतंत्र को निचले स्तर तक मजबूत करना चाहते हैं, तो हमें अपनी पंचायती राज व्यवस्था को पुनर्जीवित और सशक्त करना ही होगा। लोकतंत्र की सफलता का दूसरा सबसे बड़ा आधार प्रशासनिक शुचिता और भ्रष्टाचार-मुक्त शासन है। यदि शासन में बैठे लोग या प्रशासनिक अधिकारी अपने व्यक्तिगत हितों को राष्ट्रहित से ऊपर रखने लगेंगे, तो जनता का प्रजातांत्रिक संस्थाओं से विश्वास उठने लगेगा। सत्ता कोई अधिकार या उपभोग की वस्तु नहीं है, बल्कि वह तो जनता की सेवा के लिए मिला हुआ एक पवित्र न्यास है। जब शासन व्यवस्था में गांवों की आवाज को प्राथमिकता मिलेगी और प्रशासन में ईमानदारी एवं सेवा-भाव बना रहेगा, तभी भारत का लोकतंत्र अजेय रहेगा। एक लोककल्याणकारी राज्य का दायित्व केवल भौतिक प्रगति ही नहीं, बल्कि राष्ट्र की नैतिक आत्मा को भी जागृत करना है।

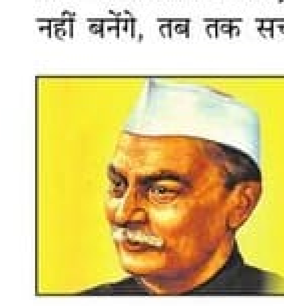

डॉ. राजेंद्र प्रसाद
भारत के प्रथम राष्ट्रपति

केवल झंडा फहराना ही काफी नहीं

आजादी एक बार मिल जाने के बाद हमेशा के लिए सुरक्षित नहीं हो जाती...उसे बचाकर रखना पड़ता है।

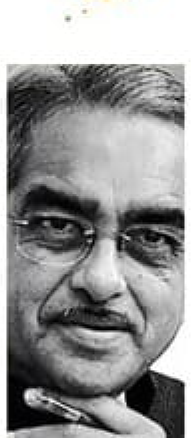

प्रयाग शुक्ल
वरिष्ठ लेखक

सुभद्रा कुमारी चौहान की *खूब लड़ी मर्दानी वह तो झांसी वाली रानी थी* कविता में हमारे भीतर आजादी की तड़प को बेहद सुंदरता से व्यक्त किया गया है। इस तड़प के साथ हमें जो आजादी मिली, उसमें लाखों-करोड़ों लोगों का योगदान है। हमारा भारत एक विशाल देश है, यहां बहुत-सी भाषाएं हैं। आजादी के उत्सव के प्रति देश के हर प्रांत में हमें उत्साह देखने को मिलता है। इस आजादी के लिए न जाने कितने लोगों ने बलिदान दिया, इसलिए हम उनके बलिदान को नमन करते हुए अपना राष्ट्रीय ध्वज तिरंगा फहरा कर स्वाधीनता का उत्सव मनाते हैं।

हिंदी के एक बड़े कवि रघुवीर सहाय बार-बार कहते थे कि आजादी एक बार मिल जाने के बाद हमेशा के लिए सुरक्षित नहीं हो जाती, उसे बचाकर रखना पड़ता है। उसके लिए बार-बार लड़ना पड़ता है। हर प्रकार की आजादी के लिए संघर्ष करना पड़ता है। स्त्री शिक्षा को ही देख लीजिए। एक लंबी लड़ाई के बाद ही आज स्त्री शिक्षा यहां तक पहुंच पाई है। इसलिए 15 अगस्त और 26 जनवरी मेरे लिए उन सभी संघर्षों को याद करने के दिन हैं।

व्यक्ति के स्वाभिमान के लिए, बोलने की आजादी के लिए, लिखने-पढ़ने की आजादी के लिए अनेक संघर्ष हुए हैं। मैं आज इन बातों को इसलिए याद कर रहा हूं, क्योंकि यदि आज नहीं याद करेंगे, तो फिर कब करेंगे? आजादी के बाद इस देश में बहुत कुछ हुआ है, लेकिन अब भी बहुत कुछ होना बाकी है।

यही वह दिन है, जो भौगोलिक रूप से विशाल भारत को भावनात्मक रूप से भी जोड़ता है। पूरे देश में लोग अलग-अलग भाषाओं में भाषण देते हैं, तिरंगे के नीचे खड़े होते हैं, अलग-अलग वेशभूषा पहनते हैं। यह विविधता हमारी सबसे बड़ी शक्ति है और उसका सम्मान करना भी आजादी के सेनानियों का सम्मान है। रवींद्रनाथ ठाकुर की *गीतांजलि* के एक गीत का मैंने बांग्ला से हिंदी में अनुवाद किया है-*हो चित्त जहां भयशून्य, मस्तक हो उन्नत, हो ज्ञान जहां पर मुक्त, खुला यह जग हो-घर की दीवारें बनें न कोई कारा*....अंत में एक पंक्ति आती है- *हे पिता! मुक्त व स्वर्ग रचाओ हममें, बस उसी स्वर्ग में जागे देश हमारा।* आज का भारत इन सब बातों को याद करते हुए विवेक, अच्छे भावों और सबके प्रति प्रेम के साथ आगे बढ़े, यही हमारा संकल्प होना चाहिए।

आज के दिन मुझे रामचंद्र शुक्ल की एक बात विशेष रूप से याद आती है। उन्होंने लिखा था कि राष्ट्र केवल मनुष्यों से नहीं बनता। वह नदियों से बनता है, पर्वतों से बनता है, वनस्पतियों से बनता है, फूलों और पौधों से बनता है। कितनी सुंदर बात है! वाकई राष्ट्र केवल मनुष्यों का नहीं होता। आज पर्यावरणविदों और अनेक लोगों के संघर्ष को भी हमें याद करना चाहिए, जो जंगलों, नदियों को बचाने के लिए आंदोलन कर रहे हैं। आजादी पाने के लिए हमने जो संकल्प किए थे, वे कितने पूरे हुए हैं, आज हम इसका भी मूल्यांकन करें।

edit@amarujala.com

स्वतंत्रता अधिकार ही नहीं, कर्तव्य भी

■ सरोजिनी नायडू

***स्वतंत्रता** अपने साथ केवल अधिकार नहीं, बल्कि उतने ही बड़े उत्तरदायित्व भी लेकर आती है। भारत की स्वतंत्रता केवल एक राष्ट्र की मुक्ति नहीं; दुनियाभर के उत्पीड़ित और वंचित लोगों के लिए आशा का प्रतीक है। लेकिन, हमारा काम अभी समाप्त नहीं हुआ है; यह तो केवल शुरुआत है। क्योंकि, किसी राष्ट्र की वास्तविक परीक्षा केवल उसकी राजनीतिक स्वतंत्रता या बड़ी उपलब्धियों से नहीं होती, बल्कि इस बात से होती है कि वह अपने सामान्य नागरिक को कितना सम्मान, न्याय, शांति और समृद्धि दे पाता है। भारत की प्रगति का सही अर्थ भी तभी सामने आएगा, जब समाज का सबसे कमजोर व्यक्ति अपने जीवन में स्वतंत्रता के लाभ को महसूस कर सके। हमें देखना होगा कि आम भारतीय बौद्धिक, राजनीतिक, साहित्यिक और कलात्मक जीवन में कितना आगे बढ़ रहा है। किसी देश का भविष्य उसके करोड़ों सामान्य नागरिकों के विचारों, कर्मों और सपनों से ही निर्मित होता है।*

मन का स्वतंत्र होना जरूरी

■ डॉ. बी आर आंबेडकर

जब तक आप सामाजिक स्वतंत्रता प्राप्त नहीं कर लेते, तब तक कोई भी स्वतंत्रता किसी काम की नहीं है। मन की स्वतंत्रता ही वास्तविक स्वतंत्रता है। एक व्यक्ति, जिसका मन स्वतंत्र नहीं है, भले ही वह जंजीरों में न जकड़ा हो, फिर भी वह एक गुलाम है। यदि समाज में भेदभाव बना रहता है, तो केवल राजनीतिक रूप से आजाद होना देश के आम नागरिक के लिए बेमानी साबित होगा।

आपसी सहमति ही विकल्प

■ डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन

आज दुनिया एक ऐसे दौर से गुजर रही है, जहां युद्ध और संघर्ष मानव सभ्यता के सामने गंभीर चुनौती बनकर खड़े हैं। ऐसे समय में हमारे सामने दो ही विकल्प हैं। पहला, युद्ध को और व्यापक होने दिया जाए और उसके विनाशकारी परिणामों को स्वीकार कर लिया जाए। दूसरा, बातचीत, समझदारी और आपसी सहमति के माध्यम से समाधान का रास्ता तलाशा जाए।

इंडियन एक्सप्रेस समूह

जनसत्ता सरोकार

सम-सामयिक

एक

जनसत्ता | 16 अगस्त, 2026

संसद के मानसून सत्र में भी कामकाज का सूखा पड़ा
पक्ष-विपक्ष के बीच ठनती रही, कार्यवाही रुकती रही

संसद का मकर द्वार बीते संसद सत्र का हाल बताता रहा। मानसून सत्र के शोरगुल में सांसद संसद के अंदर नहीं बल्कि प्रवेश द्वार पर ही अपनी राजनीति करते रहे। इस बार भी पिछले डेढ़ दशक की तरह हंगामा, स्थगन, और जल्दबाजी में पारित होते विधेयक ही सत्र का हासिल रहा। यूपीए हो या राजग, हर शासन काल में संसद का स्थगन एक परिपाटी बन चुकी है। हंगामे में करदाताओं का पैसा बर्बाद हो रहा है। मानसून सत्र में संसदीय कामकाज का कैसा सूखा रहा, बता रहा है वह द्वार जहां राजनीति मकड़ी के जाले में फंसी और उलझी हुई सी दिखी। पक्ष और विपक्ष अपनी बातों पर ही जकड़े हुए दिखे। इस स्थिति में मकर द्वार भी मकड़ी के जाले की तरह जकड़ा हुआ दिखा। इसमें संसद सत्र के फंसने की पड़ताल करता सरोकार।

मकड़द्वार

गुरुवार को संसद का मानसून सत्र समाप्त हो गया। आखिरी दिनों तक वही तस्वीर बनी रही जो पिछले डेढ़ दशक से हर सत्र की पहचान बन चुकी है यानी हंगामा, स्थगन, और जल्दबाजी में पारित होते विधेयक। सत्र के अंतिम चरण में एफसीआरए संशोधन विधेयक को लेकर सदन में तीखी बहस हुई। गृह राज्य मंत्री नित्यानंद राय ने इसे संयुक्त संसदीय समिति के पास भेजने का प्रस्ताव रखा, कांग्रेस सांसद केसी वेणुगोपाल ने विरोध करते हुए इसे वापस लेने की मांग की, और अंततः शोर-शराबे के बीच सदन ने ध्वनि मत से इस विधेयक को संयुक्त संसदीय समिति के पास भेजने की मंजूरी दी। यह अकेला मामला नहीं था। संसदीय कार्य राज्य मंत्री अर्जुन राम मेघवाल ने माना कि इस सत्र में सरकार को 12 प्रस्तावित विधेयकों में से 11 को हंगामे के बीच बिना बहस के पास कराना पड़ा, जिसकी जिम्मेदारी उन्होंने विपक्ष पर डाली। दूसरी तरफ, कुछ बड़े और विवादित विधेयक जैसे एफसीआरए संशोधन और विकसित भारत शिक्षा अधिष्ठान विधेयक संयुक्त संसदीय समिति की समीक्षा में अटके रह गए।

विपक्ष के लगातार हंगामे के कारण प्रश्नकाल और शून्यकाल जैसी संसदीय व्यवस्था प्रभावी ढंग से नहीं चल पाई। दो बड़े विधेयक महज 14 मिनट में पारित कर दिए गए, जबकि परिसीमन विधेयक को लेकर पहले से हो रही बहस के बावजूद सरकार ने उसे दोबारा पटल पर रखने से परहेज किया।

साल 2014 में सत्ता संभालने के फौरन बाद 16वीं लोकसभा ने बड़ी उम्मीदें जगाई थीं। उस साल लोकसभा ने बजट सत्र में अपने निर्धारित समय के 104 फीसद और शीतकालीन सत्र में 98 फीसद समय तक काम किया, जबकि राज्यसभा बजट सत्र में 106 फीसद समय तक चली। साल 2019 में जब राजग सरकार दोबारा सत्ता में आई, तो शुरुआती उत्साह और ज्यादा था। 17वीं लोकसभा का पहला सत्र 20 साल में सबसे कामकाजी साबित हुआ। इसमें कामकाज 128 फीसद तक पहुंच गया और राज्यसभा में करीब 98 फीसद कामकाज हुआ। सितंबर 2023 में जब संसद नए भवन में स्थानांतरित हुई, उस पांच दिवसीय विशेष सत्र में भी लोकसभा 160 फीसद और राज्यसभा 128 फीसद कामकाज के साथ चली। महिला आरक्षण विधेयक पर लंबी चर्चा हुई और यह इसी सत्र में पास भी हुआ।

लेकिन यह चमक टिकाऊ नहीं निकली। पूरे कार्यकाल का हिसाब देखें तो तस्वीर बदल जाती है। 17वीं लोकसभा ने कुल 274 बैठकें कीं, यानी औसतन साल में सिर्फ 5 दिन, जो संसदीय इतिहास में सबसे कम है। इस दौरान लोकसभा अपने निर्धारित समय का 88 फीसद और राज्यसभा 73 फीसद ही चल सकी। इसी अवधि में दोनों सदनों में गंभीर अनुशासनहीनता के कारण सांसदों के निलंबन की 206 घटनाएं दर्ज हुईं और जवाबदेही का सबसे अहम औजार प्रश्नकाल भी कमजोर पड़ता गया। लोकसभा में सिर्फ 24 फीसद और राज्यसभा में 31 फीसद प्रश्नों के मौखिक उत्तर मिल सके। कानून बनाने की प्रक्रिया पर इसका सीधा असर पड़ा। 58 फीसद बिल पेश होने के दो हफ्ते के भीतर ही पास कर दिए गए, और लोकसभा में 35 फीसद विधेयकों पर एक घंटे से भी कम चर्चा हुई। समिति व्यवस्था, जो कानूनों की बारीक जांच का सबसे भरोसेमंद जरिया मानी जाती है, इस दौर में सबसे ज्यादा कमजोर हुई। जहां 14वीं और 15वीं लोकसभा में 60 फीसद से ज्यादा विधेयक संसदीय समितियों के पास भेजे जाते थे, वहीं 16वीं और 17वीं लोकसभा में यह आंकड़ा घटकर 20 फीसद रह गया। और 17वीं लोकसभा में तो सिर्फ 10 फीसद विधेयक ही समितियों को भेजे गए, यानी महज 14 विधयेकों की समीक्षा हुई। कुल मिलाकर साल 2019-2024 के दौर का औसत कामकाज महज 42 फीसद रहा, जो साल 1952 के बाद सबसे कम बैठक दिनों वाला लोकसभा कार्यकाल बना।

> **यूपीए** के 10 साल हों या राजग के 12, आंकड़े साफ बताते हैं कि संसद ठप होने, बिना बहस विधेयक पास कराने और सांसदों को निलंबित करने की परंपरा किसी एक पार्टी या दौर का मामला नहीं है।

18वीं लोकसभा में यह प्रवृत्ति और बढ़ गई। दिसंबर 2024 के शीतकालीन सत्र में संसदीय कार्य मंत्री किरेन रिजीजू ने स्वीकार किया कि लोकसभा का कामकाज महज 54 फीसद और राज्यसभा का 40 फीसद रहा, और इसी सत्र के दौरान संसद परिसर में हुई झड़प में दो भाजपा सांसद घायल भी हुए थे। और, अब साल 2026 का मानसून सत्र, जिसका हिसाब पीआरएस के आंकड़ों पर आधारित है और भी निराशाजनक निकला। दोनों सदनों में करीब 114-114 घंटे काम प्रस्तावित था, पर हंगामे के कारण लोकसभा में कामकाज घटकर सिर्फ 19 फीसद और राज्यसभा में 39.17 फीसद ही हो पाया, यानी कुल 173 घंटे 10 मिनट शोर-शराबे में डूबे गए।

यह कहना गलत होगा कि संसद ठप होने की परंपरा साल 2014 के बाद शुरू हुई। यूपीए के दस साल, खासकर दूसरा कार्यकाल, इस मामले में कम बदनाम नहीं रहे। 15वीं लोकसभा (2009-2014), जो यूपीए-2 का पूरा कार्यकाल था, बेहद खराब प्रदर्शन के लिए जानी जाती है। इस दौरान लोकसभा सिर्फ 61 फीसद और राज्यसभा सिर्फ 66 फीसद निर्धारित समय तक चली, जबकि इससे पहले की 13वीं और 14वीं लोकसभा 91 फीसद और 87 फीसद के आंकड़े के साथ कहीं बेहतर रही थीं। एक अलग अध्ययन के मुताबिक 15वीं लोकसभा के निर्धारित समय का 30 फीसद से ज्यादा हिस्सा सिर्फ हंगामे की भेंट चढ़ गया।

साल 2010 का शीतकालीन सत्र इस दौर का सबसे बदनाम उदाहरण है, जब 2जी स्पेक्ट्रम आबंटन घोटाले पर संयुक्त संसदीय समिति की मांग को लेकर विपक्ष ने पूरा सत्र ठप कर दिया था। इसके बाद के आगे भी यही सिलसिला चला। कोयला ब्लाक आबंटन घोटाला, राष्ट्रमंडल खेल भ्रष्टाचार और अन्ना हजारे के लोकपाल आंदोलन ने संसद के भीतर और बाहर दोनों जगह माहौल गरमाए रखा। साल 2013 में तो स्थिति यह हो गई कि हंगामे के कारण लोकसभा में रिकार्ड 92 घंटे का समय पूरे साल में बर्बाद हुआ। बजट सत्र का दूसरा चरण तय तारीख से दो दिन पहले और शीतकालीन सत्र भी दो दिन पहले ही अनिश्चितकाल के लिए स्थगित करना पड़ा। भ्रष्टाचार, महंगाई, तेलंगाना राज्य की मांग और श्रीलंकाई तमिलों के मुद्दे पर सदन बार-बार स्थगित हुआ।

यूपीए कार्यकाल का सबसे नाटकीय क्षण फरवरी 2014 में 15वीं लोकसभा के आखिरी सत्र में आया, जब तेलंगाना राज्य के गठन को लेकर सदन में भारी हंगामा हुआ। इस सत्र में दोनों सदन अपने निर्धारित समय के 30 फीसद से भी कम काम कर पाए, और सत्र के अंत में आंध्र प्रदेश पुनर्गठन विधेयक के विरोध में एक सांसद ने सदन में पेपर स्प्रे तक का इस्तेमाल किया, जिसके बाद अध्यक्ष ने 17 सांसदों को निलंबित कर दिया। यह वही लोकसभा थी जो अपने कार्यकाल के अंत में 128 लंबित विधेयकों के साथ भंग हुई, किसी भी लोकसभा के मुकाबले सबसे ज्यादा लंबित बिलों का रिकार्ड। दिलचस्प यह है कि यूपीए दौर में भी कुछ सत्र असाधारण रूप से कामकाजी रहे। उस सत्र में लोकसभा ने 135 फीसद और राज्यसभा ने करीब 105 फीसद कामकाज के साथ काम किया, लोकसभा ने 37 बैठकों में 35 बिल पास किए और यह राज्यसभा के लिए पिछले 17 वर्षों का सबसे बेहतरीन सत्र था। हालांकि इस सत्र में भी करीब 19 घंटे हंगामे में गंवाए गए। यानी शोर और कामकाज का यह उतार-चढ़ाव किसी एक पार्टी या दौर का मामला नहीं है। यह भारतीय संसद के स्वभाव का हिस्सा बन चुका है।

यूपीए के दस साल हों या राजग के 12, आंकड़े साफ बताते हैं कि संसद ठप होने, बिना बहस विधेयक पास कराने और सांसदों को निलंबित करने की परंपरा किसी एक पार्टी या दौर की मोहताज नहीं है। फर्क सिर्फ इतना है कि राजग के दौर में यह प्रवृत्ति संस्थागत स्तर पर और गहरी हुई। सबसे कम बैठने वाले दिन, सबसे कमजोर समिति व्यवस्था और इतिहास का सबसे बड़ा सामूहिक निलंबन, यह सब इसी दौर में दर्ज हुए। नया संसद भवन बना, पर कार्यशैली नहीं बदली।

असली सवाल यह नहीं कि किस सरकार में संसद कम चली, बल्कि यह है कि क्या भारत की राजनीतिक व्यवस्था विपक्ष को बहस का वाजिब मंच देने और सत्ता पक्ष को जवाबदेही के दायरे में बांधे रखने की इच्छाशक्ति दिखाएगी। जब तक विपक्ष के पास एजंडा तय करने का कोई संस्थागत अधिकार नहीं होगा, और सत्ता पक्ष बहुमत के बल पर बहस को औपचारिकता मानता रहेगा, तब तक हर सत्र के अंत में वही तस्वीर दोहराई जाती रहेगी। यानी करोड़ों रुपए का नुकसान, बिना बहस पास हुए कानून, और लोकतंत्र के मंदिर में गूंजता सिर्फ शोर।

-प्रस्तुति : संजय शर्मा

करदाता की जेब से जाता पैसा

जनसत्ता सरोकार

संसद का हर मिनट देश के खजाने पर भारी पड़ता है, और यह बात हर सत्र में दोहराई जाती है, फिर भी हंगामा नहीं थमता। लोकसभा के पीठासीन अध्यक्ष जगदंबिका पाल ने हाल ही में सांसदों को याद दिलाया कि संसद चलाने पर हर मिनट करीब 2.5 लाख रुपए, हर घंटे करीब 1.5 करोड़ रुपए और एक दिन में करीब नौ करोड़ रुपए खर्च होते हैं, और सदन न चलने से जनता का पैसा यूं ही बर्बाद हो जाता है। यह अनुमान साल 2012 का पुराना है। मौजूदा लागत इससे कहीं अधिक हो सकती है।

इस साल के मानसून सत्र के पहले हफ्ते में ही पीआरएस के आंकड़ों के मुताबिक करदाताओं के 35 करोड़ रुपए से ज्यादा हंगामे और स्थगन की भेंट चढ़ गए। पूरे सत्र का हिसाब देखें तो नुकसान और भी बड़ा निकलता है। 173 घंटे

10 मिनट का समय शोर-शराबे में बर्बाद हुआ, जिसकी अनुमानित कीमत करीब 175 करोड़ रुपए आंकी गई। यह सिर्फ एक सत्र की कहानी नहीं है। दस साल के आंकड़ों पर निगाह डालें तो बार-बार के इन व्यवधानों में करोड़ों रुपए का संसदीय समय हर साल बर्बाद होता रहा है, और कई अहम बिल बिना लंबी चर्चा के पारित होते रहे।

नतीजा यही निकलता है कि यूपीए हो या राजग, नुकसान अंततः उसी करदाता को उठाना पड़ता है जिसके वोट से ये सरकारें बनती हैं।

बढ़ता गया बजट

जनसत्ता सरोकार

संसद चलाने पर होने वाला सरकारी खर्च यूपीए के दौर से लेकर राजग के मौजूदा दौर तक कई गुना बढ़ा है, हालांकि अलग-अलग सालों के आंकड़े अलग-अलग आधार पर लिए गए हैं (कभी पूरी संसद चलाने का अनुमान, कभी सिर्फ लोकसभा-राज्यसभा सचिवालय का बजट आबंटन), इसलिए तुलना मोटे रुझान के तौर पर देखी जानी चाहिए, पूरी तरह सटीक हिसाब-किताब के तौर पर नहीं।

साल 2003-04 (वाजपेयी सरकार, यूपीए से ठीक पहले) तब का अनुमान था कि उस साल संसद के दोनों सदन चलाने का सालाना बजट करीब 437 करोड़ रुपए था। उस दौर के औसत विनिमय दर (करीब 46 रुपए प्रति डालर) से देखें तो यह रकम करीब 9.5 करोड़ डालर के बराबर बैठती है।

साल 2010 (यूपीए-2, टूजी घोटाले वाला शीतकालीन सत्र) तत्कालीन संसदीय कार्य मंत्री पवन बंसल के हवाले से बताया गया था कि संसद चलाने का कुल सालाना बजट करीब 350 करोड़ रुपए था, यानी हर मिनट कामकाज पर करीब 19,000 रुपये खर्च होते थे। उस साल की औसत विनिमय दर (करीब 45 रुपए प्रति डालर) से यह रकम करीब 7.8 करोड़ डालर के बराबर होती है।

साल 2021 (राजग-2, पेगासस विवाद वाला सत्र) : एक रिपोर्ट के मुताबिक अकेले राज्यसभा का सालाना बजट, जिसमें राज्यसभा टीवी और संसदीय समितियों का खर्च भी शामिल है, 460 करोड़ रुपए था। उस साल की विनिमय दर (करीब 74 रुपए प्रति डालर) से यह करीब 6.2 करोड़ डालर बैठता है, पर याद रहे, यह सिर्फ राज्यसभा का आंकड़ा है, लोकसभा का नहीं।

साल 2024-25 (राजग-3) एक रिपोर्ट के अनुसार इस साल लोकसभा को कुल 862 करोड़ रुपए और दोनों सदनों को मिलाकर कुल 1,303.42 करोड़ रुपए का आबंटन हुआ। मौजूदा विनिमय दर (83-84 रुपये प्रति डालर उस साल) से यह करीब 15.6 करोड़ डालर के बराबर है।

साल 2025-26 (मौजूदा बजट) : एक रिपोर्ट के मुताबिक इस साल लोकसभा को 903 करोड़ रुपए और राज्यसभा को 413 करोड़ रुपए का आबंटन मिला, जिसमें से 558.81 करोड़ रुपए अकेले लोकसभा सचिवालय और सांसद टीवी के लिए तय किए गए, जबकि लोकसभा सांसदों के वेतन-भत्तों के मद में 338.79 करोड़ रुपए रखे गए। दोनों सदनों को मिलाकर यह करीब 1,316 करोड़ रुपए बैठता है, जो मौजूदा विनिमय दर (करीब 87-88 रुपए प्रति डालर) से लगभग 15 करोड़ डालर के बराबर है।

रुपए में देखें तो साल 2003-04 के 437 करोड़ से 2025-26 के 1,316 करोड़ तक, यानी बजट आबंटन करीब तीन गुना बढ़ा है। डालर में देखें तो यह उतना नाटकीय नहीं दिखता। करीब 9.5 करोड़ डालर से बढ़कर 15 करोड़ डालर, यानी करीब 58 फीसद की बढ़ोतरी, क्योंकि इस बीच रुपया डालर के मुकाबले करीब 46 से गिरकर 87-88 तक पहुंच चुका है। तात्पर्य यह है कि भारत में महंगाई और रुपए की कमजोरी को हटा दें, तो संसद चलाने की डालर-लागत उतनी तेजी से नहीं बढ़ी जितनी रुपए के आंकड़े दिखाते हैं, फिर भी बढ़ोतरी साफ है, और यह सिर्फ महंगाई की दर (जो इस अवधि में करीब दोगुनी हुई) से भी ज्यादा तेज रही है।

निलंबन का हथियार

जनसत्ता सरोकार

सांसदों के सामूहिक निलंबन के मामले में राजग का रिकार्ड यूपीए से कहीं आगे निकल गया। दिसंबर 2023 में संसद सुरक्षा चूक की घटना के बाद जो हुआ, वह भारतीय संसदीय इतिहास में अभूतपूर्व था। सुरक्षा उल्लंघन के विरोध में हंगामा करने पर एक साथ 146 सांसदों को निलंबित कर दिया गया, जिसे विपक्षी नेताओं ने दुनिया के लोकतांत्रिक इतिहास में इतने बड़े पैमाने पर हुआ पहला सामूहिक निलंबन बताया। इनमें 95 सांसद लोकसभा से और 46 राज्यसभा से थे। इसकी तुलना में यूपीए के आखिरी सत्र में हुआ 17 सांसदों का निलंबन, जो अपने समय में बड़ी खबर बना था, काफी छोटा दिखता है।

हालांकि निलंबन कोई नई व्यवस्था नहीं है। संसदीय नियमों के तहत यह अध्यक्ष या सभापति का अधिकार है कि वे सदन की गरिमा भंग करने वाले या जानबूझकर कार्यवाही बाधित करने वाले सदस्य को शेष सत्र के लिए निलंबित कर सकें, लेकिन विशेषज्ञ इसे लेकर सतर्क करते रहे हैं। एक अध्ययन में कहा गया कि निलंबन को हमेशा आखिरी उपाय के तौर पर देखा जाना चाहिए, और जानबूझकर की गई बाधा तथा किसी असहज मगर महत्त्वपूर्ण मुद्दे को उठाने के बीच फर्क करना जरूरी है। साथ में चेतावनी, जुर्माने जैसे वैकल्पिक अनुशासनिक तरीकों पर भी विचार होना चाहिए। 17वीं लोकसभा में ही निलंबन की 206 घटनाएं दर्ज हुई थीं।

टकराव का मतलब कार्यवाही रोकना नहीं

जनसत्ता सरोकार

ब्रिटेन का हाउस आफ कामंस भी अनुशासनहीनता से अछूता नहीं है, लेकिन वहां का तंत्र इसे नियंत्रित करने में कहीं ज्यादा सख्त और तेज माना जाता है। स्पीकर के पास किसी सदस्य को नाम लेकर तुरंत निलंबित करने का अधिकार है, और आमतौर पर अव्यवस्थित आचरण करने वाले सांसदों को स्पीकर द्वारा फौरन निलंबित किया जाता है या फटकार लगाई जाती है। हाल के वर्षों में वहां भी निलंबन बढ़े हैं।

साल 2019 के आम चुनाव के बाद से 16 सांसद निलंबित हो चुके हैं, जबकि साल 2010 से साल 2019 के बीच सिर्फ नौ सांसद निलंबित हुए थे। पर फर्क यह है कि ब्रिटेन में निलंबन ज्यादातर व्यक्तिगत आचरण या नैतिक उल्लंघन के मामलों में होता है, सामूहिक राजनीतिक टकराव में सैकड़ों सांसदों को एक साथ बाहर करने की परंपरा वहां नहीं है। पश्चिमी लोकतंत्रों की एक बड़ी खूबी यह है कि उन्होंने विपक्ष को एजंडा तय करने का संस्थागत अधिकार दिया है, जिससे टकराव कम होता है। मसलन, ब्रिटेन में मुख्य विपक्षी दल को साल में 20 दिन संसदीय एजंडा खुद तय करने का अधिकार मिलता है, और कनाडा में भी विपक्षी दलों के लिए अलग से प्रतिपक्ष दिवस निर्धारित हैं जिनमें वे अपनी पसंद के मुद्दों पर बहस करा सकते हैं। जर्मनी का बुंडेस्टाग बहस-आधारित संस्कृति के लिए जाना जाता है। फ्रांस की नेशनल असेंबली में भी बीच-बहस टोकाटाकी आम है। वहां टकराव भाषा में होता है, कार्यवाही रोकने में नहीं।

फर्क सिर्फ नियमों का नहीं, राजनीतिक संस्कृति का भी है। यूरोपीय बहुदलीय गठबंधन प्रणालियों में आमतौर पर सरकार को गठबंधन सहयोगियों से लगातार संवाद बनाए रखना पड़ता है, जिससे टकराव की धार कुछ हद तक कुंद होती है।

भारत में बहुमत की सरकार अक्सर संख्याबल के भरोसे बहस को औपचारिकता मानकर आगे बढ़ जाती है, जबकि विपक्ष के पास सड़क पर आंदोलन और सदन के भीतर हंगामे के अलावा कम औजार बचते हैं, क्योंकि एजंडा तय करने का अधिकार, जो पश्चिमी लोकतंत्रों में विपक्ष को मिला है, भारतीय संसद में लगभग पूरी तरह सत्ता पक्ष के हाथ में है।

सैन्य गठबंधन के नए समीकरण

प्रसंगवश

ब्रह्मदीप अलूने

> सऊदी अरब की मुख्य चिंता ईरान और खाड़ी की सुरक्षा है, जबकि पाकिस्तान की सुरक्षा नीति का केंद्र भारत और दक्षिण एशिया है। तुर्किये के हित मध्य-पूर्व से आगे काकेशस, भूमध्यसागर, रूस और नाटो तक फैले हैं। ऐसे में किसी संकट की स्थिति में तीनों देशों की प्राथमिकताएं एक जैसी रहेंगी, यह निश्चित नहीं है। इस गठबंधन की असली ताकत एक-दूसरे के साथ खड़े रहने की क्षमता से तय होगी।

बहुस्तरीय गठबंधन अंतरराष्ट्रीय व्यवस्था को प्रभावित करने की क्षमता तो रखते हैं, लेकिन उनका प्रभाव तभी दीर्घकालीन होता है, जब उनके पीछे साझा रणनीतिक दृष्टि, पारदर्शिता, प्रतिबद्धता और स्थायी हित हों। केवल तात्कालिक स्वार्थों पर आधारित गठबंधन अक्सर बदलती परिस्थितियों के साथ कमजोर पड़ जाते हैं। मक्का में तुर्किये, पाकिस्तान और सऊदी अरब के बीच हुआ संयुक्त रक्षा समझौता इस संदर्भ में महत्त्वपूर्ण है। इसका मूल सिद्धांत है कि तीनों में से किसी एक देश पर सशस्त्र हमला सभी पर हमला माना जाएगा। पहली नजर में यह इस्लामिक दुनिया में सामूहिक सुरक्षा की नई शुरुआत जैसा दिखाई देता है, लेकिन इसकी वास्तविकता इससे कहीं अधिक जटिल है। इसके केंद्र में पाकिस्तान की सुरक्षा बेचैनी, तुर्किये की बढ़ती रणनीतिक महत्त्वाकांक्षा और सऊदी अरब की सुरक्षा चिंताएं नजर आती हैं।

अलग-अलग जरूरतें

इस नए समीकरण में तीन देशों की अलग-अलग जरूरतें दिखाई देती हैं। तुर्किये दुनिया में अपना प्रभाव बढ़ाना चाहता है। ईरान के खिलाफ सऊदी अरब सुरक्षा चाहता है, जबकि वित्तीय बदहाली से जूझते पाकिस्तान को आर्थिक सहारे की जरूरत है। यही तीनों जरूरतें इन्हें इस समय एक-दूसरे से जोड़ रही हैं। तुर्किये को केवल एक मुसलिम देश के रूप में देखना उसकी विदेश नीति को समझने में बड़ी भूल होगी। वह नाटो का सदस्य है और यूरोप का हिस्सा है, रूस के साथ रणनीतिक संबंध रखता है और ईरान से प्रतिस्पर्धा एवं सहयोग भी करता है। वह अरब दुनिया में अपना प्रभाव बढ़ाने की कोशिश में है तथा मध्य एशिया में अपने राष्ट्रवाद की सांस्कृतिक शक्ति का इस्तेमाल करता है। तुर्किये के राष्ट्रप्रमुख एर्दोआन रणनीतिक स्वायत्तता चाहते हैं, वे किसी एक शक्ति के पीछे चलने को तैयार नहीं हैं। तुर्किये, अमेरिका से संबंध रखता है, लेकिन उस पर निर्भर नहीं रहना चाहता। वह रूस से व्यापार करता है, लेकिन उसके प्रभाव के अधीन नहीं होना चाहता। वह अरब देशों से प्रतिस्पर्धा करता है, लेकिन उन्हीं देशों की पूंजी और बाजार भी चाहता है।

यह भी दिलचस्प है की तुर्किये और सऊदी अरब की प्रतिद्वंद्विता को दुनिया ने देखा है, वे मध्य-पूर्व में एक-दूसरे के प्रभाव को चुनौती देते रहे हैं। 'मुसलिम ब्रदरहुड' को लेकर दोनों के बीच गहरी खाई रही है। सीरिया और मिस्र की राजनीति में दोनों के रास्ते अलग थे। कतर संकट में भी तुर्किये ने दोहा का साथ दिया, जबकि रियाद उसके विरोध में खड़ा था। तुर्किये में बेरोजगारी बड़ा मसला है और अब वह सऊदी अरब में रणनीतिक अवसर ढूंढ़ रहा है। वह सऊदी अरब को हथियार बेचना चाहता है और वहां से व्यापक निवेश की इच्छा रखता है। इसलिए इस उभरते सुरक्षा समीकरण को अभी नाटो जैसी संस्थागत सैन्य व्यवस्था का नाम देना सही नहीं है। नाटो की ताकत केवल उसके सदस्य देशों की सैन्य क्षमता में नहीं, बल्कि साझा संस्थाओं, एकीकृत कमान संरचना, नियमित सैन्य सहयोग, स्पष्ट दायित्वों और दशकों में विकसित सामूहिक सुरक्षा की राजनीतिक प्रतिबद्धता में है।

चिंता और महत्त्वाकांक्षा

सऊदी अरब के पास पैसा है, ऊर्जा है, धार्मिक प्रतिष्ठा है और अरब दुनिया में प्रभाव भी है। मगर स्वतंत्र सैन्य सुरक्षा क्षमता उसके लिए बड़ी चुनौती है और वहां का नेतृत्व अब इस दिशा में आगे बढ़ना चाहता है। इराक युद्ध, यमन संघर्ष, ड्रोन हमले और ईरान के साथ बढ़ती प्रतिस्पर्धा ने सऊदी अरब को गहरी चिंता में डाल दिया है। सऊदी अरब अब तेल के साम्राज्य से आगे बढ़कर पूंजी, तकनीक, धर्म और रणनीतिक शक्ति के सहारे एक निर्णायक क्षेत्रीय शक्ति बनना चाहता है। उसने अमेरिका से संबंध रखते हुए चीन के साथ आर्थिक तालमेल बढ़ाया है और रूस से भी उसे कोई परहेज नहीं है। उसने तुर्किये और पाकिस्तान के साथ सुरक्षा सहयोग मजबूत कर ईरान पर दबाव बनाने की कोशिश की है। तुर्किये का सपना है कि वह फिर से मध्य-पूर्व की निर्णायक शक्ति बने। वहीं, पाकिस्तान चाहता है कि उसकी सैन्य शक्ति और परमाणु क्षमता उसे मुसलिम दुनिया और दक्षिण एशिया में अधिक रणनीतिक महत्त्व दिलाए तथा उसकी आर्थिक कमजोरियों को खाड़ी देशों की पूंजी और साझेदारियों से सहारा मिले। मगर इन तीनों देशों के समझौते की वास्तविक मजबूती अभी भविष्य के संकटों में परखी जानी बाकी है।

बाहरी शक्तियों का सहारा

विरोधाभासों और आंतरिक चुनौतियों से घिरा पाकिस्तान अपनी विदेश नीति में बार-बार बाहरी शक्तियों का सहारा तलाशता रहा है। शीतयुद्ध के दौर में वह अमेरिका की रणनीतिक जरूरतों का महत्त्वपूर्ण सैन्य साझेदार बना और बदले में उसे आर्थिक सहायता, हथियार एवं सुरक्षा सहयोग मिला। मगर इस साझेदारी की कीमत भी पाकिस्तान को चुकानी पड़ी। अफगान युद्ध, कट्टरपंथ, आतंकवाद और आंतरिक अस्थिरता ने धीरे-धीरे उसके सामाजिक और सुरक्षा ढांचे को प्रभावित किया। पाकिस्तान की समस्या यह है कि उसकी विदेश नीति अक्सर आंतरिक कमजोरी की भरपाई बाहरी गठबंधनों के सहारे करने की कोशिश करती दिखाई देती है। अमेरिका के बाद चीन, खाड़ी देशों और अब तुर्किये के साथ उसकी बढ़ती निकटता इसी प्रवृत्ति का हिस्सा है। पाकिस्तान की सबसे बड़ी सुरक्षा चिंता भारत है। अफगानिस्तान उसकी पश्चिमी सीमा पर चुनौती है। चीन उसका सबसे महत्त्वपूर्ण रणनीतिक साझेदार है। पाकिस्तान की अर्थव्यवस्था लगातार बाहरी सहायता और निवेश की तलाश में रहती है।

धार्मिक विचारधारा से परे

तुर्किये, पाकिस्तान और सऊदी अरब का सबसे दिलचस्प पक्ष 'मुसलिम ब्रदरहुड' है। हालांकि, इस मामले में तुर्किये और सऊदी अरब का दृष्टिकोण कभी एक जैसा नहीं रहा। तुर्किये ने 'मुसलिम ब्रदरहुड' से जुड़े राजनीतिक समूहों के साथ सहानुभूति दिखाई, जबकि सऊदी ने उसे अपने लिए राजनीतिक खतरा माना। ऐसे में जाहिर है यह गठबंधन धार्मिक विचारधारा पर नहीं बना है। अगर 'मुसलिम ब्रदरहुड' वास्तव में इस गठबंधन की वैचारिक आधारशिला होता, तो तुर्किये और सऊदी अरब एक साथ खड़े नहीं होते। इसलिए इस गठबंधन का वास्तविक आधार इस्लाम नहीं, बल्कि अपने-अपने स्वार्थ हैं। सऊदी अरब की ईरान से पुरानी प्रतिस्पर्धा है। तुर्किये और ईरान मध्य-पूर्व में प्रभाव के लिए एक-दूसरे के प्रतिद्वंद्वी भी हैं। पाकिस्तान, ईरान से सीमा साझा करता है और किसी भी संघर्ष के दौरान सबसे कठिन स्थिति में आ सकता है। इसलिए इस नए गठबंधन के पीछे ईरान की छाया को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता।

इस गठबंधन की सबसे बड़ी चुनौती यह है कि तीनों देशों की रणनीतिक प्राथमिकताएं अलग हैं। सऊदी अरब की मुख्य चिंता ईरान और खाड़ी की सुरक्षा है, जबकि पाकिस्तान की सुरक्षा नीति का केंद्र भारत और दक्षिण एशिया है। तुर्किये के हित मध्य-पूर्व से आगे काकेशस, भूमध्यसागर, रूस और नाटो तक फैले हैं। ऐसे में किसी संकट की स्थिति में तीनों देशों की प्राथमिकताएं एक जैसी रहेंगी, यह निश्चित नहीं है। इस गठबंधन की असली ताकत समझौते पर हस्ताक्षर में नहीं, बल्कि संकट की घड़ी में एक-दूसरे के साथ खड़े रहने की क्षमता से तय होगी। पश्चिम एशिया में संघर्ष के दौरान पाकिस्तान की मध्यस्थ की भूमिका और भारत-सऊदी अरब के बीच ऊर्जा, निवेश, व्यापार तथा रणनीतिक संबंधों की मजबूती से पता चलता है कि इस गठबंधन की सीमाएं स्पष्ट है। संकट की घड़ी में राष्ट्रीय हित साझा सुरक्षा प्रतिबद्धताओं पर भारी पड़ सकते हैं।

राजनीति के समांतर

वक्त की नब्ज

तवलीन सिंह

> जंतर मंतर के प्रदर्शन के बाद जगह-जगह दिखे हैं जेन-जी के अलावा जेन-अल्फा बच्चे जो अपने स्कूलों के बाहर सड़कों पर निकल कर याद दिलाते हैं कि उनके स्कूल में न शिक्षक हैं न शौचालय, न पीने का साफ पानी और न कोई और बुनियादी सुविधा। काकरोच जनता पार्टी न जन्म लेती, तो देश में किसी भी राज्य में इन बच्चों की आवाज कोई नहीं उठाता। दोष हमारा भी है कि हमने सिर्फ इसके पीछे राजनीति पर ध्यान दिया है।

स्वतंत्रता दिवस जब भी पास आता है, मुझे एक चीज बहुत तकलीफ देती है। वह है छोटे बच्चों को तिरंगा बेचते हुए देख कर जो दिल्ली और मुंबई की ट्रैफिक बत्तियों पर खड़े दिखते हैं। इन बच्चों के चेहरों पर थकावट नजर आती है, अक्सर इन बच्चों के बाल बेरंग होते हैं कुपोषण की वजह से। अक्सर नंगे पांव होते हैं और इनके कपड़े दर्शाते हैं इनके माता-पिता की गरीबी। कई बार बच्चे इतने छोटे होते हैं कि उनके हाथ गाड़ी की खिड़की तक नहीं पहुंचते हैं, कई बार बारिश से भीगे होते हैं वे तिरंगे झंडे, जिन्हें बेचने की कोशिश में रहते हैं। मैं हमेशा उनसे ज्यादा पैसों में खरीद लेती हूं तिरंगे, यह जानते हुए कि उनसे कोई या तो बड़ा भाई छीन लेने वाला है पैसे या कोई और। इन बच्चों में हर साल दिखती है मुझे अपने देश की शर्मनाक कहानी।

बहुत अच्छा लगा जब इस साल काकरोच जनता पार्टी के संस्थापक अभिजीत दिपके ने वीडियो डाला इंस्टाग्राम पर यह कहते हुए कि इन बच्चों को सड़कों पर नहीं, स्कूलों में होना चाहिए। उन्होंने कहा कि उनकी पार्टी देश भर में शुरू कर रही है अभियान ग्रामीण स्कूलों को सुधारने के लिए। इतना बड़ा अभियान सफल होगा कि नहीं मैं नहीं जानती, लेकिन इतना जानती हूं कि हमारे राजनेताओं में थोड़ी भी शर्म होती, तो इस अभियान को उन्होंने बहुत पहले शुरू किया होता। देशभक्ति के उनके नारे खोखले लगते हैं जब साफ जाहिर है कि भारत माता का हाल इतना बुरा है कि हम अपने बच्चों को ठीक से पढ़ा भी नहीं सकते हैं स्वतंत्रता के करीब आठ दशक बाद।

ग्रामीण स्कूल अकेले नहीं हैं जो बिल्कुल बेहाल हैं। महानगरों की झुग्गी बस्तियों के स्कूलों में झांक कर देखिए, तो उनकी कक्षाओं में भी आप पाएंगे टूटी पुरानी दीवारें और मेज कुर्सियां अगर मेज कुर्सियां होती भी हैं। ऊपर से अगर आप दो मिनट इन स्कूलों के शिक्षकों से बात करने की तकलीफ करते हैं, तो स्पष्ट हो जाएगा बहुत जल्दी कि सुधार लाना है अगर शिक्षा में, तो पहला काम होना चाहिए इन शिक्षकों का प्रशिक्षण। इसके लिए जरूरत है लाखों प्रशिक्षण केंद्रों की जिसकी बात अभी तक एक भी आला नेता नहीं कर रहा है।

मोदी भक्त और भाजपा के प्रवक्ता सीना चौड़ा करके याद दिलाते फिरते हैं कि मोदी ही हैं जिन्होंने 'परीक्षा पे चर्चा' जैसे कार्यक्रम शुरू किए। कभी इस टीवी प्रोग्राम पर ध्यान दीजिए अगर, तो फौरन दिखेगा आपको कि जिन बच्चों का मैंने जिक्र करके इस लेख को शुरू किया है, उनका नामोनिशान नहीं दिखेगा प्रधानमंत्री के इस कार्यक्रम में। दिखेंगे आपको ऐसे बच्चे जिनकी वर्दियां साफ-सुथरी होती हैं और जिनके पांव में जूते होते हैं। बिल्कुल ऐसे ही बच्चे आपको दिखेंगे श्रोताओं में जब लाल किले के प्राचीर से प्रधानमंत्री स्वतंत्रता दिवस पर भाषण देते हैं।

एक पूर्व मोदी भक्त होने के नाते अपनी सफाई में कहना चाहती हूं कि मेरी भक्ति तब शुरू हुई थी, जब लाल किले से मोदी ने अपने पहले भाषण में स्वच्छ भारत योजना का एलान किया था। जब उस प्राचीर से उन्होंने 'बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ' का नारा बुलंद किया था और उस प्राचीर से उन्होंने अपने सांसदों और विधायकों को नसीहत दी थी कि अपने चुनाव क्षेत्रों में जब वापस लौटेंगे, तो कम से कम दो गांव चुन कर उनको आदर्श गांव बनाने की कोशिश करें। यानी ऐसे गांव जिन में शहरों जैसी सुविधाएं उपलब्ध हों।

प्रधानमंत्री ने वाराणसी के देहात में जिस गांव को 'माडल' बनाया, उसको मैंने देखा 2019 में आम चुनाव के दौरान। यकीन मानिए हैरान रह गई थी मैं, जब देखा कि इस गांव में अच्छे स्कूलों के अलावा अच्छी सड़कें थीं, बिजली-पानी की पूरी सुविधा थी और दो बैंक भी थे। मगर क्या प्रधानमंत्री ने अभी तक देखा नहीं है कि उनके अलावा शायद ही कोई मंत्री या सांसद होगा उनकी पार्टी में जिसने अपने चुनाव क्षेत्र में थोड़ी भी कोशिश की है कभी इस तरह के सुधार लाने की? क्या प्रधानमंत्री ने कभी गौर किया है कि उनके आसपास के जो नेता हैं उनको सिर्फ अपने परिवार की ही चिंता रहती है? ध्यान दिया होता बहुत पहले, तो आज यह हाल न होता कि देश के बच्चे उन बुनियादी सुविधाओं की मांग कर रहे हैं जो उनका हक है।

जंतर मंतर के प्रदर्शन के बाद जगह-जगह दिखे हैं जेन-जी के अलावा जेन-अल्फा बच्चे जो अपने स्कूलों के बाहर सड़कों पर निकल कर याद दिलाते हैं कि उनके स्कूल में न शिक्षक हैं न शौचालय, न पीने का साफ पानी और न कोई और बुनियादी सुविधा। काकरोच जनता पार्टी न जन्म लेती, तो देश में किसी भी राज्य में इन बच्चों की आवाज कोई नहीं उठाता। दोष हम मीडिया वालों का भी है इसलिए कि जब से ये प्रदर्शन शुरू हुए हैं शिक्षा की मांगों को लेकर, हमने सिर्फ इसके पीछे राजनीति पर ही ध्यान दिया है।

पिछले सप्ताह मुझे एक टीवी चर्चा में बुलाया था एक अंग्रेजी चैनल ने और मुझे दुख हुआ यह देखकर कि एंकर की खोजी पत्रकारिता सिर्फ यहां तक थी कि वह किसी तरह साबित करे कि राहुल गांधी ने रांची वाले प्रदर्शन पर ध्यान नहीं दिया, क्योंकि झारखंड सरकार में कांग्रेस के भी मंत्री हैं। क्या यह सबसे बड़ा मुद्दा है इस वक्त? राजनीति की बातें हमको छोड़ देनी चाहिए राजनीतिकों के लिए। हम मीडियावालों को बातें करनी चाहिए सिर्फ इस पर कि भारत के सरकारी स्कूलों का इतना बुरा हाल क्यों है? असली स्वतंत्रता दिवस तब आएगा, जब शहरों की सड़कों पर नहीं दिखेंगे बेहाल और भूखे बच्चे अपने नन्हे हाथों में तिरंगा लिए हुए।

चुनौतियों के बीच युवा

समाज

अलका 'सोनी'

> भारत के विकसित राष्ट्र बनने का सपना केवल हाई-टेक शहरों या कृत्रिम बुद्धिमत्ता से पूरा नहीं होगा। इसके लिए ऐसे युवा चाहिए जो ज्ञानवान होने के साथ-साथ संवेदनशील, आत्मविश्वासी और जिम्मेदार भी हों। जीवन की सबसे कठिन परीक्षाओं का कोई प्रश्नपत्र नहीं होता। इसलिए बच्चों को केवल परीक्षा के लिए नहीं, बल्कि जीवन के लिए तैयार करना ही आज की सबसे बड़ी राष्ट्रीय जिम्मेदारी है।

संयुक्त राष्ट्र जनसंख्या कोष के अनुसार भारत की लगभग पच्चीस फीसद आबादी दस से चौबीस वर्ष के आयु वर्ग में है। यही किशोर और युवा आने वाले वर्षों में देश की आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक दिशा तय करेंगे। इसलिए यह प्रश्न केवल शिक्षा का नहीं, बल्कि राष्ट्र निर्माण का है कि क्या हम अपने किशोरों को केवल परीक्षाओं के लिए तैयार कर रहे हैं या उन्हें जीवन की वास्तविक चुनौतियों से जूझने की क्षमता से भी लैस कर रहे हैं?

आज शिक्षा का अर्थ आमतौर पर अच्छे अंक, प्रतियोगी परीक्षाओं में सफलता और आकर्षक करिअर तक सीमित हो गया है। माता-पिता, विद्यालय और समाज- सभी का ध्यान उपलब्धियों पर अधिक है, जबकि व्यक्तित्व निर्माण पर अपेक्षाकृत कम। परिणाम यह है कि अनेक विद्यार्थी शैक्षणिक रूप से सफल होने के बावजूद तनाव, असफलता, अकेलेपन, डिजिटल दबाव और निर्णय लेने की कठिनाइयों से जूझते दिखाई देते हैं। परीक्षा या किसी क्षेत्र में असफलता मिलने पर ये किशोर कई बार मौत को गले लगा लेते हैं। जीवन के प्रति बढ़ती उनकी निराशा का हल उनके माता-पिता के साथ ही समाज के पास भी है। अगर हम धैर्य और विश्वास के साथ उनकी हर बात सुनें, उन्हें भावी जीवन में आने वाले उतार-चढ़ाव के साथ मौजूद विकल्पों के बारे में बताएं, तो वे मानसिक रूप से इसके लिए तैयार रहेंगे। यह हमारी जिम्मेदारी है कि हम उनमें छिपी खूबियों को खोजें, उन्हें प्रशिक्षित करें और उन्हें परिपक्व समझ हासिल करने के लिए मार्गदर्शन करें। इस क्षमता का आधार लचीलापन है। लचीला होने का अर्थ है हानि, असफलता और सदमे जैसी घटनाओं के बाद फिर से सामान्य स्थिति में लौटने की क्षमता रखना। लचीला होना केवल इसलिए नहीं है कि व्यक्ति दर्द को पहचान सकता है, बल्कि इसका अर्थ है तनाव के प्रति सचेत रहना, उससे निपटने के तरीके को समझना और बिना किसी झिझक के मदद मांगना।

आज के किशोर ऐसे दौर में बड़े हो रहे हैं, जहां कृत्रिम बुद्धिमत्ता, सोशल मीडिया, साइबर अपराध, सूचना की बाढ़ और निरंतर बढ़ती आपसी तुलना उनकी दिनचर्या का हिस्सा बन चुके हैं। तकनीक ने अवसर दिए हैं, लेकिन मानसिक दबाव भी बढ़ाया है। ऐसे समय में केवल विज्ञान, गणित और भाषा का ज्ञान पर्याप्त नहीं हो सकता। अब शिक्षा को बच्चों को यह भी सिखाना होगा कि वे अपनी भावनाओं को कैसे समझें, किसी भी तरह की असफलता से कैसे उबरें, सही और गलत सूचना में अंतर कैसे करें, डिजिटल दुनिया का सुरक्षित उपयोग कैसे करें तथा धन और समय का विवेकपूर्ण प्रबंधन कैसे करें।

ऐसे समय में केवल गणित, विज्ञान और भाषा का ज्ञान पर्याप्त नहीं है। आवश्यक यह भी है कि किशोर अपनी भावनाओं को समझें और नियंत्रित करना सीखें। असफलता को स्वीकार कर दोबारा उठ खड़े होने का साहस रखें। सही और गलत सूचना में अंतर कर सकें। डिजिटल माध्यमों का जिम्मेदारी से उपयोग करें। धन, समय और संबंधों का विवेकपूर्ण प्रबंधन सीखें। फिनलैंड, सिंगापुर, आस्ट्रेलिया और कनाडा जैसे देशों में भावनात्मक शिक्षा, मानसिक स्वास्थ्य, सहयोग और वित्तीय साक्षरता को नियमित पाठ्यक्रम का हिस्सा बनाया गया है। इसी संदर्भ में 'टीन मैनेजमेंट कैपेबिलिटी' जैसी अवधारणा अत्यंत प्रासंगिक प्रतीत होती है। यानी अपनी भावनाओं, समय, निर्णयों, रिश्तों, जिम्मेदारियों, धन, डिजिटल व्यवहार और भविष्य की दिशा को समझदारी से संभालने की क्षमता।

अगर कोई किशोर इन क्षमताओं के बिना वयस्क जीवन में प्रवेश करता है, तो वह इन्हें आखिर सीख तो लेगा, लेकिन अक्सर कठिन अनुभवों, असफलताओं और संघर्षों के माध्यम से। वह पैसे का महत्त्व कर्ज में डूबने के बाद समझ सकता है और भावनात्मक नियंत्रण का मूल्य तब, जब रिश्ते टूटने लगें। इसलिए जरूरी है कि वे भावनात्मक बुद्धिमत्ता, लचीलापन, सहयोग की भावना, आलोचनात्मक चिंतन, डिजिटल और कृत्रिम बुद्धिमत्ता साक्षरता तथा वित्तीय साक्षरता जैसी छह मूलभूत क्षमताओं से लैस होकर जीवन में आगे बढ़ें।

भावनात्मक बुद्धिमत्ता बच्चों को अपनी भावनाओं को समझने और नियंत्रित करने की क्षमता देती है। लचीलापन उन्हें असफलता को अंत नहीं, बल्कि एक सीख का अवसर मानना सिखाता है। आलोचनात्मक चिंतन उन्हें अफवाहों और डिजिटल भ्रम से बचाता है। डिजिटल और एआइ साक्षरता उन्हें तकनीक का जिम्मेदारी से उपयोग करना सिखाती है। वहीं वित्तीय साक्षरता भविष्य के प्रति जिम्मेदार आर्थिक व्यवहार की नींव रखती है। यहां परिवार की भूमिका भी अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। अगर घर में बच्चों से केवल अंकों और करिअर की चर्चा होगी, लेकिन उनकी भावनाओं, भय और असफलताओं को सुनने का समय नहीं होगा, तो शिक्षा अधूरी ही रहेगी। बच्चों को यह विश्वास मिलना चाहिए कि गलती करना असफलता नहीं, बल्कि सीखने की स्वाभाविक प्रक्रिया है।

विद्यालयों में जीवन-कौशल आधारित कक्षाएं, प्रशिक्षित काउंसलर, मानसिक स्वास्थ्य जागरूकता, साइबर सुरक्षा, वित्तीय साक्षरता और सामुदायिक सेवा जैसी गतिविधियों को नियमित बनाया जाना चाहिए। साथ ही शिक्षकों को भी बदलते समय के अनुरूप प्रशिक्षित करना आवश्यक है, ताकि वे केवल विषय-विशेषज्ञ ही नहीं, बल्कि मार्गदर्शक की भूमिका भी निभा सकें। भारत अगर वास्तव में विकसित राष्ट्र बनना चाहता है, तो उसे केवल तकनीकी रूप से दक्ष नहीं, बल्कि मानसिक रूप से सशक्त, नैतिक रूप से जागरूक और सामाजिक रूप से उत्तरदायी युवा तैयार करने होंगे। किसी भी राष्ट्र की सबसे बड़ी पूंजी उसके प्राकृतिक संसाधन नहीं, बल्कि उसके नागरिक होते हैं।

भारत के विकसित राष्ट्र बनने का सपना केवल आधुनिक इमारतों, हाई-टेक शहरों या कृत्रिम बुद्धिमत्ता से पूरा नहीं होगा। इसके लिए ऐसे युवा चाहिए जो ज्ञानवान होने के साथ-साथ संवेदनशील, आत्मविश्वासी, अनुशासित और जिम्मेदार भी हों। अगर हम चाहते हैं कि आने वाली पीढ़ी केवल सफल पेशेवर ही नहीं, बल्कि अच्छे नागरिक, जिम्मेदार अभिभावक और संवेदनशील इंसान भी बने, तो हमें शिक्षा की परिभाषा बदलनी होगी। जीवन की सबसे कठिन परीक्षाओं का कोई प्रश्नपत्र नहीं होता। इसलिए बच्चों को परीक्षा के साथ जीवन के लिए तैयार करना ही आज की सबसे बड़ी राष्ट्रीय जिम्मेदारी है।

अपना अपना आंदोलन

बाखबर

सुधीश पचौरी

> झारखंड में 'परीक्षा सुधार' पर आंदोलन के बीस दिन। इस दौरान छात्र अहिंसक रहे और रोज पिटे। छह सौ गिरफ्तार भी हुए। मामले भी बने। भाजपा ने समर्थन में बंद रखा, लेकिन बाकी से मिला सिर्फ सिद्धांत कथन कि हम किसी पर भी हिंसा का समर्थन नहीं करते..।

एक सूखी-सी खबर। शरद पवार की प्रधानमंत्री से मुलाकात...। दूसरी सूखी-सी खबर- अकाली नेता सुखबीर सिंह बादल की प्रधानमंत्री से मुलाकात। क्यों मिले? क्या बात हुई? सब रहस्य।

फिर फुकेट से दिल्ली आते एअर इंडिया के एक यात्री विमान के अचानक तीन सौ फुट नीचे तक गुलाटी मारने और कई यात्रियों के घायल होने की खबर। इसके बाद दो-दो 'डोप टेस्ट' में पायलट के गांजा फूंकने की पुष्टि... जांच के आदेश। इसके बाद एक दिन तमिलनाडु ने केंद्र को एक झटका-सा दे दिया कि 'तमिल एंथम' पहले गाया जाए, फिर राष्ट्रगान और इसके बाद 'वंदे मातरम्' गाया जाए।

झारखंड में 'परीक्षा सुधार' पर आंदोलन के बीस दिन। इस दौरान छात्र अहिंसक रहे और रोज पिटे। छह सौ गिरफ्तार हुए, मामले भी बने। भाजपा ने समर्थन में बंद रखा, लेकिन बाकी से मिला सिर्फ सिद्धांत कथन कि हम किसी पर भी हिंसा का समर्थन नहीं करते..। केंद्र ने मांगें मानीं, लेकिन झारखंड के छात्रों की सीबीआइ की जांच की मांग किसने मानी? अपना-अपना आंदोलन, अपना-अपना समर्थन! एक कानूनी प्रवक्ता कहिन कि आप 'जेन-जी' से अपना 'नेरेटिव' चलवा कर भारत को नष्ट तो कर सकते हैं, लेकिन आप नहीं जानते कि जेन जी के पीछे कौन खड़ा है! वे किसका 'नेरेटिव' चला रहे हैं!

यह 'केरलम' का 'जनतंत्र' है कि एक शिक्षक ने प्रश्नोत्तरी में पूछ लिया कि अंग्रेजों के शासन में जेल की सबसे ज्यादा लंबी सजा किसे मिली? इतने पर ही उस शिक्षक को निलंबित कर दिया गया।

एक चैनल पर चर्चा में 'पोस्ट माडर्न जेन जी' का एक विखंडन-सा आया। सवाल रहे कि 22 करोड़ से अधिक की 'जेन जी जनता' कौन है? उनका क्या एजंडा है? एक ज्ञानी कहिन कि युवा वोटर अब स्थिर हो चुका है। ये शिक्षित हैं, डिजिटल हैं, आकांक्षी हैं। एक-दूसरे से जुड़े रहते हैं। दक्षिण एशिया में ये सत्ताएं बदल रहे हैं। राजनीतिक दल उनकी भाषा नहीं समझते।

दूसरी ज्ञानी कहिन- ये बेरोजगार हैं और सर्वत्र हैं। ये कह रहे हैं कि हमें शिक्षा का अधिकार दो। यह 'मोहभंग' की स्थिति में हैं। ये पिछड़ जाने से डरते हैं। भारत में वैसी विद्रोह की स्थिति तुरंत नहीं बन सकती। सबको रोजगार कोई नहीं दे सकता। तीसरा चुनावी ज्ञानी कहिन कि जेन जी में गहरा असंतोष है। चौथा ज्ञानी कहिन, सच है, 2024 में भाजपा को चार फीसद वोट कम मिला, उसे बहुमत नहीं मिला।

दूसरी ओर एक सवाल हुआ कि क्या ये हमेशा विरोधी रहने वाले हैं? जवाब में एक कहिन कि भारत की सबसे बड़ी युवा जनसंख्या का कथित 'लाभ' अब एक 'चुनौती' बनता जा रहा है। इनमें सत्तर फीसद बेरोजगार 'एंग्री यंग मैन' हैं। एक ज्ञानी कहिन कि 2014 में इनको मोदी ने सपने दिए, अब वही मोहभंग की स्थिति में है। 'आइटी' में गिरावट काफी नुकसानदेह है। फिर एक कहिन कि ये 'इंस्टाग्रामी' हैं। यह पीढ़ी एक-दूसरे की नकल करती है। लोग मुफ्त राशन ले रहे हैं, लेकिन वोट विरोध में दे रहे हैं... लेकिन इनको कोई पूरी तरह संतुष्ट नहीं कर सकता..।

मानसून सत्र विपक्ष के सतत विरोध में बहा... अंतिम दिन एक मिनट 'वंदेमातरम्' हुआ। फिर सदन अनिश्चित काल के लिए स्थगित हो गया। संसद में हर दिन विपक्ष का शोर हावी रहा। पोस्टर दिखते रहे, नारे लगते रहे। लोकसभा अध्यक्ष लाख कहें कि सरकार हर मुद्दे पर चर्चा के लिए तैयार है, आप चर्चा होने दें, लेकिन विपक्ष मानें तब न..!

संसद की बहस भंग कर विपक्षी दल संसद के मकर द्वार के आगे हर रोज प्रदर्शन करते। एक-दो बार सत्ता दल ने भी विरोध में प्रदर्शन किया। सत्ता पक्ष का आरोप रहा कि विपक्ष के नेता हर रोज मुद्दा बदलते रहे। गोल पोस्ट बदलते रहे। पहले कहा कि शिक्षामंत्री हटाए जाएं, जब वे हटा दिए गए, तो मांग करने लगे कि गृहमंत्री ने 'पैलेट गन' चलवाई, तो जिम्मेदार हुए और उनके अनजाने में चली तो 'अक्षम' हुए। दोनों ही स्थितियों में इस्तीफा बनता है, सो वे इस्तीफा दें। फिर संसदीय मंत्री ने बताया कि गृहमंत्री सदन में बयान देने पर सहमत हो गए हैं और चर्चा होगी। अगले दिन संसदीय मंत्री ने कहा कि विपक्ष के नेता ने फिर गोल पोस्ट बदल दी है। वे हमेशा गोल पोस्ट बदल देते हैं। चर्चा नियमों से होती हैं, वे नहीं होने देते। बताइए सत्ता पक्ष क्या करे! अंत में मकर द्वार पर एक 'नुक्कड़ नाटक' छाप नारा लगा।

फिर शाम को विपक्ष के नेता ने एक मंच से कहा, पता नहीं इनके दिमाग में कहां से घुस गया कि विदेश नीति का यह मतलब है... फिर नेता, एक अन्य नेता की ओर दोनों हाथों को फैला कर बढ़ते हैं और झप्पी लेते हैं..। वे नेता तुरंत एक टिप्पणी करते दिखते हैं कि 'कहीं आपने मेलोनी समझ कर तो नहीं पकड़ा!' विपक्ष के नेता का बोलना जारी रहता है, सरकार लोगों को सुनना नहीं चाह रही...। हम इनको पागल कर देंगे। वह सो नहीं पाता होगा...। सत्ता पक्ष बिसूरता रहा कि ये कौन-सी भाषा है?

जनसत्ता सरोकार

साहित्य

तीन

जनसत्ता | 16 अगस्त, 2026

रेखा लंबी कर दी

कहानी

वीरेंद्र बहादुर सिंह

‘कुंदन’। अविनाश राय की भारी आवाज गूंजी। कुंदन रसोई में थी। हाथ पोछते हुए बाहर आई, ‘बोलिए।’ ‘यह पंखा पांच नंबर पर क्यों है? अभी तो मौसम में ठंडक है। तीन पर भी चल सकता है। पिछले दो महीनों का बिजली का बिल देखा है?’ कुंदन ने गहरी सांस ली और पंखे का रेगुलेटर घुमा दिया। सेवानिवृत्ति के बाद से यह रोज का काम था। कभी सब्जी में नमक ज्यादा होने की शिकायत, तो कभी धोबी ने कपड़ों पर ठीक से इस्त्री नहीं की, इसकी पंचायत। कुंदन को लगता कि क्या यह वही पुरुष है, जिसके साथ उसने पैंतीस साल बिताए हैं? या फिर कुर्सी से उतर जाने के बाद के इस आदमी को भीतर का खालीपन कचोट रहा है?

वह वापस रसोई में चली गई। उस दिन रविवार था। थोड़ी ही देर में उनकी बेटी कृतिका आने वाली थी। कृतिका दिल्ली में पत्रकार थी। उसके आने की खबर मात्र से कुंदन के चेहरे पर थोड़ी रौनक आ जाती थी। कृतिका यानी कुंदन की दबी हुई इच्छाओं का मुक्त आकाश। दोपहर में भोजन करते समय मेज पर अविनाश राय ने थाली में रखी रोटी की ओर देख कर कहा, ‘आज रोटी थोड़ी मोटी नहीं लग रही? या फिर कृतिका आ रही है, इसलिए जल्दबाजी में बना दी?’

कुंदन परोसते-परोसते रुक गई। उससे रहा नहीं गया। वह बोली, ‘रोज तो यही रोटी आपको ठीक लगती है, आज कृतिका आने वाली है, इसलिए आपको सब कुछ अलग लग रहा है। आपका मिजाज आफिस के साहब जैसा है। लेकिन अब यहां कोई चपरासी नहीं है। मैं हूं।’ अविनाश राय चौंक गए। कुंदन सामान्यतः उनके सामने जवाब नहीं देती थी। उन्होंने कुंदन को तीखी नजर से देखा, लेकिन कुंदन नजर मिलाए बिना रसोई में चली गई। अंदर जाकर उसने आंखों के कोने पोछे। स्त्री का जीवन आखिर क्या है? बचपन में पिता की आज्ञा, जवानी में पति की आज्ञा और बुढ़ापे में किसकी? दरवाजे की घंटी बजी। कुंदन ने चेहरे पर मुस्कान ठीक की और दरवाजा खोला। कृतिका खड़ी थी। जींस और कुर्ते में सजी, कंधे पर लैपटाप बैग और हाथ में एक छोटा-सा रंगीन कागज में लिपटा तोहफा। बोली, ‘मम्मी।’

कृतिका उससे लिपट गई। उस स्पर्श में एक ऐसी गर्माहट थी, जो कुंदन को पिछले काफी समय से नहीं मिली थी। खाने के बाद सभी बैठक में बैठे थे। अविनाश राय कृतिका से राजनीति और देश की स्थिति के बारे में पूछ रहे थे, जैसे साक्षात्कार ले रहे हों। कृतिका ने बीच में ही बात काट दी और कुंदन की ओर मुड़ी, ‘मम्मी, तुम्हें याद है वह छोटी-सी कहानी लिखी थी? ओस की बूंद? उस कालेज मैगजीन के लिए?' कुंदन हंसी, ‘अरे पागल, वह तो एक जमाना बीत गया। अब कहां याद दिला रही है?’ ‘नहीं, मुझे याद दिलाना है। मैंने वह कहानी अपने एक संपादक मित्र को पढ़ाई थी। वे लोग एक नई कड़ी शुरू कर रहे हैं, गृहिणियों की कलम से और उन्हें तुम्हारी लेखन शैली बहुत पसंद आई है। अगले हफ्ते मुंबई में एक कार्यशाला है, जिसमें जाने-माने साहित्यकार आने वाले हैं। मैंने तुम्हारा नाम रजिस्टर करवा दिया है।’

रात में अविनाश राय सो नहीं सके। सोचने लगे, क्या सचमुच वे इतनी ज्यादा दखलंदाजी करने लगे थे? अपनी सत्ता चली गई थी, इसलिए क्या वह घर पर भी सत्ता जमा रहे थे?

बैठक में सन्नाटा छा गया। अविनाश राय ने चश्मा नाक से थोड़ा नीचे किया। फिर बोले, ‘कार्यशाला? मुंबई? इस उम्र में?’ अविनाश राय की आवाज व्यंग्यात्मक थी, ‘कुंदन, क्या तुम अब लेखिका बनोगी? घर का काम कौन करेगा? और तुम जानती हो न कुंदन, मुझे समय पर खाना और दवा चाहिए। इस उम्र में ऐसी भागदौड़ शरीर को नहीं पचेगी।’ कुंदन ने नजरें झुका ली। उसके भीतर एक उमंग जागी थी, लेकिन सालों से दबी मानसिकता ने उसे रोक रखा था। कृतिका ने पिता की ओर देख कर कहा, ‘पापा, आप रिटायर हुए हैं, मम्मी नहीं। वास्तव में मम्मी ने कभी छुट्टी ली ही नहीं। रविवार को भी नहीं और त्योहारों में भी नहीं। आपने पूरी जिंदगी आफिस में फाइलें संभालीं, मम्मी ने घर संभाला। अब जब आपके पास समय है तो आप घर क्यों नहीं संभाल सकते? दो दिन की तो बात है।’

‘यह सब बोलने में अच्छा लगता है कृतिका।’ अविनाश राय ने हाथ झटक दिया, ‘व्यवहार में यह सब नहीं चलता। वैसे भी कुंदन को अब इन सब में रुचि नहीं होगी। क्यों कुंदन?’ ‘मुझे जाना है।’ एक धीमी, लेकिन स्पष्ट आवाज आई। अविनाश राय और कृतिका दोनों चौंक गए। ‘मुझे मुंबई जाना है।’ कुंदन ने नजर उठाकर पति की आंखों में देखा। उन आंखों में अब डर नहीं था बल्कि एक दृढ़ निर्णय था। उसने कहा, ‘इस उम्र में मुझे खुद से मिलने का शौक जाग गया है।’ अविनाश राय स्तब्ध रह गए। कुंदन इतना लंबा और इतना स्पष्ट बोल सकती है, यह उनकी कल्पना से बाहर था। अविनाश राय ने बचाव की तरकीब आजमाई, ‘खाना।’ ‘आप बना लेना या टिफिन मंगवा लेना।’ वातावरण में एक भारी शांति छा गई। कृतिका की आंखों में मां के लिए गर्व था। उसने धीरे से कुंदन का हाथ दबाया।

रात में अविनाश राय सो नहीं सके। सोचने लगे, क्या सचमुच वे इतनी ज्यादा दखलंदाजी करने लगे थे? दफ्तर की सत्ता चली गई थी, इसलिए क्या वह घर पर सत्ता जमा रहे थे? अगले दिन सुबह कुंदन जल्दी उठी और तैयार हुई। बैठक में अविनाश राय बैठे हुए थे। कुंदन बैग लेकर बाहर आई। उसने कहा, ‘मैं निकल रही हूं। कृतिका मुझे स्टेशन छोड़ने आ रही है।’

अविनाश राय खड़े हुए। रसोई में गए और एक डिब्बा लेकर आए। कुंदन की ओर बढ़ाकर कहा, ‘ये थेपले हैं और सूखी सब्जी। सुबह जल्दी उठकर मैंने बना लिए थे। बाहर का खाओगी तो पित्त हो जाएगा।’ कुंदन क्षण भर के लिए ठिठक गई। अविनाश राय ने कहा ‘तुम्हारी कहानी वह ओस की बूंद मैंने भी पढ़ी थी। चोरी-छिपे। अच्छी थी। वहां जाकर दूसरी लिखना। मैं यहां सब संभाल लूंगा।’

कुंदन की आंखें नम हो गईं। लेकिन ये आंसू दुख के नहीं थे। दहलीज पार करने से पहले उसने पीछे मुड़कर देखा। यह घर अब उसे कैदखाना नहीं, बल्कि घर लग रहा था। कार में बैठने के बाद कृतिका ने पूछा, ‘मम्मी, पापा बदल गए न?’ कुंदन ने कहा, ‘इंसान नहीं बदलते कृतिका, सिर्फ दृष्टिकोण बदलता है। मैंने अपनी रेखा लंबी कर दी, इसलिए उनकी रेखा अपने आप छोटी हो गई। लेकिन कोई बात नहीं। अब हम समानांतर चल सकेंगे।’

समय सूचक

समय से आगे देख रहा था ‘सूरदास’

जनसत्ता सरोकार

शारीरिक चुनौतियों की बात करें तो उसके पास आंखें नहीं थीं। लेकिन वह अपने वर्तमान को भविष्य के संदर्भ में देखने की क्षमता रखता है। प्रेमचंद के उपन्यास ‘रंगभूमि’ का सूरदास ऐसा ही किरदार है। उसके सामने केवल अपनी जमीन बचाने का सवाल नहीं है। उसके सामने उस मनुष्य की गरिमा बचाने का प्रश्न है, जिसे ताकतवर व्यवस्था विकास के नाम पर हटाना चाहती है।

प्रेमचंद का उपन्यास ‘रंगभूमि’ 1925 में प्रकाशित हुआ था। इसके मुख्य किरदार सूरदास की आंखें देख नहीं सकती हैं लेकिन अपने समय को अच्छे से पहचान सकती हैं। जिन लोगों ने व्यवस्था पर पूरी तरह कब्जा कर लिया है, जिनके पास सभी तरह के संसाधन हैं, जिनके जिम्मे ही भविष्य बनाने का नक्शा है, वे वर्तमान में खड़े मनुष्य को खारिज कर देते हैं। मनुष्य के नाम पर जो व्यक्ति व्यवस्था बन चुका होता है उसके लिए जमीन एक परियोजना है, खेत एक संसाधन है और गांव विकास की राह में आने वाली बाधा। सूरदास के लिए वही जमीन उसका घर, उसकी स्मृति और अस्मिता है। सूरदास हर तरह के दबाव के बावजूद हार मानने से इनकार कर देता है। सत्ता के गठजोड़ के बरक्स वह अपने नैतिक बल के सहारे खड़ा रहता है। उसे इस सत्य का अहसास है कि कमजोर होना और गलत होना, एक बात नहीं है।

‘रंगभूमि’ का किरदार सूरदास

आज भी सूरदास के रूप में प्रेमचंद व्यवस्था से पूछते दिखते हैं- जिस जमीन पर विकास खड़ा होगा, उस जमीन से हटाए जाने वाले आदमी का विकास कौन करेगा? सूरदास एक सचेत नागरिक की तरह दिखता है। उसे इस बात का अहसास है कि सत्ता अपने इरादे सीधे शब्दों में नहीं बोलती है। कभी वह विकास का नाम लेती है, कभी प्रगति का, कभी रोजगार का, कभी राष्ट्रहित का। शब्द बदलते रहते हैं, लेकिन सवाल वही रहता है-क्या इस प्रगति में मनुष्य बचा रहेगा?

करेले का गणित

बाल कथा

रंजना जायसवाल

रोहन पांचवीं कक्षा में पढ़ता था। वह एक चंचल, हंसमुख और समझदार लड़का था। उसे कहानियां पढ़ना, चित्र बनाना और क्रिकेट खेलना बहुत पसंद था। हिंदी, अंग्रेजी और सामान्य ज्ञान जैसे विषयों में उसके अच्छे अंक आते थे। लेकिन एक विषय ऐसा था, जिसका नाम सुनते ही उसके चेहरे का रंग उड़ जाता था। वह था-गणित। गणित की किताब देखते ही उसे लगता जैसे उसके सामने कोई बहुत बड़ी पहेली खड़ी हो गई हो। जोड़, घटाव और गुणा तक तो ठीक था, लेकिन जैसे ही भिन्न, दशमलव के प्रश्न सामने आते, उसका सिर चकराने लगता। वार्षिक परीक्षाएं नजदीक थीं।

एक शाम रोहन स्कूल से लौटा तो उसकी मां ने पूछा, ‘परीक्षा की तैयारी कैसी चल रही है? गणित भी पढ़ रहे हो न?’ यह सुनते ही उसका चेहरा उतर गया। ‘अभी नहीं। पहले हिंदी, अंग्रेजी और सामान्य ज्ञान पढ़ लूंगा। गणित बाद में कर लूंगा। मां ने मुस्कुराकर पूछा, ‘बाद में कब?’ ‘मां आप परेशान न होइए, मैं तैयारी कर लूंगा। वैसे भी परीक्षा होने में अभी बहुत दिन हैं।’ यह कहकर वह अपने कमरे में चला गया। मां समझ गईं कि रोहन गणित से बच रहा है।

धीरे-धीरे परीक्षा में केवल पांच दिन रह गए। अब तो रोहन को भी थोड़ा-थोड़ा डर लगने लगा था, लेकिन वह फिर भी गणित से दूर भाग रहा था। उसे लगता था कि यदि वह किताब खोलेगा तो मुश्किल सवाल देख कर और घबरा जाएगा। उधर मां चुपचाप सब देख रही थीं। एक दिन उन्होंने सोचा कि रोहन को समझाने का कोई अच्छा तरीका निकालना होगा।

उस दिन रविवार था। रोहन सुबह से ही बहुत खुश था, क्योंकि मां ने उसकी पसंद का खाना बनाने का वादा किया था। पूरे घर में स्वादिष्ट व्यंजनों की खुशबू फैली हुई थी। रोहन बार-बार रसोई में झांक कर पूछ रहा था, ‘मम्मी, खाना तैयार हुआ क्या?’ मां हंसकर कहतीं, ‘बस थोड़ी देर और।’ आखिरकार खाने का समय आ गया। रोहन उत्साह से मेज पर बैठ गया। उसने देखा कि थाली में गरमा-गरम पूड़ियां, मटर पनीर की सब्जी और खीर रखी हुई थी। थाली के कोने में एक कटोरी रखी थी जिसमें करेले की सब्जी थी। ‘मम्मी! यह करेला क्यों रखा है? मुझे बिलकुल पसंद नहीं है।’ मां शांत स्वर में बोलीं, ‘पहले करेला खत्म करो, फिर बाकी खाना।’ रोहन को लगा जैसे उसकी सारी खुशी गायब हो गई हो। उसने कहा, ‘मैं पहले पूड़ी और कचौड़ी खाऊंगा। करेला बाद में।’ मां ने सिर हिलाया। ‘नहीं। पहले करेला।’ रोहन समझ गया कि आज उसकी दाल नहीं गलने वाली। उसने धीरे-धीरे करेले का पहला कौर मुंह में रखा। कड़वाहट महसूस होते ही उसका मुंह बन गया। हर कौर के साथ वह सोचता, ‘बस थोड़ा और फिर पूड़ी और मटर-पनीर की सब्जी खाने को मिलेगी। उसके बाद स्वादिष्ट खीर खाने को मिलेगी।’ आखिरकार उसने करेले की सब्जी खाकर खत्म कर ही दी। उसकी खुशी का ठिकाना नहीं था। उसने पूड़ियां, मटर-पनीर की सब्जी खाई और अंत में मीठी-मीठी खीर भी खाई। स्वादिष्ट खाना खाकर उसका चेहरा फिर से खिल उठा था। खाना समाप्त होने के बाद मां ने पूछा, ‘रोहन, खाना कैसा लगा?’ ‘बहुत स्वादिष्ट!’ ‘और करेला?’ रोहन ने हंसते हुए कहा, ‘वह तो आज भी उतना ही खराब लगा।’ मां ने धीरे से पूछा, ‘जब तक करेला थाली में रखा था, तब तक क्या तुम बाकी खाने का मजा ले पा रहे थे?’ रोहन कुछ सोचकर बोला, ‘नहीं। मेरा ध्यान बार-बार उसी पर जा रहा था।’ ‘और जब तुमने उसे खा लिया तब?’ ‘तब तो मैं आराम से बाकी खाना खा पाया।’

मां ने प्यार से कहा, ‘बेटा, तुम्हारी पढ़ाई भी बिलकुल ऐसी ही है।’ रोहन ध्यान से सुनने लगा। मां बोलीं, ‘गणित तुम्हारे लिए करेले जैसा है। तुम्हें वह कठिन लगता है, इसलिए तुम उससे बच रहे हो। लेकिन वह तुम्हारे मन की थाली में रखा हुआ है। जब तक तुम उसे पूरा नहीं करोगे, तुम्हारा ध्यान बार-बार उसी पर जाएगा।’ रोहन चुप था। मां ने आगे कहा, ‘तुम रोज कहते हो कि कल से पढ़ूंगा। लेकिन हर दिन गणित और मुश्किल लगने लगता है। कठिन काम को टालने से वह आसान नहीं होता, बल्कि और मुश्किल दिखाई देने लगता है। सबसे पहले गणित पढ़ो। जितना समझ में आए उतना करो। जहां कठिनाई हो, मैं और तुम्हारे पापा मदद करेंगे। लेकिन उससे भागो मत।’ रोहन को मां की बात समझ आने लगी थी। उसे महसूस हुआ कि सचमुच पिछले कई दिनों से गणित का डर उसके मन पर बोझ बनकर बैठा हुआ था।

रोहन समझ गया कि आज उसकी दाल नहीं गलने वाली। उसने करेले का पहला कौर मुंह में रखा। कड़वाहट महसूस होते ही उसका मुंह बन गया। हर कौर के साथ वह सोचता, ‘बस थोड़ा और फिर पूड़ी-सब्जी खाने को मिलेगी। उसके बाद स्वादिष्ट खीर खाने को मिलेगी।’ आखिरकार उसने करेले की सब्जी खाकर खत्म कर ही दी।

उस शाम उसने अपनी गणित की किताब निकाली। पहले तो उसे थोड़ा डर लगा, लेकिन उसने हिम्मत नहीं छोड़ी। जब पहला पन्ना पूरा हुआ तो उसके चेहरे पर मुस्कान आ गई। ‘अरे! यह तो इतना मुश्किल नहीं था।’ मां ने कहा, ‘देखा? सबसे कठिन काम शुरू करना होता है।’ अगले चार दिनों तक रोहन ने सबसे पहले गणित को पढ़ा और फिर दूसरे विषय। धीरे-धीरे उसका आत्मविश्वास बढ़ता गया। परीक्षाएं शुरू हुईं। जब गणित का पर्चा आया तो रोहन ने ध्यान से प्रश्न पढ़े और एक-एक कर-के हल करता गया। वह खुशी-खुशी घर लौटा। ‘मां! मेरा गणित का पर्चा बहुत अच्छा हुआ।’ मां मुस्कुराईं। ‘अच्छा! तो करेले का स्वाद कैसा लगा?’ रोहन हंस पड़ा। ‘करेला आज भी कड़वा है, लेकिन अब मैं उससे डरता नहीं हूं।’ मां ने उसे गले लगा लिया। रोहन को बड़ी सीख मिल चुकी थी।

वो गुजरा जमाना याद है...

जनसत्ता सरोकार

कहते हैं, इंसान के पास एक अच्छा अतीत होना चाहिए। जब हम अपने वर्तमान में रहते हैं तब हमें यह अहम नहीं लगता कि आज हमारी जो युवावस्था है, वह कल हमारा अतीत होगी। लेकिन जैसे-जैसे उम्र ढलती है, न सिर्फ हमारा बल्कि हमारे समय का स्वभाव भी बदलने लगता है। भविष्य के नाम पर सिर्फ अतीत का संग्रहालय होता है। अब भविष्य छोटा दिखाई देने लगता है और अतीत अचानक बहुत बड़ा हो जाता है।

एक उम्र के बाद हम अपने अतीत को दोबारा जीते हैं। कोई पुराना गीत सुनाई देता है और अचानक हम बरसों पीछे पहुंच जाते हैं। किसी पुराने शहर की गंध, किसी घर की सीढ़ियां, स्कूल की घंटी, कालेज की कैंटीन, किसी दोस्त की आवाज या किसी प्रिय शिक्षक की कही हुई कोई बात। सब कुछ जैसे स्मृति के बंद दरवाजे खोल देता है। जो समय कभी गुजर गया था, वह मन के भीतर फिर से चलने लगता है।

इसलिए अच्छा अतीत केवल सुखद घटनाओं का संग्रह नहीं है। अच्छा अतीत वह है जिसमें मनुष्य ने सचमुच जीवन जिया हो। जिसने दोस्तियां की हों, प्रेम किया हो, असफलताएं झेली हों, किसी के लिए रोया हो, किसी को हंसाया हो, किसी की मदद की हो, कोई जोखिम उठाया हो, अपनी गलतियों से कुछ सीखा हो। उसके पास उम्र के अंतिम पड़ाव में लौटने के लिए बहुत कुछ होता है। स्मृतियों का अर्थ यह नहीं कि अतीत में सब कुछ अच्छा ही हुआ हो। कई बार हमारी सबसे प्रिय स्मृतियां उन्हीं दिनों से निकलती हैं जो उस समय कठिन थे। यादें समय की अदालत में घटनाओं का फैसला बदल देती हैं।

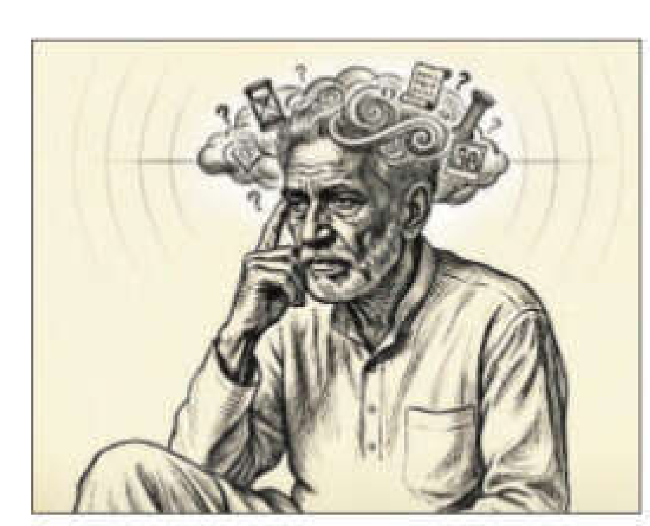

मार्गदर्शन

बुढ़ापा सबसे कठिन तब होता है जब पीछे मुड़कर देखने के लिए कुछ न हो। क्या कोई ऐसा दोस्त था जिसके साथ बिना वजह घंटों हंसा जा सके? क्या कोई ऐसी यात्रा थी जिसके बाद दुनिया बदल गई हो? क्या किसी से ऐसा प्रेम हुआ था जिसे याद करके आज भी मन थोड़ा नरम पड़ जाए? क्या कोई ऐसा काम किया था, जिस पर उम्र के इस पड़ाव पर भी गर्व हो? क्या कोई ऐसी गलती थी जिसे याद करके आज भी मुस्कान आ जाए? अगर इन सवालों के कुछ जवाब हमारे पास हैं तो समझिए, हमारे पास अच्छा अतीत है।

शायद यही कारण है कि बुजुर्ग लोग अक्सर एक ही कहानी कई बार सुनाते हैं। हमें लगता है कि वे भूल गए हैं कि यह कहानी पहले सुना चुके हैं। संभव है, वे भूले नहीं हैं और उस कहानी को सुनाते हुए वे उस समय में फिर पहुंच जाते हों, जहां उनके कुछ प्रिय लोग अभी जीवित हैं, जहां उनका शरीर जवान था, जहां कोई आवाज उन्हें नाम लेकर बुलाती थी, जहां जिंदगी के पास अभी बहुत समय था। उनकी कहानी सुन लेना इसलिए महज शिष्टाचार नहीं है। वह किसी व्यक्ति को उसके अतीत में कुछ देर साथ देना है। स्मृतियां उम्र को कम नहीं करतीं, लेकिन उम्र को अकेला होने से बचाती हैं। शायद जीवन की सबसे बड़ी तैयारी यही है कि जब भविष्य पीछे छूटने लगे, तब हमारे भीतर अतीत का एक उजला कमरा बचा रहे।

साबू : शक्ति की देसी कल्पना

अमर किरदार

जनसत्ता सरोकार

भारतीय बच्चों को सुपर हीरो का एक ऐसा किरदार मिला जिसके पास न टोपी थी, न मुखौटा, न कोई आधुनिक हथियार। उसके पास था एक विराट शरीर, असाधारण ताकत और अपने दोस्त के लिए अटूट भरोसा। नाम था-साबू। साबू उस समय की याद दिलाता है जब बच्चों की कल्पना में सुपर हीरो आसमान से नहीं उतरते थे, वे हमारी अपनी दुनिया में रहते थे। उनके सामने हमारे जैसे ही अपराधी, चालबाज और मुश्किलें होती थीं। उनके हथियार भी कुछ वैसे ही थे, बुद्धि, दोस्ती, हास्य और जरूरत पड़ने पर ताकत।

साबू, कार्टूनिस्ट प्राण कुमार शर्मा द्वारा रचे गए चाचा चौधरी के संसार का वह पात्र है, जो इस जोड़ी को पूरा करता है। चाचा चौधरी की पहचान उनकी असाधारण बुद्धि से है, जबकि साबू शारीरिक शक्ति का प्रतीक है। चाचा चौधरी का जन्म 1971 में हिंदी पत्रिका ‘लोटपोट’ में हुआ था। प्राण ने चाचा चौधरी को पश्चिमी सुपर हीरो के बरक्स एक भारतीय नायक के रूप में गढ़ा। उस दौर में सुपरमैन, फैंटम और टार्जन जैसे विदेशी कामिक पात्र भारतीय बच्चों की कल्पना पर छाए हुए थे। चाचा चौधरी के पास उनके जैसा मांसल शरीर नहीं था पर बहुत तेज दिमाग था। इस दिमाग को जरूरत पड़ने पर शारीरिक ताकत देने के लिए प्राण ने साबू को रचा। साबू चाचा चौधरी का

साबू ने भारतीय बच्चों के दिलों पर इसलिए राज किया क्योंकि उसकी ताकत किसी भी तरह से डराती नहीं है। साबू का विशाल शरीर बच्चों को आकर्षित करता है, लेकिन उसके भीतर का सरल मन उन्हें अपना बनाता है।

ताकतवर साथी भर नहीं है। वह बुद्धि और शक्ति के बीच का गठबंधन है। चाचा चौधरी सोचते हैं, साबू उसे अंजाम तक पहुंचाता है। एक चाल चलता है, दूसरा जरूरत पड़ने पर दीवार हिला देता है। लेकिन इस जोड़ी में ताकत कभी बुद्धि पर हावी नहीं होती। साबू की शक्ति को दिशा चाचा चौधरी देते हैं। इसीलिए साबू का विशाल शरीर कहानी का सबसे अहम हिस्सा है लेकिन उसका सबसे अहम गुण है वफादारी। वह ज्यूपिटर का रहने वाला है। यानी उसकी उत्पत्ति ही किसी दूसरी दुनिया से हुई है। मगर चाचा चौधरी की दुनिया में आकर वह इतना अपना हो जाता है कि पाठक उसके परग्रही होने को लगभग भूल जाता है।

साबू ने भारतीय बच्चों के दिलों पर इसलिए राज किया क्योंकि उसकी ताकत डराती नहीं है। साबू का विशाल शरीर बच्चों को आकर्षित करता है, लेकिन उसके भीतर का सरल मन उन्हें अपना बनाता है। उसकी जोड़ी चाचा चौधरी से इसलिए भी यादगार बनी कि दोनों एक-दूसरे की कमी पूरी करते थे। चाचा चौधरी के पास दिमाग था, साबू के पास बाहुबल। लेकिन कहानी का नैतिक केंद्र हमेशा चाचा चौधरी की समझदारी और न्यायबोध में रहता था। साबू उस न्याय को शक्ति देता था।

साबू शक्ति की एक देसी कल्पना है। ऐसी शक्ति जो अपने से कमजोर के खिलाफ नहीं, उसके पक्ष में खड़ी होती है। बच्चे शायद यह सोचकर साबू से प्रभावित होते थे कि वह किसी को भी उठा सकता है, दीवार तोड़ सकता है, अपराधियों को धूल चटा सकता है। शक्ति होना और शक्ति का सही इस्तेमाल करने का फर्क ही साबू की सीख है।

लहजे के रंग

विचार बोध

रोहित कुमार

कबीर जब कहते हैं कि 'ऐसी वाणी बोलिए, मन का आपा खोय। औरन को शीतल करे, आपहुं शीतल होय', तो उसका आशय यही होता है कि व्यक्ति अपने अहंकार को त्यागे और अपनी भाषा में ऐसी नरमी और मधुरता लाए, जो सुनने वाले के साथ-साथ खुद बोलने वाले के मन को भी शांति और सुख दे। इसमें कोई संदेह नहीं कि हम खुद चाहते हैं कि हमारे सामने खड़ा व्यक्ति अगर हमसे कोई बात कह रहा हो, तो उसका लहजा ऐसा हो, जो सुहाए और बातों को सुनने-गुनने का उत्साह बनाए रखे। इसलिए यह जरूरी है कि हम भी कुछ कहें, तो इसमें यह सहजता का हिस्सा हो कि हमारी बातें सुनने और प्रतिक्रिया देने वाला व्यक्ति बातों के संदर्भ को आसानी से ग्रहण करे और उसके मन को भी मिठास का एहसास हो। बेशक यह इस पर निर्भर है कि हमारी बातों का सिरा कहां से और किस शक्ल में शुरू होता है और किस शक्ल में, कहां खत्म होता है।

अंदाजे-बयां

यह एक जगजाहिर हकीकत है कि अगर कोई बहुत अच्छी बात या फिर कोई तथ्य या सच कहने का अंदाज सपाट हो या लहजे में तल्खी हो, तो वह अपने आशय की अहमियत को खो देगा। कोई सामान्य या अपने अर्थ में दिल में उतरती कोई बात कहते हुए भी लहजे में कड़वाहट हो, तो प्रथम दृष्टया वह तल्ख असर ही पैदा करेगी। सुनने वाला व्यक्ति उस बात के असर से क्रोधित हो सकता है, दुखी हो सकता है या फिर दूर भी हो जा सकता है। इस बात की जिम्मेदारी उठाना उसके ऊपर निर्भर नहीं है कि वह बात भी सुने और लहजे की व्याख्या भी करे, उसका आशय समझे और तब जाकर अपनी प्रतिक्रिया का स्वरूप तय करे।

अगर लहजे के असर में अच्छी या नाजुक बातें भी अपने आशय में उलटा नतीजा दे रही हों, तो यह बात करने वाले व्यक्ति को समझने की जरूरत है कि उसके बात करने के तौर-तरीके में कहां कमी है और क्या सुधार की जरूरत है। यह मुमकिन है कि सिर्फ लहजा बदल लेने भर से किसी बात की अहमियत समझ ली जाए या फिर उस बात को उसके ही अर्थ में ग्रहण किया जाए। इसके बाद यह समस्या नहीं आएगी कि बात क्या थी और उसका आशय क्या था। जो बात जिस लहजे में कही जाएगी, उसी अर्थ में समझी भी जाएगी। ऐसे तमाम उदाहरण हमारे आसपास बिखरे मिल जाते हैं कि किसी ने कोई बात कही, किन्हीं वजहों से सामने वाले को समय पर वह बात बिल्कुल उसी रूप में समझ नहीं आ सकी। मगर सहजता से न समझ पाने की वजह से इस बीच उसके भीतर से जो प्रतिक्रिया उभरी, वह बातों के आशय से अलग या कई बार उसके विपरीत हुई।

असर की दूरी

जाहिर है, इसके लिए आमतौर पर हम लहजे को कसूरवार ठहरा सकते हैं, क्योंकि एक पारंपरिक ढांचे में जीने वाले भावुक इंसान के लिए बहुत हद तक लहजा मायने रखता है। उससे कोई अच्छी बात भी कड़वे लहजे में बोली जाए, तो उसके लिए वह बात शायद उतनी सकारात्मक असर वाली न हो। जबकि कई बार ऐसा भी होता है, जब कोई बहुत नुकसान पहुंचाने वाली या अपमानित करने वाली बात भी चाशनी में घुले लहजे में परोसी जाती है और वह सबको प्रिय लगती है। यानी यहां भी यही साबित होता है कि ज्यादातर लोगों के लिए आशय अथवा अर्थ के मुकाबले लहजा ज्यादा अहम है। अगर कड़वे लहजे में कोई अहम बात कही जाए, तो उसकी स्वीकार्यता मुश्किल है, लेकिन अगर लहजे में मिठास घुली हो और बातें बेमानी या फिर बदशक्ल हों, तो भी उससे लोग परेशान नहीं होते।

> **अगर** कोई बहुत अच्छी बात या फिर कोई तथ्य या सच कहने का अंदाज सपाट हो या लहजे में तल्खी हो, तो वह अपने आशय की अहमियत को खो देगा। कोई सामान्य या अपने अर्थ में दिल में उतरती कोई बात भी कहते हुए लहजे में कड़वाहट हो, तो प्रथम दृष्टया वह तल्ख असर ही पैदा करेगी।

हकीकत कड़वी

जिस कबीर को 'शीतल वाणी' की सलाह के लिए जाना जाता है, वे खुद इसलिए जाने जाते हैं कि उनकी कड़वी या खरी बोली का मकसद किसी के दिल को चोट पहुंचाना नहीं था, बल्कि वे अपनी कड़वी बोली के जरिए समाज में फैले अज्ञान, पाखंड और अहंकार पर प्रहार करते थे। उनकी भाषा और उसका लहजा इतना स्पष्ट, इतना बेधड़क और यथार्थ को साथ लिए होता था कि कई बार उनकी बातें लोगों के लिए आसानी से स्वीकार्य नहीं होती थीं। मगर वे हमेशा ही बिना किसी हिचक और संकोच के सच्चाई का ही बयान करते थे, भले ही उनके कहने का अंदाज या लहजा थोड़ा कड़वा था। यह मुमकिन है कि कबीर की बोली का जो लहजा था, वह सुनने में किसी को कड़वा लगे, लेकिन उनका मकसद मनुष्य के भीतर बसी अज्ञानता को दूर कर उसे ज्ञान के रास्ते पर लाना था। यह समझना बहुत मुश्किल नहीं है कि समाज में चारों तरफ जकड़े जातिगत भेदभाव, ऊंच-नीच की झूठी धारणा, दिखावा और आडंबरों पर चोट करने के लिए लहजे में मिठास कैसे घोली जा सकती है। यह बेवजह नहीं है कि जब वे कहते हैं कि 'पाहन पूजै हरि मिलै, तो मैं पूजूं पहाड़। ताते वा चक्की भली, पीस खाए संसार', तो सोच और चेतना के पारंपरिक ढांचे में जीने वाले व्यक्ति को यह बात इस लहजे में कहना कैसे भा सकता है। यह कहा भी जाता है कि सच अमूमन हर लहजे में कड़वा होता है। हां, झूठ को अगर जगह दिलानी हो, तो उसके लिए उसे पेश करते हुए लहजे में मिठास घोलने की जरूरत पड़ेगी।

बारिश में ज्यादा नमी मुसीबत बालों की

गर्मी की तीखी धूप के बाद बारिश सभी को अच्छी लगती है। मगर बारिश में भीगने पर इसे त्वचा और खासकर बालों के लिए अच्छा नहीं माना जाता। यही वे दिन होते हैं जब संक्रमण कई स्तरों पर बढ़ जाता है। बाल अपनी चमक खो देते हैं। ये बिखरे हुए दिखते हैं। बारिश में देखभाल थोड़ी मुश्किल है, लेकिन यह जरूरी है।

जब बढ़े पित्त और कफ

मानसून के दौरान आमतौर पर पाचन धीमा हो जाता है। इससे पित्त और कफ बढ़ जाते हैं। इस असंतुलन के कारण त्वचा और बालों में समस्याएं बढ़ जाती हैं। वात बढ़ने से बाल रूखे और दोमुंहे हो जाते हैं। पित्त अधिक होने से ये झड़ने लगते हैं और समय से पहले सफेद हो जाते हैं। कफ बढ़ने से रूसी की शिकायत सामने आने लगती है। इसलिए इन दिनों बाल भीगने पर जल्दी से उन्हें सुखा लें। इन्हें गर्म पानी से धोने से बचना चाहिए। अगर ठंडे पानी से धोएंगे, तो इससे न केवल बालों की चमक बढ़ेगी, बल्कि झड़ने या टूटने की समस्या भी नहीं होगी।

समुचित देखभाल

बारिश के दिनों में बालों की समुचित देखभाल करें। इन दिनों सचेत रहना जरूरी है, क्योंकि सूखे बाल नम वातावरण से नमक सोख लेते हैं और इससे बाहरी परत फूल जाती है। भीगे हुए बालों को हेयर ड्रायर से सुखाने के बजाय हवा में सुखाएं। बालों को रंगने से बचें, क्योंकि रासायनिक रंगों का इस्तेमाल अंततः नुकसान ही पहुंचाता है। इसके बजाय मेहंदी का उपयोग करें। बालों के पोषण और चमक के लिए आसान-सा एक नुस्खा है। इसके लिए मेथी के बीज और आंवले को पीस लें। फिर इसमें दही और शहद मिला कर लेप तैयार करें। इसे सप्ताह में एक या दो बार बालों में लगाएं। यह फायदा करता है।

मालिश के फायदे

बारिश के मौसम में त्वचा की ही नहीं, बालों की भी हाथों से मालिश करनी चाहिए। हालांकि इन दिनों तेल से मालिश करने से बचना चाहिए। सिर्फ एक नारियल तेल ही है जिससे मालिश करने से बाल मजबूत होने के साथ चमकदार भी बनते हैं। इनकी जड़ें भी मजबूत होती हैं। नारियल तेल से मालिश करना बढ़िया नुस्खा है। इसलिए कि यह जड़ों तक जाकर बालों का पोषण करता है। इस तेल से हल्के हाथों से मालिश करने से बाल स्वस्थ रहते हैं। यों नीम का तेल भी फायदेमंद है। बालों के विकास में कंघी भी भूमिका निभाती है। अच्छी तरह कंघी करने से सिर का रक्त संचार अच्छी तरह होता है। इससे बाल बढ़ते हैं। भीगे बालों में किसी भी कंघी का इस्तेमाल करने से पहले देख लें कि यह गंदी या नुकीली तो नहीं। बालों को अच्छी तरह सुखा कर ही कंघी का उपयोग करें। अगर लकड़ी की कंघी मिल जाए, तो बेहतर। चौड़े दांत वाली कंघी के इस्तेमाल को बेहतर माना गया है।

नुस्खे

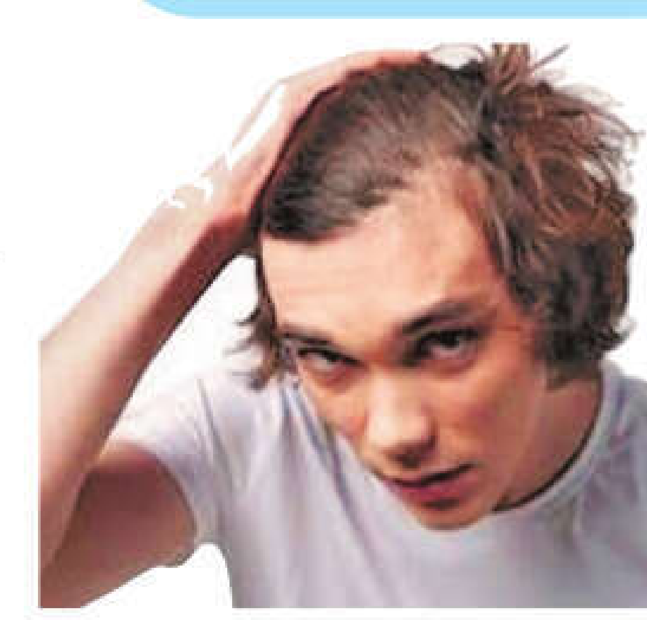

आहार की अहमियत

आम तौर पर प्रोटीनयुक्त आहार को अच्छे बालों के लिए फायदेमंद माना गया है। इसके अलावा विटामिन ई, डी और सी तथा आयरन से भरपूर खाद्य पदार्थ का भी सेवन करना चाहिए। इससे बाल स्वस्थ तो रहते ही हैं, घने और चमकीले भी हो जाते हैं। सूखे मेवे का भी इस्तेमाल करना चाहिए। इससे भी बालों को पोषण मिलता है। पत्तेदार हरी सब्जियों और विटामिन सी युक्त फलों का सेवन भी बालों के लिए अच्छा माना गया है।

गंदगी से आंत्रशोथ बचाव ही इलाज

सेहत

मानसून के दौरान जल जमाव और गंदगी की वजह से जब संक्रमण बढ़ जाता है, तो पेट से संबंधित बीमारियां लोगों को होने लगती हैं। इन दिनों लोग दस्त और उल्टी की शिकायत करते हैं। दरअसल, बारिश के दिनों में पाचन थोड़ा कमजोर हो जाता है। वहीं आंतों में संक्रमण और सूजन से स्थिति बिगड़ जाती है। इन्हीं दिनों लोग पेट संबंधी जिस रोग के साथ चिकित्सकों के पास पहुंचते हैं, उसे आंत्रशोथ कहा जाता है। इससे आमतौर पर बच्चे जल्दी प्रभावित होते हैं। अगर समय पर उपचार न हो, तो यह जानलेवा भी बन जाता है। आंत्रशोथ संक्रामक रोग है। यह तेजी से फैलता है। कमजोर प्रतिरोधक क्षमता वाले लोग इसकी चपेट में जल्दी आ जाते हैं। इसलिए कहा जाता है कि अपनी रोग प्रतिरोधक क्षमता को मजबूत बनाएं, ताकि किसी भी रोग का मुकाबला किया जा सके।

पेट के संकेत

जब पेट में गुड़गुड़ के साथ मरोड़ आने लगे, तो समझिए कुछ गड़बड़ है। आंत्रशोथ को पहचानना कोई मुश्किल नहीं है। आंतों में सूजन जब आ जाती है, तो मरीज के पेट में दर्द होता है। यह एक लक्षण है। इसके साथ जब बार-बार दस्त भी होने लगे, तो इसे गंभीरता से लेना चाहिए। पेट में संक्रमण होने के बाद मितली आती है और उल्टी होती है। मरीज बदन में दर्द की शिकायत करता है। उसे बुखार भी आता है। इस हालत में उसे भूख नहीं लगती। आंत्रशोथ एक व्यक्ति से दूसरे में फैलने वाला रोग है। इसके विषाणुओं के संपर्क में आने से मरीज में जल्दी ही लक्षण दिखाई देने लगते हैं। सिर में दर्द होना और ठंड लगना भी लक्षण है।

विषाणुओं के जोखिम

जिन विषाणुओं के कारण आंत्रशोथ होता है, वे कोई सामान्य नहीं हैं। इन्हें पहचानने और इस पर काबू पाए बिना स्वस्थ होना मुश्किल है।आंत्रशोथ के लिए यों तो कई विषाणु जिम्मेदार हैं। मगर दो विषाणु अधिक परेशान करते हैं। छोटे बच्चों में 'रोटावायरस' के कारण संक्रमण होता है, लेकिन 'नोरावायरस' इससे अधिक खतरनाक है। बड़ी उम्र के लोग इसकी चपेट में आ जाते हैं। अगर मरीज की प्रतिरोधक क्षमता मजबूत है, तो वह आंत्रशोथ का मुकाबला दवाइयों से कर लेता है और वह ठीक हो जाता है। कई बच्चे 'एस्ट्रोवायरस' की चपेट में आ जाते हैं। इससे बच कर रहने की जरूरत है।

देखभाल और दवाएं

इस रोग से आमतौर पर मरीज ठीक तो हो जाता है, लेकिन उसकी देखभाल की काफी जरूरत पड़ती है। आंत्रशोथ होने पर शरीर में पानी की कमी हो जाती है। इस समय इसका ध्यान रखने की जरूरत होती है। अगर मरीज के शरीर में पानी कम हो जाए, तो स्थिति बिगड़ भी सकती है। ऐसे में मरीज को खूब तरल पदार्थ देना चाहिए। आंत्रशोथ का उपचार प्रायः लक्षणों के आधार पर किया जाता है। उसी हिसाब से मरीज को दवाइयां दी जाती हैं। उसे आराम करने और निर्जलीकरण से बचने की सलाह दी जाती है। मरीज ठीक हो जाने के बाद भी थका हुआ महसूस करता है। कमजोरी होने पर मरीज की देखभाल की जरूरत पड़ती है।

आहार भी उपचार

आंत्रशोथ की चूंकि कोई सटीक दवा नहीं है, तो लक्षणों के आधार पर दी जाने वाली दवाइयां लेने के साथ आहार पर भी विशेष रूप से ध्यान देना चाहिए। आहार भी उपचार का हिस्सा है। सबसे पहले जो तरल पदार्थ दें, वह स्वच्छ हो। भोजन अच्छी तरह पका हो और वह पौष्टिक एवं सुपाच्य हो। तैलीय और वसायुक्त आहार से परहेज करना चाहिए। स्वस्थ होने पर उबली हरी सब्जियां-चावल और कम फाइबर वाले भोजन को फायदेमंद माना जाता है। उपचार के दौरान घर में साफ-सफाई जरूरी है। खाना खाने से पहले हाथों को अच्छी तरह धोना चाहिए। मरीज को चाय-काफी और शराब से बचना चाहिए।

(यह लेख सिर्फ सामान्य जानकारी और जागरूकता के लिए है। उपचार या स्वास्थ्य संबंधी सलाह के लिए विशेषज्ञ की मदद लें।)

परेशानियां जब पीछा न छोड़ें

जीवन शैली

आज की भाग-दौड़ भरी जिंदगी में बहुत से लोगों को यह कहते सुना जा सकता है कि परेशानियां हैं कि खत्म होने का नाम ही नहीं लेतीं। रोज एक नई परेशानी सामने आ जाती है। कई लोग प्रतिदिन इस तरह की समस्याओं का सामना करते हैं, जिसकी वजह से उनका जीवन प्रभावित होने लगता है। एक के बाद एक समस्या का सामना करते-करते व्यक्ति को मानसिक तनाव होने लगता है। दरअसल, जीवन में परेशानी का आना असामान्य नहीं है। मगर दिक्कत तब होती है, जब एक समस्या खत्म होने से पहले दूसरी सामने आ जाती है। ऐसे समय में सबसे पहले खुद को यह समझाना जरूरी है कि लगातार परेशानी आना जीवन की विफलता का प्रमाण नहीं है। कई बार परिस्थितियां हमारे नियंत्रण से बाहर होती हैं। किसी कठिन दौर से गुजरना और उसमें विफल हो जाना, दोनों अलग-अलग बातें हैं।

मुश्किलों का सामना

कभी आर्थिक चिंता, कभी स्वास्थ्य की परेशानी, कभी परिवार में तनाव, तो कभी नौकरी या कारोबार की अनिश्चितता, ऐसे में व्यक्ति को लगता है कि मुश्किलें उसका पीछा ही नहीं छोड़ रही हैं। मगर यह बात याद रखनी चाहिए कि परेशानी हमारी परीक्षा ले सकती है, लेकिन वह हमारी क्षमता का अंतिम फैसला नहीं करती। जब समस्याएं लगातार सामने आ रही हों, तो सभी को एक साथ हल करने की कोशिश नहीं करनी चाहिए। किस समस्या को तत्काल हल करने की जरूरत है, किस पर बाद में ध्यान केंद्रित किया जा सकता है और कौन-सी ऐसी है, जिस पर हमारा नियंत्रण नहीं है- यह समझना बहुत जरूरी है। जो हमारे हाथ में है, उस पर काम करना चाहिए और जो हमारे नियंत्रण से बाहर है, उस पर अपनी ऊर्जा खर्च करना व्यर्थ है।

कमजोरी नहीं, समझदारी

यह अक्सर देखा गया है कि परेशानी के समय व्यक्ति खुद को अकेला महसूस करता है। वह अपनी चिंता दूसरों से साझा करने से भी परहेज करता है। उसे लगता है कि लोग उसे कमजोर समझेंगे। मगर किसी भरोसेमंद व्यक्ति से बात करना कमजोरी नहीं, बल्कि समझदारी है। परिवार के किसी सदस्य, मित्र या अनुभवी व्यक्ति से बातचीत कई बार मन का बोझ हल्का कर देती है। समाधान तुरंत न भी मिले, तो भी अपनी बात कह देने से भीतर की बेचैनी कम हो जाती है। जब हालात विपरीत हों, तब छोटी-छोटी चीजों पर नियंत्रण बनाए रखने से आत्मविश्वास बना रहता है।

> **कठिन** समय कभी स्थायी नहीं होता। कई बार आज की परेशानी कुछ वर्षों बाद हमारे जीवन का वह अनुभव बन जाती है, जिससे हम अधिक मजबूत और समझदार बनते हैं।

समाधान के द्वार

यह भी याद रखना चाहिए कि कठिन समय स्थायी नहीं होता। कई बार आज की परेशानी कुछ वर्षों बाद हमारे जीवन का वह अनुभव बन जाती है, जिसने हमें अधिक मजबूत और समझदार बनाया। इसलिए जब परेशानियां बढ़ जाएं, तो घबराने के बजाय समस्या को स्वीकार कर उसे छोटे-छोटे हिस्सों में बांटकर समाधान की कोशिश करनी चाहिए। यह समझने की जरूरत है कि जीवन की खूबसूरती केवल आसान सफलता और खुशी में ही नहीं, बल्कि उन परिस्थितियों में भी छिपी है, जब कठिन हालात से जूझते हुए हम प्रगति के पथ पर डटे रहते हैं। कई बार रास्ता परेशानी खत्म होने से नहीं, बल्कि उससे पार पाने की हमारी क्षमता से ही खुलता है।

जायका ऐसा जो मन को भाए

रसोई

मशरूम मसाला

मशरूम की सब्जी कई तरह से बनाई जाती है, अगर इसे विभिन्न मसालों और दही के साथ बनाया जाए, तो इसका स्वाद लाजवाब होता है। इसे बनाने में ज्यादा वक्त नहीं लगता। मशरूम सेहत के लिए फायदेमंद होती है, क्योंकि इसमें प्रोटीन, विटामिन, फाइबर और एंटीआक्सीडेंट भरपूर मात्रा में होते हैं।

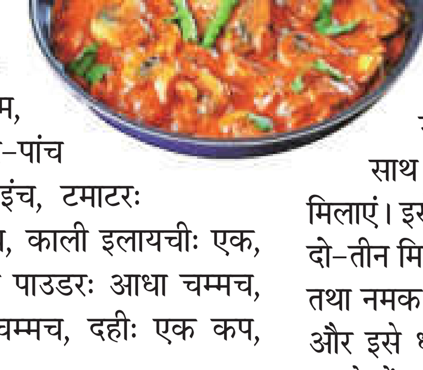

सामग्री

मशरूमः 250 ग्राम, प्याजः एक, लहसुनः चार-पांच कलियां, अदरकः एक इंच, टमाटरः दो, दालचीनीः आधा इंच, काली इलायचीः एक, लौंगः तीन, गरम मसाला पाउडरः आधा चम्मच, धनिया पाएडरः आधा चम्मच, दहीः एक कप, नमकः स्वादानुसार।

विधि

मशरूम को धोकर छोटे-छोटे टुकड़ों में काटें। इसके बाद प्याज, अदरक और लहसुन छीलकर उनका मिक्सर में पेस्ट बना लें। इसी तरह टमाटर को धोकर उसका भी पेस्ट तैयार कर लें। अब एक कड़ाही में तेल गरम करें और उसमें जीरा, तेज पत्ता, दालचीनी, काली इलायची और लौंग डालें। इन्हें तब तक भूनें, जब तक कि उनमें से खुशबू न आने लगे। अब आंच धीमी कर दें और पहले से तैयार प्याज का पेस्ट डालें। इसे सुनहरा होने तक भूनें। इसके बाद टमाटर का पेस्ट डालकर चम्मच से अच्छी तरह मिलाएं। फिर हल्दी पाउडर, लाल मिर्च पाउडर और धनिया पाउडर डालें। इसे चम्मच से चलाते हुए तब तक भूनें, जब तक कि किनारों से तेल निकलने न लगे। इसके बाद कटे हुए मशरूम इसमें डाल दें। साथ ही फेंटा हुआ दही मिलाएं। इसे धीमी से मध्यम आंच पर दो-तीन मिनट तक उबालें और फिर थोड़ा सा पानी तथा नमक डालें। अब कड़ाही पर ढक्कन लगा दें और इसे धीमी आंच पर बारह-पंद्रह मिनट तक पकने दें। इसके बाद इसमें गरम मसाला पाउडर और सूखी मेथी डालें। ढक्कन खुला रखकर इसे दो-तीन मिनट तक पकाएं और फिर बारीक कटा हुआ हरा धनिया डालकर आंच बंद कर दें। मशरूम मसाला तैयार है, इसे चपाती, ब्रेड या चावल के साथ परोसा जा सकता है।

मूंगदाल का हलवा

अगर कभी मीठा खाने का मन हो, तो मूंगदाल का हलवा एक बेहतरीन विकल्प है। इसमें प्रोटीन, फाइबर, आयरन और कैल्शियम जैसे जरूरी पोषक तत्त्व होते हैं। मूंग हाजमे को भी दुरुस्त रखती है। देसी घी और मेवे के साथ इसका हलवा बनाने पर स्वाद दिल को खुश कर देता है।

सामग्री

धूली मूंग दालः 200-250 ग्राम, दूधः डेढ़ कप, हरी इलायची पाउडरः आधा चम्मच, केसरः एक चुटकी, बादामः चार-पांच, काजूः पांच-छह, पिस्ताः तीन-चार, चीनीः स्वादानुसार।

विधि

धुली मूंग दाल को तीन-चार घंटे पानी में भिगो लें। फिर इसमें से अतिरिक्त पानी निकाल दें और इसे मिक्सर जार में बिना पानी डाले दरदरा पीस लें। साथ ही दो चम्मच गर्म दूध में केसर घोलकर अलग से रख दें। इसके बाद काजू, बादाम और पिस्ता को बारीक काट लें। अब एक कड़ाही में देसी घी गरम करें और उसमें मूंग दाल का पेस्ट डालें। मिश्रण को मध्यम आंच पर चलाते हुए पकाएं। शुरुआत में मिश्रण चिपचिपा होता है और इसे चलाना थोड़ा मुश्किल होता है, मगर धीरे-धीरे यह शुष्क होने लगता है। इसे लगातार चलाते हुए तब तक पकाएं, जब तक वह दानेदार न हो जाए। इस अवस्था में दाल का रंग हल्का सुनहरा भूरा हो जाता है और उसमें से खुशबू आने लगती है। अब इसमें डेढ़ कप गुनगुना दूध और एक कप गुनगुना पानी मिलाएं। लगातार चलाते हुए इसे तब तक पकाएं, जब तक कि मिश्रण सारी नमी सोख न ले और घी किनारों से अलग होने लगे। अब आंच धीमी करके आवश्यकतानुसार चीनी डालें और अच्छी तरह मिलाएं। मिश्रण को गाढ़ा होने तक पकाएं और फिर इसमें इलायची पाउडर तथा केसर वाला दूध डालें। करीब एक मिनट बाद इसमें कटे हुए मेवे डालें और अच्छी तरह मिलाकर आंच बंद कर दें। इसे थोड़ा ठंडा होने के बाद परोसें।